INTERNATIONAL MAGAZINE
RNI NO. 64884/96

June 2018

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ ।।
आतम पसारा करण हारा प्रभ बिनां नहीं जाणीऐ ।।

आत्म मार्ग

शहीदी गुरू अरजन देव जी (30 मई, 1606 ई.)

कौन नहीं था जो गर्म नहीं हुआ, जहाँगीर गर्म, शाहजहाँ गर्म, सुलही खान गर्म, सुलभी खान गर्म, भक्त काहना तथा पुरोहित खान गर्म। बड़ा भाई पिरथी चन्द गर्म, ज्येष्ठ माह गर्म, देग उबलती हुई, तवी आग सदृश्य दहकती हुई, रेत गर्म, रेत डालने वाला भी गर्म लेकिन यदि उस समय ठंडे थे तो केवल गुरू अरजन साहिब। बहाना बना कर, जहाँगीर के हुक्म से, गुरू अरजन देव जी पर अकथनीय व अमानवीय अत्याचार ढाते हुए उन्हें लाहौर में शहीद कर दिया गया।

शहीदी समागम रतवाड़ा साहिब, 17 जून दिन में

आत्म मार्ग

वर्ष तेइसवां - अंक पाँचवां, जून 2018

गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब

संचालक

श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी महाराज (ब्रह्मलीन)
तथा संत माता (बीजी) रणजीत कौर जी (ब्रह्मलीन)

चेयरमैन	एडिटर-इन-चीफ
सन्त बाबा लखबीर सिंह जी	सन्त बाबा हरपाल सिंह जी
प्रबन्ध सम्पादक	**मुख्य सम्पादक**
भाई (डा.) सुखविंदर सिंह	डा. जगजीत सिंह (97798 16909)

मासिक पत्रिका न पहुँचने सम्बन्धी पूछताछ

यदि आपको माह की 15 तारीख तक आत्म मार्ग पत्रिका प्राप्त नहीं हो पाती है तो आप कृप्या निम्नलिखित सम्पर्क नम्बरों पर कार्यलय समय प्रात: 10.00 बजे से सायं 6.00 बजे तक सम्पर्क करने की कृपा करें -

सम्पर्क न. - **84378-12900, 94172-14391, 94172-14379**

Email : atammarg1@yahoo.co.in

Postal Address for any Enquiry, Money Order's :

'ATAM MARG' MAGAZINE
Gurdwara Ishar Parkash, Ratwara Sahib (New Chandigarh) P.O. Mullanpur Garibdas, Teh. Kharar, Distt. S.A.S. Nagar (MOHALI) - 140901, Pb. India

SUBSCRIPTION - शुल्क (देश)

वार्षिक	आजीवन सदस्यता	प्रति कापी
300/-	3000/-	30/-
320/-	3020/- (For outstation cheques)	

SUBSCRIPTION FOREIGN (विदेश)

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Canada	80 Can $	800 Can $
Australia	80 Aus $	800 Aus $

प्रकाशन के समस्त अधिकार सुरक्षित हैं।

प्रकाशक, मुद्रक एवं सम्पादक सन्त बाबा हरपाल सिंह जी ने 'आत्म मार्ग' जै आफ सैट प्रिंटर्ज, 905 इन्डस्ट्रियल एरिया, फेज़-2, चण्डीगढ़ से छपवा कर मुख्य कार्यालय 'आत्म मार्ग' रतवाड़ा साहिब, डाकखाना मुल्लांपुर, तहसील खरड़, एस.ए.एस. नगर (मोहाली), पंजाब से प्रकाशित किया।

Please visit us on internet at :-
For Atam Marg Email : atammarg1@yahoo.co.in,
Website & Live video -

www.ratwarasahib.in
www.ratwarasahib.org } **(Every sunday)**

Email :sratwarasahib.in@gmail.com

विदेशों में आत्म मार्ग की शाखाएँ

अमेरिका - बाबा सतनाम सिंह अटवाल
फोन तथा फैक्स : 001-408-263-1844

कैनेडा - भाई सरमुख सिंह पंनू, वैनकूवर
फोन : 001-604-433-0408

भाई तरसेम सिंह बैंस - मोबाइल 001-604-862-9525
फोन : 001-604-288-5000

भाई जसबीर सिंह राणू - फोन : 001-604-589-9189

इंगलैंड - बीबी गुरबख्श कौर तथा भाई जगतार सिंह जग्गी
फोन: 0044-121-200-2818 फैक्स : 0044-121-200-2879,

भाई अरविंदर सिंह (राज) मोबाइल:0044-7968734058

आस्ट्रेलिया : बीबी जस्प्रीत कौर: मोबाइल-0061-406619858

रतवाड़ा साहिब की संस्थाओं के सम्पर्क नम्बर

* आत्म मार्ग मैगज़ीन (पंजाबी, हिन्दी तथा अंग्रेजी)
9417214391, 9417214379, 8437812900

* गुरू गोबिंद सिंह विद्या मन्दिर सीनियर सैकण्डरी स्कूल
(CBSE) - 0160-2255003

* माता साहिब कौर मुफ्त सिलाई सैंटर - **96461-01996**

* सन्त वरियाम सिंह मैमोरियल पब्लिक सीनियर सैकण्डरी स्कूल **(PSEB)** अंग्रेजी माध्यम - **95920-55581**

* सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल (मुफ्त)
98786-95178, 92176-93845

* इंटरनैशनल डिवाइन स्कूल आफ़ नर्सिंग -
94172-14382

* इंटरनैशनल डिवाइन कालेज आफ़ ऐजूकेशन (बी. एड.)
94172-14382

* अकाल वृद्ध आश्रम (मुफ्त) **98157-28220**

विशेष जानकारी के लिए

श्री मान जी	-	98551-32009
श्री आखण्ड पाठ साहिब बुकिंग	-	94647-12900
आडियो-वीडियो लाईब्रेरी	-	98728-14385, 98555-28517
केवल टी.वी. नेटवर्क	-	94172-14385

अन्य सम्पर्क नम्बर

98889-10777, 96461-01996, 9417214381

विषय-सूची

1. सम्पादकीय 5

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

2. बारहमाहा 7

डा. जगजीत सिंह

3. शहीदों के सरताज 11

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

4. बाबाणियाँ कहानियाँ 28

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

5. प्यारे महापुरुषों का प्यारा जीवन 31

(महापुरुषों के द्वारा अपने जन्मदिवस समागम पर किए हुए प्रवचन)

6. आत्म ज्ञान 39

सन्त बाबा वरियाम सिंह जी

7. सूरा सो पहचानीअै ....।। 42

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

8. परोपकारी जीवन 45

(प्यारे महापुरुषों के शतवर्षीय जन्म दिवस को समर्पित)

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

9. शहीदी गुरू अरजन देव जी 54

डा. जगजीत सिंह

10. स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार 61

डा. स्वामी राम जी

11. विशेष जानकारी - बैंक खाता, आत्म मार्ग मैगजीन सदस्यता प्रारूप, अस्पताल जानकारी, तथा पुस्तक सूची 63

सम्पादकीय

(डा.) भाई सुखविन्दर सिंह

जदों कदे वी जुग ते कोई मरद-अगंमड़ा आउंदा।
भूलिआँ भटकिआँ ताँई उह है, राह मौला दे पाउंदा।
नैण तेरे इह 'गोइआँ' जेकर, जलवा रबी चाहुंदे।
ताँ महाँपुरशाँ दे अंदर दिसू, रब ही रूप वटाउंदा।

दर दहर कि मरदानि खुदा, आमदा-अंद।
बर गुम-शुदगाँ राहनुमा, आपदा-अक।
'गोइआ' अगर ई चशमि तो, मुसताकि खुदासत
मरदानि खुदा, खुदा-नुमा, आपदा अंक ।7।

उपर्युक्त रुबाई गुरू प्यारे भाई नन्द लाल जी की सातवीं रुबाई है। यह रुबाई परमात्मा के प्यार में सराबोर आत्माओं, आत्म मण्डल के निवासियों, नाम रसिकों, अभेदावस्था वाले तथा करम, उपासना, ज्ञान व विज्ञान की अवस्था को पार करते हुए परमात्मा में अभेद हो चुकी श्रेष्ठ आत्माओं के बारे में है। एक बड़े सिद्धान्त तथा मुख्य मार्ग का निरूपण करती हुई यह रुबाई हमें अभेदावस्था प्राप्त सन्तजनों की आत्मिक वृत्ति का परिचय करवाती है।

वाहिगुरू जी या परमात्मा द्वारा रचित सृष्टि की रचना को वह स्वयं ही जानता है -

जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई ॥
अंग - 4

उसके द्वारा रचित रचना का कोई थाह नहीं पाया जा सकता है क्योंकि वह असीम है, तू बेअंतु को विरला जाणै।। (अंग - 562) जेवडु आपि तेवड तेरी दाति।। (अंग - 9)

उस रचनहार परमात्मा की रचना का थाह लगा पाना नामुमकिन है। एक ब्रह्मांड को भी पूरा नहीं जाना जा सकता है जबकि वह तो करोड़ों ब्रह्मांडों का स्वामी है -

कोटि ब्रहमंड को ठाकुरू सुआमी
सरब जीआ का दाता रे॥ अंग - 612

लेकिन 'जो ब्रहमंडे सोई पिंडे जो खोजै सो पावै।।' (अंग - 695) वाली अवस्था में पहुँचने वाला उस रचना को साक्षात रूप में देख लेता है जिसे कि किसी भी वैज्ञानिक उपकरण आदि के माध्यम से नहीं देखा जा सकता है।

सम्पूर्ण खण्ड, ब्रह्मांड, नक्षत्र तथा सारी प्रकृति एक बड़े इलाही हुक्म से बँधी हुई चल रही है। 'हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ।।' (अंग - 1) निःशंक रूप से वाहिगुरू जी द्वारा सारी सृष्टि की रचना अपने आप से ही की गई है।

आपीनै आपु साजिओ आपीनै रचिओ नाउ ॥
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ ॥
अंग - 463

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा ॥
नाना रूपु धरे बहु रंगी सभ ते रहै निआरा ॥
अंग - 537

अपने आप के द्वारा सृष्टि की रचना करके और स्वयं उसमें विद्यमान रहने के बावजूद भी वह दिखाई नहीं पड़ता है। इस चल रहे बड़े हुक्म में अनेकों श्रेणियां, जीव तथा निर्जीव अस्तित्व में आए और इन्हीं में से एक है मनुष्य की श्रेणी। इस श्रेणी को अन्य श्रेणियों का सरदार बनाया गया है -

अवर जोनि तेरी पनिहारी ॥
इसु धरती महि तेरी सिकदारी ॥ अंग - 374

समस्त जीव श्रेणियों मे इस मनुष्य जाति को सरदार बनाया है। यह अन्य जातियों को दुख भी दे सकता है और सुख भी। लेकिन यहाँ पर एक सवाल खड़ा हो जाता है कि जब मनुष्य जाति (श्रेणी) सर्वोच्च है, सबकी सरदार है तो क्या इस श्रेणी का भी कोई सर्वोच्च हो सकता है जो कि सबको सुख व शान्ति प्रदान करने में समर्थ हो और केवल समर्थ ही न हो बल्कि वह दूसरों को सुख व शान्ति व्यहारिक रूप में देता भी हो। गुरमति की रौशनी में इसका जवाब 'हाँ' में होगा। लेकिन मानव मन में यह जिज्ञासा उत्पन्न होती है कि वह कौन है जो मानव श्रेणी को सुख व शान्ति प्रदान करता हो, बिना किसी भेदभाव के यानि कि जाति पात, लिंग, नस्ल आदि का भेदभाव किए बिना सबको एक ही आँख से देखता हो। गुरमति कौ रौशनी में ऐसा मनुष्य है - परमात्मा का प्यारा, गुरसिक्ख, गुरुमुख, साधू, सन्त, महापुरुष, ब्रह्मज्ञानी यानि कि चाहे इनमें से किसी भी नाम से उसे पुकार लो लेकिन आत्मिक धरातल के हिसाब से ये समानार्थी शब्द हैं। उन परमात्मा के प्यारों की अनेकों निशानियों को गुरवाणी की रौशनी में देखने से ज्ञात होता है कि ये महापुरुष मनुष्य श्रेणी में सर्वोच्च हैं।

संत सहाई जीअ के भवजल तारणहार ॥
सभ ते उचे जाणीअहि नानक नाम पिआर ॥
अंग - 929

इन्होंने ही दूसरे मनुष्यों के सुख व शान्ति प्रदान करनी है और दूसरों के लिए परोपकार करना इन्हीं के हिस्से आया

होता है। परोपकार के चश्मे इनके अन्दर ही चला करते हैं। 'ब्रहमगिआनी परउपकार उमाहा।' ये परोपकार किसी भी रूप में हो सकते हैं। चाहे वे धार्मिक रूप में हों अथवा सामाजिक, शैक्षिक या साहित्यिक रूप में हों। इन परोपकारों में सबसे बड़ा परोपकार जीअदान देने का होता है –

जनम मरण दुहहू महि नाही
जन परउपकारी आए॥
जीअ दानु दे भगती लाईन
हरि सिउ लैनि मिलाए॥ अंग – 749

जन्म-मरण से रहित ये आत्माएँ, परमात्मा से टूट चुकी आत्माओं को पुनः उसमें जोड़ने का कार्य करती हैं सबको सुख शान्ति प्रदान करना इनका मुख्य उद्देश्य होता है, सत्य के साथ जुड़े होने के कारण ये अन्य सबको भी इस सत्य के मार्ग की समझ प्रदान करते हैं। आत्म मार्ग पर ये स्वयं चलते हैं तथा अन्य सबको भी उस मार्ग का पथिक बनाते हैं-

जिस दै अंदरि सचु है
सो सचा नामु मुखि सचु अलाए॥
ओहु हरि मारगि आपि चलदा
होरना नो हरि मारगि पाए ॥ अंग – 140

साध करम जे पुरख कमावै।
नाम देवना जगत कहावै। बचित्र नाटक पा: 10

इह नीसाणी साध की जिसु भेटत तरीऐ ॥
जमकंकरू नेड़ि न आवई फिरि बहुड़ि न मरीऐ ॥
अंग – 320

उनकी संगति करने वालों का भी उद्धार हो जाता है यानि कि वे भी यमदूतों की मार से बच जाते हैं, उनका आवागमन का चक्र समाप्त हो जाता है। यही खालसा आदर्श है। यही वह आदर्श है जो कि सर्वस्व दानी दशमेश पिता जी ने अपने पन्थ को सन् 1699 ई. में प्रदान किया। इसी खालसा पद को दशमेश जी ने इतना ऊँचा उठाया कि –

आतम रस जिह जानही सो है जलस देव।
प्रभ महि, मो महि, तास महि रंचक नाहन भेव।

सतगुरू जी फुरमान करते हैं कि फिर खालसा में, मुझमें तथा परमात्मा में कोई फर्क ही नहीं रह जाता है। लेकिन शर्त यह है कि वह वास्तव में है आत्म रसिक हो, गुरवाणी एवं खालसई वेश-भूषा का धारणी हो। यही सन्त सिपाही का आदर्श है। इसी आदर्श को गुरवाणी में बहुत बड़ा दर्जा दिया गया है –

जिन्ा न विसरै नामु से किनेहिआ ॥
भेदु न जाणहु मूलि साँई जेहिआ ॥ अंग – 397

जिना सासि गिरासि न विसरै हरि नामाँ मनि मंतु ॥
धंनु सि सेई नानका पूरनु सोई संतु ॥ अंग – 319

ब्रहम गिआनी कउ खोजहि महेसुर ॥
नानक ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर ॥ अंग – 273

नाम जपकर साधक नामी का रूप बन जाता है और यही अन्तिम मंजिल है, यही अन्तिम प्राप्ति है या अभेदावस्था है। इसी वृत्ति के स्वामी थे – रतवाड़ा साहिब वाले प्यारे महापुरुष। आओ! हम सब, उन अनेकों गुणों के धारणी, गुरमति मार्ग का प्रचार व प्रसार करने वाले, अभेदावस्था वाले महापुरुषों को नतमस्तक हों। 17 जून को उनका शतवर्षीय जन्म दिवस, रतवाड़ा साहिब की पावन भूमि पर, समस्त श्रद्धालुजनों द्वारा श्रद्धा व प्यारपूर्वक, ट्रस्ट के वर्तमान मुखी श्रीमान सन्त बाबा लखबीर सिंह जी की सरपरस्ती में मनाया जा रहा है। इस अवसर पर समस्त संगत, उपर्युक्त सिद्धान्तों पर चलने वाले अपने प्यारे को याद करके गुरवाणी का लाभ प्राप्त करेगी। इस शुभ दिवस पर समस्त पाठकजनों व समस्त संगत को पहुँचने के लिए हार्दिक निवेदन किया जाता है।

शहीदों के सिरताज धन्य श्री गुरू अरजन देव जी का शहीदी दिवस भी 17 जून को बिक्रमी कैलेंडर के हिसाब से आ रहा है। सारी संगत इस दिवस को अत्यन्त श्रद्धा व प्यारपूर्वक मनाती है। सुखमनी साहिब के जाप, सिमरन, कथा-कीर्तन, दरबारों तथा छबीलों के रूप में अपने प्यारे के प्यार का प्रकटीकरण करती है। पाँचवें महाराज जी की शहीदी, रजा में राजी रहकर सब्र व धन्यवाद का पाठ हमें दृढ़ करवाती है। आओ! परमेश्वर की रजा में जीवन व्यतीत करते हुए प्रत्येक समय सब्र व धन्यवाद भाव के धारणी बनें। सतगुरू जी द्वारा दर्शाए गए गुरमति मार्ग व आत्म मार्ग के पथिक बनें। सतगुरू जी द्वारा दर्शाए गए सिद्धान्तों पर चलना ही उनके लिए सच्ची श्रद्धांजलि होगी। उनके द्वारा दर्शाई गई जीवन युक्ति के अनुसार ही जन मानस के कल्याण वाली रीति अपनाएँ।

नानक नाम चड़दी कला, तेरे भाणे सरबत का भला।

तेरा कीआ मीठा लागै।। हरि नामु पदारथु नानकु माँगै।। (अंग - 394) के सिद्धान्त की याचना करें तथा यह प्रार्थना करें कि हे महाराज जी! हमें भी रजा में राजी रहने वाला तथा सब्र व धन्यवाद भाव वाला जीवन प्रदान करो। यदि हमारा जीवन ऐसा बन जाएगा तो फिर सारी उदासियाँ समाप्त होकर जीवन सुखमय बन जाएगा। यह महान शहीदी दिवस भी गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब की पावन धरती पर 17 जून दिन रविवार को मनाया जा रहा है। समस्त श्रद्धालुजन अपने प्यारे के प्यार में रतवाड़ा साहिब के पावन स्थान पर पहुँचने की कृपा करें जी।

धन्यवाद साहित।

असाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास।।

(अषाढ़ माह की संक्रान्ति - 15 जून, दिन शक्रवार)

(डा.) जगजीत सिंह

श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर दो 'बारहमाह' प्राप्त हैं। पहला 'बारमाहा' तुखारी राग में श्री गुरु नानक देव जी द्वारा उच्चरित है, जो कि श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अंग 1107 पर सुशोभित है। दूसरा बारहमाहा माझ राग में है जो कि श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा उच्चरित है और यह अंग 133 पर सुशोभित है। गुरुद्वारा साहिबानों के अन्दर मुख्य रूप से श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा माझ राग में उच्चरित 'बारहमाहा' का पाठ ही श्रवण करवाया जाता है तथा शबद विचार (कथा) की जाती है। श्री गुरु नानक देव जी द्वारा रचित तुखारी राग वाला 'बारहमाहा' क्यों कम पढ़ा व विचारा जाता है? इसका एकमात्र कारण यही प्रतीत होता है कि इसकी शब्दावली काफी कठिन है तथा जीव रूपी स्त्री को जो शिक्षा दी गई है, उसे कायनात के अद्‌भुत दृश्यों व अलंकारों में सुसज्जित किया गया है। इस प्रकार साधारण मनुष्य की सोच श्री गुरु नानक देव जी के साथ मेल नहीं खाती है। इसकी अपेक्षा श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा उच्चरित बारहमाह बहुत ही साधारण, सरल व स्पष्ट बोली में है तथा जीव रूपी स्त्री को सम्बोधन करके आम भाषा में उपदेश किया गया है। यही कारण है कि माझ राग में उच्चरित 'बारहमाहा' अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित हो गया है। उपदेश दोनों में एक ही है। सारी वाणी का उपदेश एक ही है। प्रभु बिछोड़े से द्वैतभाव उत्पन्न होता है जो कि दुखों का कारण है। सतगुरु जी की शरण में जाने से द्वैतभाव समाप्त होता है, मिलाप की लालसा उत्पन्न होती है तथा नाम स्मरण की युक्ति प्राप्त होती है। प्रभु जी के नाम स्मरण से सारे सुख-शान्ति, सहज व विसमाद उत्पन्न होता है। प्रभु जी के प्यारों की संगत में नाम दृढ़ होता है तथा अवस्था भेद का ज्ञान प्राप्त होता है। हम प्रस्तुत लेख के माध्यम से आप समस्त पाठकों के सेवा में दोनों बारमाहों का पाठ व उसकी सरल व्याख्या प्रस्तुत किया करेंगे।

बारह माहा माझ महला ५ घरु ४

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि ॥
जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ॥
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास ॥
जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥
रैण विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ॥
जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु ॥
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥
प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास॥
अंग - 134

आसाड़ु तपंदा तिसु लगै हरि नाहु न जिंना पासि ॥
जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस संदी आस ॥
दुयै भाइ विगुचीऐ गलि पईसु जम की फास ॥

कठिन शब्दार्थ - नाहु = पति, खसम; माणस-मनुष्य, संदी = दी, दुयै भाइ = (एक परमेश्वर के बिना) किसी दूसरे के साथ प्यार, सांसारिक पदार्थों के साथ मोह, विगुचीऐ = दुखी होना पड़ता है, जम की फास - यमदूतों का फन्दा।

व्याख्या - अषाढ़ का महीना उन जीव रूपी स्त्रियों को तपिश भरा हुआ व दुखदाई प्रतीत होता है जिनके हृदय में प्रभु रूपी पति का प्यार निवास नहीं करता है। अषाढ़ की तपिश की भांति वह जीव कलह-क्लेश, वैर-विरोध, ईर्ष्या, निन्दा व विषय-विकारों की अग्नि में तप्त होते हुए दुखों को भोगते रहते हैं जो कि जगत के सहारे, परमात्मा (जगजीवन पुरुष) के सहारे को छोड़कर, सासांरिक मनुष्यों (माणस संदी) से आशाएं लगाए रखते हैं। सांसारिक लोगों तथा पदार्थों का सहारा द्वैत भावना है, जिसके द्वारा सारी जिन्दगी परेशानियों व दुखों में व्यतीत हो जाती है तथा अन्त में गले में यमों की फांसी पड़ जाती है। यह अटल दैवी कानून है, ईश्वरीय हुक्म है कि एक परमात्मा का सहारा बन्धनों से मुक्त करता है तथा एक परमेश्वर को छोड़कर सारे अन्य सहारे जीव को बन्धनों में डालकर रखते हैं।

ज्येष्ठ व अषाढ़ महीनों में सूर्य की तपिश शिखरों पर होती है। भीषण गर्मी के कारण धरती भट्ठी की तरह तप्त होती है। जीव-जन्तु, पशु-पक्षी आदि सबके लिए गर्मी को सहन करना कठिन हो जाता है। एक तो बाहर की गर्मी है जो मनुष्य को बेचैन कर देती है और दूसरी अन्दर की गर्मी

है, अन्दर की तपिश है जो कि विकारों की तपिश है, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार की तपिश है जो कि हमारे अन्दर को जलाकर रख देती है तथा यह तपिश हमारे आनन्द, खुशी व उल्लास का नामो निशान मिटा देती है, फलस्वरूप हमारा जीव विह्वल हो उठता है -

जीउ तपतु है बारो बार ॥
तपि तपि खपै बहुतु बेकार॥
जै तनि बाणी विसरि जाइ ॥
जिउ पका रोगी विललाइ॥ *अंग - 661*

जब गुरवाणी विस्मृत होगी तो रोग तो अवश्य ही लगेंगे, साधारण रोग ही नहीं अपितु दीर्घ या पक्के रोगी की भांति फिर मनुष्य हाय विलाप करता है (जिउ पका रोगी विललाई।) यह गुरवाणी की निर्णय है। अषाढ़ माह की तपिश उसी को जलाती है (असाड़ु तपंदा तिसु लगै) जो नाम वाणी से टूट जाता है (हरि नाह न जिनां पासि) जब हम प्रभु-नाम के माध्यम से अपने निजत्व से जुड़ जाते हैं तो बाहर के ज्येष्ठ-अषाढ़ की गर्मी हमारा कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती है बल्कि हमारे अन्दर प्रभु प्यार की शीतलता, शान्ति व सहजानन्द आ बसते हैं -

छाती सीतल मनु तनु ठंढा ॥
जनम मरण की मिटवी डंझा ॥
करु गहि काढि लए प्रभि अपुनै
अमिउ धारि द्रिसटंगना ॥ *अंग - 1080*

प्रभु के नाम के साथ जुड़ने से सदैव सुख ही सुख है। उठते, बैठते, सोते, जागते, गुणी निधान का यशगान करने से तन व मन दोनों ही हमेशा शीतल व सुखी होते हैं -

उठंदिआ बहंदिआ सवंदिआ सुखु सोइ ॥
नानक नामि सलाहिऐ मनु तनु सीतलु होइ ॥
अंग - 321

जो मनुष्य सुख सागर सारे जगत को, पालनहार परमात्मा को भूलकर सांसारिक लोगों का आश्रय ढूंढते हैं वे गलत रास्ते पर पड़कर नामोशी व दुखी की खाई में जा गिरते हैं (जगजीवन पुरखु तिआगि कै माणस सन्दी आस)। गुरवाणी के अनुसार एक परमात्मा की उम्मीद ही हमारे सारे दुख दर्दों को दूर करने में समर्थ है -

एक आस हरि मनि रखहु नानक
दूखु भरमु भउ जाइ ॥ *अंग - 281*

मनुष्य के उम्मीद रखनी नामोशी का कारण बनती है इसलिए यह झूठी उम्मीद है -

मानुख की टेक ब्रिथी सभ जानु ॥
देवन कउ एकै भगवानु ॥
जिस कै दीऐ रहै अघाइ ॥
बहुरि न त्रिसना लागै आइ ॥
मारै राखै एको आपि ॥
मानुख कै किछु नाही हाथि ॥
तिस का हुकमु बूझि सुखु होइ ॥
तिस का नामु रखु कंठि परोइ ॥
सिमरि सिमरि सिमरि प्रभु सोइ ॥
नानक बिघनु न लागै कोइ ॥ *अंग - 281*

जहाँ पर जीवात्मा, परमात्मा में लीन हो जाती है तो वहाँ पर दुख भाव समाप्त हो जाते हैं -

नानक दुखु सुखु विआपत नही
जिथै आतम राम प्रगासु ॥ *अंग - 1414*

अतः परमात्मा को भूलकर दूसरे भाव में विचारण करने से दुख ही दुख की प्राप्ति होती है (दूजै भाइ बिगुचीऐ) प्रभु परमेश्वर को अपना इष्ट, मालिक, पति समझने की बजाए सांसारिक लोगों व पदार्थों के साथ मोह पालना 'दूसरा भाव' है जिसमें से केवल अशान्ति व दुख की ही प्राप्ति होनी है। मनुष्य का मूल दुखान्त है जो कि परमेश्वर को मिलने नहीं देता है -

दूजा भाउ न देई लिव लागणि
जिनि हरि के चरण विसारे ॥
जगजीवन दाता जन सेवक तेरे
तिन के तै दूख निवारे ॥ *अंग - 796*

वैसाखि के महीने में भी गुरु महाराज जी ने ऐसा ही फुरमान किया है -

दयु विसारि विगुचणा प्रभ बिनु अवरु न कोइ ॥
प्रीतम चरणी जो लगे तिन की निरमल सोइ ॥
अंग - 133

जेहा बीजै सो लुणै मथै जो लिखिआसु ॥
रैण विहाणी पछुताणी उठि चली गई निरास ॥

संसार की रचना का यह अटूट नियम है कि मनुष्य कर्मों के द्वारा जैसी खेती बोता है उसे वैसा ही फल प्राप्त होता है। अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे कर्मों का फल बुरा प्राप्त होता है, ऐसा दैवी व सांसारिक कानून है। श्री जपुजी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी स्पष्ट शब्दों में कथन करते हैं कि पुण्य व पाप कर्म केवल कहने मात्र के लिए ही नहीं है। मनुष्य जो पुण्य-पाप वाले कर्म करता है उसका भुगतान यहाँ पर भी होता है, तथा जन्म-जन्मांतरों तक भी होता रहता है -

पुंनी पापी आखणु नाहि ॥
करि करि करणा लिखि लै जाहु ॥

आपे बीजि आपे ही खाहु ॥
नानक हुकमी आवहु जाहु ॥ *अंग – 4*

बारहमाहा के आरम्भ में श्री गुरु अरजन देव जी फ़ुरमान करते हैं कि हम मनुष्य लोग पूर्व जन्मों के कारण ही प्रभु जी से बिछुड़े हुए हैं और परमात्मा की खोज में ही जगह-जगह पर भटक कर व थक हार कर अब तुम्हारी शरण में आए हैं, इसलिए अब कृपा करके अपना मिलाप प्रदान करो –

किरति करम के वीछुड़े करि किरपा मेलहु राम ॥
चारि कुंट दह दिस भ्रमे थकि आए प्रभ की साम ॥
अंग – 133

इसी प्रकार से 'भादुइ' (भाद्रपद) के महीने में भी गुरु जी पुनः कर्म-प्रतिकर्म के दैवी हुक्म को हमारे दृष्टिगोचर करते हैं –

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु ॥ अंग – 133

कतिकि (कार्तिक) के महीने में भी गुरु जी स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य द्वारा अपने किए हुए बुरे कार्यों के बुरे फलों को भोगते समय दूसरों को दोष देना उचित नहीं है। परमेश्वर को भूलकर विषय-विकारों के कर्मों का प्रतिक्रम भयानक रोगों के रूप में होता है। इसमें हमारे अपने ही कर्मों का दोष होता है न ही किसी अन्य का –

कतिकि करम कमावणे दोसु न काहू जोगु ॥
परमेसर ते भुलिआँ विआपनि सभे रोग ॥अंग – 135

मनुष्य अनेक प्रकार के मनवांछित कर्म करता है जो कि उसके धुर अन्दर तक मन रूपी स्लेट पर लिखे जाते हैं और जो उसके संस्कारों का एक हिस्सा बन जाते हैं। इनका फल भोगने के लिए उसे कई जन्मों तक भटकना पड़ता है। इसलिए बुरे कर्मों के बुरे फल को भोगते समय अन्य लोगों को दोष देना ठीक नहीं है –

ददै दोसु न देउ किसै दोसु करंमा आपणिआ ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना ॥
अंग – 433

सारा संसार मन के बने संस्कारों की वृत्ति के अनुसार अच्छे-बुरे, नेकी-बदी, पुण्य-पाप के द्वैत खेल में लीन होकर कार्य करता रहता है, फल भोगता रहता है और आवागमन के चक्रव्यूह में पड़ा रहता है। यह आवागमन का चक्रव्यूह अनन्तकाल तक चलता रहता है। कोई विरला प्रभु भक्त ही है जो कि कर्मों के इस द्वैतभाव में से निकलकर सहजावस्था को प्राप्त होता है –

दुक्रित सुक्रित मंधे संसारु सगलाणा ॥
दुहहूं ते रहत भगतु है कोई विरला जाणा ॥
अंग – 51

अच्छे बुरे कर्मों के निरन्तर खेल में ही मनुष्य की सारी आयु रूपी रात्रि व्यतीत हो जाती है। (रैणि विहाणी) अन्त समय में जब मनुष्य व्यतीत हो चुके जीवन की तरफ अपनी दृष्टि डालता है तो निकम्मे व गलत कार्यों में बरबाद किए जीवन का उसे बहुत अधिक अफसोस भी होता है और पाश्चाताप भी होता है, फलस्वरूप वह संसार से बहुत ही उदास व निराश होकर टूटे हुए दिल से विदा होता है (उठि चली गई निरास) लेकिन जीवन की बाजी को हार कर पाश्चाताप करते हुए संसार से विदा होने का क्या लाभ? अच्छे बुरे कार्यों के जीवन खेल, इसका लेखा-जोखा, इनका भुगतान, बहुमूल्य मनुष्य जीवन के खो जाने का मरणोपरान्त किया जाने वाला अफसोस तथा इसकी निरर्थकता का श्री गुरु नानक देव जी ने 'आसा दी वार' की अधोलिखित पउड़ी में बड़ा ही मार्मिक व सार्थक चित्रण किया है –

आपीन्है भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ॥
वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ ॥
अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ॥ थाउ न होवी पउदई हुणि सुणीऐ किआ रुआइआ ॥ मनि अंधै जनमु गवाइआ ॥ अंग – 464

जिन कौ साधू भेटीऐ सो दरगह होइ खलासु ॥
करि किरपा प्रभ आपणी तेरे दरसन होइ पिआस ॥

निराशता व पाश्चाताप का नक्शा खींच कर गुरु जी हमें उदासी के घोर अन्धकार में से बाहर निकालना चाहते हैं क्योंकि कहीं ऐसा न हो कि दुर्लभ जीवन काल समाप्त हो जाए और हम पाश्चाताप करते हुए दुखी होते रहें। गुरू जी हमारे पथ प्रदर्शक बनकर मार्ग दर्शन करते हैं कि कर्मों के लेखे-जोखे से बचने के लिए सतगुरु की चरण शरण में आएँ, सन्त-महापुरुषों व नाम अभ्यासियों की संगत करें ताकि परमेश्वर की दरगाह में सुरखरू होकर पहुँचें। साधू-सन्त हमें समर्थ गुरु से प्राप्त किये गए शब्द के साथ जोड़ते हैं, नाम स्मरण के मार्ग को स्पष्ट करते हैं। नाम अभ्यास की कमाई के माध्यम से सफल जीवन जीने की युक्ति बताते हैं। वे हमें अहंकार के विखम जंजाल में से बाहर निकालने में भी सहाई होते हैं और इस मार्ग पर चलकर यानि कि नाम अभ्यास के मार्ग पर चलकर मनुष्य अपना उज्ज्वल मुख लेकर परमेश्वर की दरगाह में पहुँचता है। इस प्रकार के मार्ग को श्री गुरु महाराज जी 'श्री सुखमनी साहिब जी' में इस प्रकार से दर्शाते हैं –

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ ॥
राम नामु संतन घरि पाइआ ॥
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि ॥
राम नामु हिरदे महि तोलि ॥

लादि खेप संतह संगि चालु ॥
अवर तिआगि बिखिआ जंजाल ॥
धंनि धंनि कहै सभु कोइ॥
मुख उजल हरि दरगह सोइ ॥
इहु वापारु विरला वापारै ॥
नानक ता कै सद बलिहारै ॥ अंग - 283

कर्मों के फल तथा जाल अथवा आवागमन के बन्धनों से केवल उन्हीं को निजात मिलती है, जो कि नाम स्मरण व साधना प्रभु-प्यारे तथा नाम अभ्यासी सन्त जनों की संगत में करते हैं -

आनि आनि समधा बहु कीनी
पलु बैसंतर भसम करीजै ॥
महा उग्र पाप साकत नर कीने
मिलि साधू लूकी दीजै ॥ अंग - 1324

प्रभ तुधु बिनु दूजा को नही नानक की अरदासि ॥
आसाड़ु सुहंदा तिसु लगै जिसु मनि हरि चरण निवास॥

इसलिए मनुष्य की सदैव ही यह अरदास होनी चाहिए कि हे प्रभु जी! तेरे बिना मेरा अन्य कोई सहारा नहीं है। कृपा करके हमारे अन्दर भी अपने दर्शनों की तीव्र लालसा को उत्पन्न करो। इस प्रकार की प्रार्थना करने वाले मनुष्य को अषाढ़ माह की तपिश नहीं लगती है बल्कि उसे तो अषाढ़ माह का गर्म महीना भी सुखी व सुहावना प्रतीत होता है क्योंकि उसके पास तक सांसारिक दुख व क्लेश भी नहीं पहुँच पाते हैं। उसका मन प्रभु चरणों के साथ जुड़ जाता है और वह प्रभु जी के नाम स्मरण में जुड़कर अपने निज स्वरूप की पहचान कर लेता है। उसे फिर केवल अषाढ़ माह ही नहीं वरन पूरी जिन्दगी रूपी अषाढ़ का महीना ही अर्थात पूरा जीवन ही सुखी, सुहावना व आनन्दमयी प्रतीत होने लगता है। आओ! हम गुरवाणी के द्वारा जीवन के मनोरथ को जानें, मनोरथ की प्राप्ति के मार्ग को समझें, साधु संगत के साथ मिलकर नाम अभ्यास की कमाई करें तथा जीवन को सुखी, सरल व सफल बनाएँ -

भई परापति मानुख देहुरीआ ॥
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ ॥
अवरि काज तेरै कितै न काम ॥
मिलु साधसंगति भजु केवल नाम ॥ अंग - 12

तुखारी छंत महला १ बारह माहा

आसाड़ु भला सूरजु गगनि तपै ॥
धरती दूख सहै सोखै अगनि भखै ॥
अगनि रसु सोखै मरीऐ धोखै भी सो किरतु न हारे ॥
रथु फिरै छाइआ धन ताकै टीडु लवै मंझि बारे ॥
अवगण बाधि चली दुखु आगै सुखु तिसु साचु समाले॥
नानक जिस नो इहु मनु दीआ मरणु जीवणु प्रभ नाले॥
अंग - 1108

आसाड़ु भला सूरजु गगनि तपै॥

आषाड़ का महीना भी शुभ है, अच्छा है, इस समय सूर्य आकाश में पूरी तरह से तपता है।

धरती दूख लहै सोखै अगनि भखै॥

सूरज की तपस के कारण धरती की नमी सूखती जाती है। इस तरह धरती दुख सहती है। धरती में रहने वाले जीवन जन्तुओं को कष्ट सहन करना पड़ता है क्योंकि धरती आग की तरह तप रही होती है।

अगनि रसु सोखै, मरीऐ धोखै,
भी सो किरतु न हारे॥

सूर्य की अग्नि पानी को, रसों को सुखा देती है। हर एक प्राणी का जीवन त्राहि-त्राहि करके दुखी होता है, फिर भी सूर्य अपना कार्य पूरा करता रहता है। भाव तपस जारी रखता है।

रथु फिरै छाइआ धन ताकै
टीडु लवै मंझि बारे॥

सूर्य का रथ निरन्तर चक्कर लगाता रहता है, तपस से बचने के लिये जीव स्त्री छाया की तलाश करती है। कमजोर जीव विकारों की तपस से बचने के लिये गुरू का सहारा ढूंढते हैं। तपस के कारण झीगुर भी बाहर टीं-टीं करता है। गर्मी से राहत के लिये इच्छा करता है।

अवगण बाधि चली दुख आगै
सुखु तिसु साचु समाले॥

जो जीव स्त्री संसार यात्रा के समय बुरे कर्मों की गठड़ी सिर पर बान्धे फिरती रहती है, उसे विकारों की तपस का दुख अवश्य भोगना पड़ता है। परन्तु जो जीव स्त्री सच्चे परमात्मा को अपने हृदय में बसा लेती है, उसे अवश्य सुख तथा आत्मिक आनन्द प्राप्त होता है।

नानक जिन को इहु मनु दीआ
मरण जीवणु प्रभ नाले॥

हे नानक! जिस जीव स्त्री को प्रभु ने कृपा करके हरि नाम सिमरण वाला मन दिया है, प्रभु प्रीतम के साथ उसका मन सदीवी साथ बन जाता है, उसे आषाढ़ की तपस, विकारों का सेक नहीं लग सकता।

शहीदों के सरताज

(श्री गुरू अरजन देव जी)

सन्त वरियाम सिंह जी
बानी वि. गु. रू. मि. चै. ट्रस्ट

शान ....।
सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन स्री गुरू नानक देव जी महाराज।
डंडउति बंधन अनिक बार सरब कला समरथ॥
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ अंग - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ॥
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥अंग - 289

धारना - महिमा तेरी न वेद जाणदे -2, 2.
तेरा बरमा ने अंत न पाइआ -2.

महिमा न जानहि बेद॥ ब्रहमे नही जानहि भेद॥
अवतार न जानहि अंतु॥ परमेसरु पारब्रहम बेअंतु॥
अपनी गति आपि जानै॥ सुणि सुणि अवर वखानै॥
संकरा नही जानहि भेव॥ खोजत हारे देव॥
देवीआ नही जानै मरम॥ सभ ऊपरि अलख पारब्रहम॥
अपनै रंगि करता केल॥ आपि बिछोरै आपे मेल॥
इकि भरमे इकि भगती लाए॥ अपणा कीआ आपि जणाए॥
संतन की सुणि साची साखी॥ सो बोलहि जो पेखहि आखी॥
नही लेपु तिसु पुंनि न पापि॥ नानक का प्रभु आपे आपि॥
अंग - 894

धारना - निरवैर निराला जी,
सतगुर पुरख अगंम है।

सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरु निराला॥
जाणहु धरती धरम की सची धरमसाला॥
जेहा बीजै सु लुणै फल करम सम्हाला॥
जिउ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला॥
जेहा मुहु करि भालीऐ तेहो वेखाला॥
सेवक दरगह सुरखरू वेमुखु मुह काला॥
भाई गुरदास जी, वार 34/1

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो सतनाम श्री वाहिगुरू। कारोबार संकोचते हुए जेठ सुदी चौथ कि गर्मी अपने पूरे ज़ोरों पर है, लगभग 44° सैल्सियस तापक्रम चल रहा है, शामियाने लगने से गर्मी और भी बढ़ जाती है सो आप सभी तप कर रहे हो - इसे सहज तप कहते हैं। गुरू महाराज जी की याद में बन्धे हुए, दूर दूर से श्रद्धा धारण करके, इस स्थान पर पहुँचे हो। गुरू जिसके बारे में फरमान है कि *'सतिगुरु पुरखु अगंम है निरवैर निराला।'* जिसकी क्रिया की कोई अगमता ही न हो, मनुष्य जान ही न सके, अनुमान भी न लगा सके। जो आम आदमी है, उसे आम आदमी समझकर ही बातें करें, श्रद्धा रखने वाले श्रद्धापूर्वक बातें करें, जो इसमें शक्तियां मानते हैं, वे शक्तियों के जानने वाला जानकर बातें करें, जो उच्च मण्डलों के देवी देवता, साधु महात्मा हैं, वे इसे और भी अधिक अच्छा समझकर ऊंची बातें करते हैं। ऐसी जो क्रिया हुआ करती है, वह सतगुरू की ही हुआ करती है। यह कौतुक किसी की भी समझ में नहीं आया करता। यह क्रिया अगम हुआ करती है अर्थात ममता से बाहर की क्रिया होती है। अपने अपने अनुमान हुआ करते हैं। हम उनके जीवन को, अपने हिसाब से, अपनी बुद्धि से, अपने निश्चयों से जानने का प्रयत्न किया करते हैं। लेकिन वे हमारे निश्चयों से कहीं अधिक महान होते हैं। क्या होता है, क्या नहीं होता? हमें उनके बारे में कुछ भी पता नहीं चलता। जैसी परमेश्वर ने जिसे बुद्धि दी है, वह वैसी ही बातें करता है।

गुरू पांचवे पातशाह महाराज, आप जी ने जब से गुरूपद सम्भाला है, उससे पहले का भी सारा जीवन चाहे गृहस्थ में बिताया है, परन्तु चैन का जीवन नहीं रहा। बहुत संघर्षों में से निकलना पड़ा। एक तरफ उनका निश्चय था कि -

दूखु न देई किसै जीअ पति सिउ घरि जावउ॥
अंग - 322

किसी को दुख नहीं देना, किसी के साथ वैर नहीं करना, किसी का किसी भी तरह से बुरा नहीं करना। जब भी कोई काम करना है तो बस भला ही करना है। चाहे सामने कितना बड़ा दुश्मन भी क्यों न खड़ा हो? उन्होनें तो बस भला ही करना है। क्योंकि महापुरुषों का स्वभाव हुआ करता है। दुष्ट आत्मा का स्वभाव अलग होता है। गुरमुख आत्मा का

स्वभाव अपना अलग हुआ करता है। यदि दोनों का मिलाप हो जाये तो फिर बड़ी कठिनाई हो जाती है। गुरमुख आत्मा अपने नियम पर अटल रहती है जबकि दुष्ट आत्मा राक्षस वृत्ति पर कायम रहती है।

एक बार शुकदेव मुनि जा रहे थे। एक छोटा सा तालाब नज़र आया। आपके मन मे विचार उठा कि मैं हाथ पांव धो लूँ। कुरली वगैरा कर लूँ, गर्मी बहुत पड़ रही थी। आप वहां पर गये और अंजलि भर कर पानी से हाथ धोने लगे। आपने देखा कि एक जीव उसके अन्दर डूब रहा है और बार बार बाहर आने की कोशिश करता है, फिर गिर जाता है। आपने गौर से देखा तो वह बिच्छू था। आपके मन में उसे बचाने के लिये इच्छा जाग्रत हुई क्योंकि परोपकारी भावना मन में रहती थी. किसी की जान बचाना अपना धर्म समझते थे चाहे दुश्मन ही क्यों न हो? आप ने उसे अंगुली का सहारा दिया तो वह बेहोश हुआ बिच्छू अंगुली का सहारा पाकर, अगली दो टागों से ऊपर चढ़ने लगा। थोड़ी देर में बिच्छू ने एक दम डंक मार दिया। हाथ कांपने लगा तो बिच्छू फिर धड़ाम से वहीं पानी में जा गिरा। महात्मा जी को फिर तरस आ गया। उन्होंने फिर उसे सहारा दिया, उसने फिर डंक मार दिया। इस प्रकार उसने दसों अंगुलियों पर डंक मार दिये। दर्द बहुत ज्यादा होने लगी। शरीर में विष असर करने लगा। इतनी देर में कोई सज्जन पुरुष उधर से आ निकला और बोला, ''सन्त जी! आप इसे बाहर निकालते हो और यह आपको डंक मार देता है। आपकी दसों अंगुलियों पर इसने डंक मार दिया। कोई ऐसी जगह नहीं रही, जहां पर इसने अपना वार न किया हो। इसका तो स्वभाव ही डंक मारने का है।'' महात्मा ने कहा, ''प्यारे जी! देखो यह जीव है। इसे परमेश्वर ने ज्ञान ही नहीं दिया। इसे यह मालूम नहीं कि मुझे बचाया जा रहा है। मेरी रक्षा की जा रही है। परन्तु मुझे तो परमेश्वर ने अकल दी है कि नेकी करना मेरा फर्ज़ है। जब यह पशु वृति में होकर अपना स्वभाव नहीं छोड़ता तो बताओ, फिर मैं मनुष्य होकर अपना नेकी का स्वभाव कैसे छोड दूं?'' इस प्रकार बातें चली आती है। कईयों के मन में भलाई की भावना बसी होती है तो कुछ के मन में बुराई बसी होती है? कुछ प्रेरणा के स्त्रोत होते हैं। अपनी अपनी वृति तथा स्थिति के अनुसार जीव काम करते है।

इस प्रकार दृष्टि में अन्तर हुआ करता है। गुरू पांचवे पातशाह महाराज, आप अभी छोटी उम्र के हैं, लगभग 17 साल के होगें। इस समय पृथी चन्द चालें चलता है कि किसी तरह गद्दी उसे मिले। परन्तु गुरू रामदास जी महाराज अच्छी तरह से कसौटी पर कस कर देखने के बाद गुरू पद इन्हें सौप देते हैं. जब गुरूपद इन्हें दिया गया तो आपकी आयु पृथी चन्द से छोटी थी। जितनी संगत के मुखिया आते हैं, अमीर लोग, अधिकारी वर्ग, राजसी कर्मचारी आते हैं, उनकी सेवा करता है और उनके साथ मित्रता भी करता रहता है। इस प्रकार राजसी ताकत इक्ट्ठी करने लगा। मसन्दों को ठगने लगा। इसने शुरू से ही ऐसी योजना बनाई थी, गुरू गद्दी का अधिकारी तो था नहीं, जबरदस्ती हथियाना चाहता था। महाराज जी ने अधिकारी देखकर, भोलेभाले दुनियां से पूरी तरह निर्लिप्त रहने वाले, सब कुछ जानते हुए भी अलग थलग रहने वाले, अमरदास जी को गुरूपद दे दिया। उस समय उसने रोष से भरकर पातशाह गुरू राम दास जी से कहा, ''देखो! आपने मेरा हक मार दिया, परन्तु मेरा नाम भी पृथी चन्द है। मैनें इसे एक दिन भी चैन से नहीं बैठने देना। कहते हैं, भाई भाई के बाजू होते हैं पर यह भाई बाजू की जगह पूरा दुश्मन है।'' तभी से घर की फूट शुरू हो गई। काफी समय तक महाराज जी के कोई सन्तान पैदा न हुई। बाद में जब बाबा बुड्ढा जी के आर्शीवाद से गुरू हरगोबिन्द साहिब जी प्रकट होने वाले थे, उस समय इसने एक जादूगर को जो जोगी के भेष में रहता था, उसे कहा, तू जितना मर्ज़ी धन ले ले, जैसे भी हो यह गर्भ नहीं रहना चाहिये। जादूगर लालची था। लोभ में आकर जब अपनी मन्द चाल चलने लगा तो महाराज जी की कृपा हो गई।

रोगन ते अर सोगन ते जल जोगन ते बहु भांति बचावै ॥
सत्रू अनेक चलावत घाव तऊ तन एक न लागन पावै ॥
राखत है अपनो कर दै कर पाप समूंह न भेटन पावै ॥
और की बात कहा कह तो सों सु पेट ही के पट बीच बचावै ॥ *सवये पातशाही १०*

महाराज जी ने रक्षा कर दी। जो वार उस जोगी ने गुरू पत्नी माता पर चलाया था वह वपिस उसी जोगी पर आ चला और वह मर गया। इसके पश्चात उसने एक दाई (नर्स) को लालच दिया कि वह अपने स्तनों के साथ विष लगाकर, इस बालक को सदा की नींद सुला दे। जिस प्रकार श्री कृष्ण जी महाराज को मारने के लिये कंस ने पूतना को भेजा था। इस प्रकार जब वह गुरू महाराज जी को गोदी में लेकर दूध पिलाने बैठती है तो गुरू महाराज जी दूध नहीं पीते बल्कि हाथ से उसके स्तनों को इतने जोर से दबाते हैं कि वह वहीं पर दम तोड़ देती है। पूर्व जन्म का श्राप लगा हुआ था, अतः गुरू महाराज जी की स्तुति करती हुई परलोक चली जाती है। कहती है, ''पातशाह! आपने मुझे क्षमा कर दिया। धन्य हैं आप।'' इस प्रकार बचपन से ही आप जी ने अनेक कौतुक दिखाये। फिर उसने किसी सपेरे को लालच देकर एक बहुत बड़ा सांप पीछे छुड़वा दिया। बहुत ही जहरीला नाग गुरू महाराज जी की ओर सीधा ही बढ़ता आ रहा है, जैसे ही

यह डंक मारने की कोशिश करता है, महाराज जी इसको फन से पकड़ लेते हैं। बड़ी जोर से पकड़ कर धरती पर फैंक कर मारते है। उस समय महाराज जी चलना भी नहीं जानते थे, केवल लुढ़कना ही सीखे थे। यह घटना उस समय की है। इस प्रकार फन पकड़ कर धरती पर रगड़ रगड़ कर, उस सांप को मार देते है। यह कौतुक देखकर सभी दंग रह गये। सपेरा पकड़ लिया गया और उसने सच सच बता दिया कि पृथी चन्द ने उसे लालच देकर भेजा था।

इतना ही नहीं एक बार गुरू साहिब के पण्डित दुनी चन्द को भी इस मन्द कर्म में फंसा लिया। उसने दुनी चन्द से कहा, ''गुरू साहिबजादे दही बहुत पसन्द करते हैं। उनकी दही में थोड़ा सा सायनाईड ज़हर मिला देना बस मुँह से स्पर्श करने की देर होगी कि ज़हर सारे शरीर में असर कर जायेगा और काम हो जायेगा। अभी 500 रुपये रख ले, फिर काम हो जाने बाद तुझे मुँह मांगा धन दूंगा।'' इस प्रकार पण्डित दुनी चन्द भी लालच के वशीभूत हुआ गुरू महाराज जी को गोदी में लेकर दही खिलाने लगा। पर गुरू महाराज जी नहीं खाते। वह जब जबरदस्ती मुँह में डालता है तो महाराज जी चीख पड़ते हैं शोर सुन कर महाराज जी, तथा माता जी भी आ जाती हैं और कहती है, ''पण्डित जी! क्यों जबरदस्ती खिलाते हो? नहीं खाना चाहते मत खिलाओ।'' इधर महाराज जी ऐसा हाथ मारते हैं कि दही इधर उधर बिखर जाता है। उधर से एक कुत्ता आता है और वह दही खाने लगता है। जैसे ही वह दही चाटता है, ज़हर बहुत असरदार था, अत: तुरन्त धरती पर लोट पोट होता हुआ मर जाता है। पण्डित जी को पूछा, ''यह तुमने क्या किया है?'' तो उसने रून्धे हुए गले से अपनी गलती मानते हुए कहा, ''मुझे पांच सौ रूपये देकर यह मन्द कर्म करने के लिये पृथी चन्द ने भेजा था।'' जो बुरा व्यक्ति होता है उससे धन के लालच में जितना बड़ा मर्ज़ी घृणात्मक काम करवा लो, वह कर देगा। उस समय प्रकृति का न्याय चलता है। गुरू महाराज जी उसे कुछ नहीं कहते। न उसे मारते हैं और न ही डाँटते हैं। बस इतना ही कहते हैं, ''तूने बहुत बुरा किया।'' थोड़ी देर बाद धरती पर लेटने लग जाता है। पेट में सूल पड़ते हैं, दर्द के मारे, सारी संगत के सामने प्राण त्याग देता है। उस समय गुरू महाराज जी ने इस तरह से शबद का उच्चारण किया।

धारना - पापी पच के मरिआ जी
हरि जन राखे आप हरी ने।

लेपु न लागो तिल का मूलि॥
दुसटु ब्राहमणु मूआ होइ कै सूल॥ अंग - 1137

इस प्रकार उसे अपने पाप कर्म का फल स्वयं ही मिल गया। यहां पर इन प्रसंगों से गुरू महाराज जी के स्वभाव का पता चलता है। मन्द कर्म के बदले में कोई वार नहीं किया। माता जी के मन में कई बार संशय होता है कि पृथी चन्द साहिबजादे जी का नुकसान कर सकता है। परन्तु महाराज जी कहते हैं, ''जिसका रक्षक मालिक हो जाये, उसे कोई नहीं मार सकता। उसकी कभी हार नहीं हुआ करती। उसकी सदा जीत होती है।'' फरमान है -

जिसके सिर ऊपरि तूं सुआमी सो दुखु कैसा पावै॥
अंग - 749

जिसके सिर पर परमेश्वर का हाथ हो, उसे कभी भी दुख नहीं आ सकता। इस प्रकार महाराज जी के स्वभाव के बारे में इन साखियों और वाणी से पता चलता है, आप जी ने फरमान किया कि -

लेपु न लागो तिल का मूलि॥
दुसटु ब्राहमणु मूआ होइ कै सूल॥
हरि जन राखे पारब्रहमि आपि॥
पापी मूआ गुर परतापि॥
आपणा खसमु जनि आपि धिआइआ॥
इआणा पापी ओहु आपि पचाइआ॥
प्रभ माता पिता अपणे दास का रखवाला॥
निंदक का माथा ईहां ऊहा काला॥
जन नानक की परमेसरि सुणी अरदासि॥
मलेछु पापी पचिआ भइआ निरासु॥ अंग - 1137

इसके बाद पृथी चन्द का एक और बड़ा मित्र बीरबल नाम का था। जिसके बारे में लोग बहुत सी कहानियां सुनाया करते हैं। चुटकले सुनाया करते हैं। कुछ लोगों ने अपने ही मन गढ़न्त बनाये होते हैं पर नाम बीरबल का लिख देते हैं। कुछ वह करता भी ऐसे ही काम था। एक बार युसुफ ने उसे काबुल भेजना था। वहाँ युद्ध हो रहा था। अकबर बादशाह इससे बहुत खुश थे। अकबर ने कहा, ''बीरबल! आप काबुल जाओ। रास्ते में सारा हाल चाल भी देखते जाना और प्रजा को प्रसन्न करते जाना।'' बीरबल बोला, ''महाराज! मैं ब्राह्मण हूँ और फिर राज ब्राह्मण की मेरी पदवी है। आपने मुझे राज पण्डित का मान दिया है। आपके राज्य में जितने भी खत्री रहते हैं, वे सभी मेरे यजमान बनते हैं। इसलिये एक परवाना लिख दो कि सभी खत्री मुझ ब्राह्मण को दक्षिणा देना न भूलें।''

इस प्रकार लिखवा लिया और दिल्ली से चल पड़ा। उगाही करता हुआ आ रहा है, करोड़ों रूपया इक्ट्ठा कर लिया। जिसके पास भी अच्छी अमीरी देखता है, तुरन्त सन्देशा भेज देता है, ''राज पण्डित को अमुक दक्षिणा, भेज दो।'' इस प्रकार डर के मारे उसे मनचाही दक्षिणा धन के रूप में मिल जाती है। इस तरह चलते चलते, वह अमृतसर आ पहुंचता

है। शहर के बाहर डेरा डाल देता है। मन में गुरू घर अर्थात गुरू नानक के घर के प्रति बड़ी ईर्ष्या है। ये हमारे ब्राह्मणों का विरोध करते हैं। हमारे जनेऊ की जगह कहते हैं कि सच का जनेऊ पहनो। इस प्रकार ईर्ष्या मन में उठ रही है।

परन्तु गुरू नानक पातशाह ऐसे नहीं कहते थे कि जनेऊ मत पहनो। आपने जनेऊ डालने के लिये कभी मना नहीं किया। आप तो चाहते थे कि इसके अन्तरीव अर्थों को समझें। इसे केवल धागा समझ कर न पहनें। आप इस जनेऊ के अन्तरीव अर्थ समझाते हुए बताते हैं कि इसकी कपास दया की हो, सन्तोष के सूत से बटा हुआ हो, जत की गांठे हो, सत के चरखे पर काता गया हो। ऐसा डाला हुआ जनेऊ, फिर यहां भी और दरगाह में भी साथ जायेगा। यदि कोई और जनेऊ डालते हो तो -

चऊकड़ि मुलि अणाइआ बहि चउकै पाइआ॥
सिखा कंनि चड़ाईआं गुरु ब्राहमणु थिआ॥ अंग - 471

यदि तुम ऐसा करते हो, ब्राह्मण ने उसे बट लगाये और तुमने गले में डाल लिया। कहते हैं -

ओहु मुआ ओहु झड़ि पइआ वेतगा गइआ॥
अंग - 471

''वह तो यहीं पर ही झड़ जायेगा, गल जायेगा आगे कहाँ मिलेगा?'' यदि कोई चिन्ह पहनना ही है तो ऐसा पहनो जो दरगाह में भी साथ जाये। जो यहीं पर ही शरीर के साथ ही मर जाये, ऐसे चिन्ह का क्या लाभ? इसलिये आप कहा करते थे कि इस जनेऊ के आन्तरिक भावों को हृदय में बसाओ। स्थूल शरीर के बाद जो कारण शरीर है, इसके अन्दर भी बसाओ। फिर तुम्हें जनेऊ मुबारक है।

इस असली बात को न समझने के कारण ये कर्म-काण्डी लोग गुरू घर के साथ द्वैष करते थे। कट्टर पंथी भावना के कारण जो ब्राह्मण वर्ग था, वही द्वैष और ईर्ष्या से जलता था। आम हिंदू तो गुरू नानक साहिब को मानते थे। यदि गुरू साहिब को न मानते तो जिस दिन पांच प्यारों का चयन हुआ, तो सारे देश में से कैसे उठकर आ जाते, द्वारिका से कैसे आते? बिदर से कैसे आते? उड़ीसा से कैसे आ सकते थे? सारे हिन्दुस्तान में से एक एक प्रतिनिधि खड़ा दिखाई देता था। यदि सिखी न होती तो कौन आता? उस समय केवल विरोध करने वाले ये अपने आपको ऊंची जाति के समझने वाले ब्राह्मण ही थे। वह ज़ोर के बल पर गुरू घर को झुकाना चाहता था। गुरू अर्जन देव जी महाराज के पास सन्देशा भिजवाता है कि मुझे एक लाख रूपया दक्षिणा भिजवा दो। साथ ही यह भी सन्देशा भिजवाया कि यदि आपने दक्षिणा न दी तो घर बार ज़ब्त करने का हुक्म मेरे पास है और मैं आपको गिरफ्तार भी कर सकता हुँ। महाराज जी को बताया गया। महाराज जी ने कहा, ''क्या जल्दी है?''

अजहु सु नाउ सुमंद्र महि किआ जानउ किआ होइ॥
अंग - 1366

आज तक, कल किसी ने नहीं देखी। जब कल आयेगी तो देखी जायेगी। कल की बात कल करेगें। रात को उसे हुक्म आ गया कि युसुफ सहित जल्दी चले आओ। पठानों का जोर पड़ गया। उसी समय बात को बीच में ही छोड़ कर वापिस चला गया। साथ ही हिदायत दे गया कि जब मैं वापिस आऊंगा तो व्याज सहित पैसा वसूल करूंगा। दण्ड लगाऊंगा। इस तरह बात खत्म हो गई। जो अहंकारी होते हैं, वे परमेश्वर को भाते नहीं है। वे जल्दी ही गिर जाया करते हैं।

धारना - धरती ते गिरदे ने करदे अभिमान जिहड़े -2, 4.

जो जो करते अहंमेउ झड़ि धरती पड़ते॥ अंग - 317

कहते हैं कि जो भी ताकत दिखाता है, चाहे पहले दिखाये या बाद में, वह गिरता ही गिरता है।

ऊचा चड़ै सु पवै पइआला॥
धरनि पड़ै तिसु लगै न काला॥ अंग - 374

जो धरती पर पहले ही गिरा पड़ा हो उसे और नीचे क्या गिराना? साध संगत जी! जो ऊंचा चढ़ता है, उसने ही गिरना होता है। सो गिर गया। समाप्त हो गया। इस प्रकार एक तरफ तो षडयन्त्र ही षडयन्त्र रचे जा रहे हैं। दूसरी ओर देखा जाये तो श्री गुरू ग्रन्थ साहिब में आधी वाणी गुरू महाराज पांचवे पातशाह ने उच्चारण की है। कलयुगी जीवों को शान्ति देने के लिये, रास्ता दिखाने के लिये, बड़े बड़े मुश्किल सिद्धान्तों को बहुत ही सरल एवं सुन्दर ढंग से प्रकट किया। सुखमनी साहिब में चारों वेद, छह शास्त्र, 27 स्मृतियां उपनिषदों, कुरान शरीफ, तौरेन्त, अन्जील, जम्बूर, बाईबल जितने भी धर्म ग्रन्थ और जितने भी महापुरुषों के सैद्धान्तिक कर्म, उपासनाएं, ज्ञान, विज्ञान ये सभी महाराज जी ने 24 अष्टपदियों में अंकित करके हमारा मार्ग दर्शन किया है। एक ही वाणी हमें भक्ति से लेकर ज्ञान तक, परमेश्वर तक, लीनता तक ले जाती है। ऐसी वाणी का उच्चारण कर रहे हैं। मन में कोई द्वैष भावना नहीं है। इस प्रकार समय बीतता गया। साहिबजादे जवान हो गये। अकबर ने शरीर त्याग दिया और जहांगीर तख्त पर बैठा। तख्त पर बैठने के बाद सारा राज-पाट देखता है तो थोड़ा सा इसकी नीयत में परिवर्तन आ जाता है। अक्बर की नीति समझौते वाली थी। वह चाहता था कि धर्म और मज़हब का राज्य प्रबन्ध के साथ कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिये। बात समझने वाली है। अकबर

की नीति सभी धर्मों को बराबर सम्मान देने वाली थी। जहांगीर के आते ही नीति बदल गई।

इस नीति में परिवर्तन करने वाला, भेद भाव पैदा करने वाला, एक सलाहकार था शेख अहमद सरहन्दी जिसका मकबरा फतहगढ़ साहिब के पास बना हुआ है। वह सभी को कट्टरवादी बना रहा था। जो पीर फ़कीर सन्धि में विश्वास रखते थे, वे सब अपने पीछे लगा दिये। इस्लामी राज्य घोषित कर दिया। अकबर का राज्य इस्लामी राज्य नहीं था। वह हिन्दुस्तान की प्रजा का राज्य था। बेशक वह मुसलमान बादशाह था पर सभी धर्मों का आदर करता था। सभी के कल्याण के लिये उसने कानून बनाये हुए थे। जब राज्य मज़हबी बन जाता है, उस समय मज़हबी कानून बन जाते हैं, जिसमें उसी मज़हब के लोग फिट रहते हैं, बाकी धर्मों के लोगों के लिये ठीक नहीं हुआ करता। धर्म हमेशा पवित्र एवं उच्च चरित्र हुआ करता है, इसलिये धर्म और राजनीति का मेल नहीं हुआ करता। उच्च चरित्र एवं राजनीति इक्ट्ठी हो, तो राजनीति में शुद्धता रहेगी। यदि मज़हब और राजनीति इक्ट्ठी हो जाये तो फिर द्वैत आ जाती है। इसने मज़हब और राजनैतिक शक्ति को इकट्ठा कर दिया। इसका परिणाम यह निकला कि जो साफ दिल एवं खुशदिल मुसलमान थे, सूफी वगैरा उनके सामने बड़ी कठिनाईयां आने लगीं। जो हिन्दू थे, उन्हें भी तकलीफें उठानी पड़ीं। गुरू घर के साथ जो मित्रता और श्रद्धा चल रही थी, उसमें विघ्न पड़ना शुरू हो गया। अकबर गुरू अमरदास जी से मिला, धरती पर बैठ कर संगत के साथ मिलकर, पंगत में बैठा और भोजन किया। दूसरी बार चौथे गुरू पातशाह से भेंट हुई। उस समय गुरू ग्रन्थ साहिब की बाणी सुनकर और भी अधिक प्रभावित हुआ। तीसरी बार फिर गुरू पाचवें पातशाह जी के साथ मुलाकात हुई। उसमें इसने कहा, ''जो मैनें आपको पट्टा बना कर दिया है, उससे होने वाली आय को लंगर में प्रयोग किया करो। लंगर में आपका बहुत खर्च होता है। इसलिये यह परगना मैं आपको देता हूँ। इसका प्रयोग लंगर के लिये करो।'' महाराज जी ने कहा, ''हमारा लंगर कोई छोटा मोटा नहीं है, बहुत बड़ा है। यह तो इतना बड़ा है जितना बड़ा विश्व है। तुम्हारे इस परगने को लेकर कुछ भी नहीं बनेगा। हां, यदि आप वास्तव में ही सहायता करना चाहते हो तो इस समय पंजाब में अकाल पड़ा हुआ है, भुखमरी फैली हुई है। अपने खजानों में से, भण्डारों में से पंजाब को अनाज भेज दे। अनाज के भण्डार खोल दें। दूसरी बात इस गरीब जनता का मालिया वापिस कर दे। अकबर ने उसी समय मालिया वापिस कर दिया। सरकारी भण्डार में से अनाज भेजा। इस प्रकार वह आप जी की सेवा से बहुत प्रभावित हुआ।

जब लाहौर में भुखमरी फैली, बीमारी फैली, गलियों में लाशों के अम्बार पड़े थे। उनकी कोई देखभाल नहीं कर रहा था, ऐसे समय में गुरू महाराज अपने सिखों को साथ लेकर, हिन्दुओं के संस्कार तथा मुसलमानों को कब्रों में दफनाने का कार्य करते रहे। आप का हिन्दुओं और मुसलमानों में बड़ा यश हुआ। उस समय भी बहुत से लोग महाराज जी का विरोध करते थे। इधर उस चन्दू दीवान ने अपनी लड़की का रिश्ता करने के लिये निमन्त्रण भेजा। उन दिनों में ऐसा कोई रिवाज नहीं होता था कि शगन में पैसा आ जाये और बस रिश्ता पक्का कर दो। रिश्ता पक्का हो जाता था, फिर लड़की कहीं और शादी नहीं कर सकती थी, बस वहीं पर उसी लड़के के साथ विवाह करना पड़ता था। जब रिश्ता करने वाले ढूंढते ढूंढते अमृतसर पहुँचे और गुरू महाराज जी के स्वभाव के बारे में सुना और गुरू छठे पातशाह के दर्शन किये तो उनके मन में आया कि दुनियां में इससे बढ़िया रिश्ता और कोई नहीं मिल सकता। बहुत खुशी हुई। उन्होंने सगाई पक्की करने के लिये रुपया दे दिया और समय की मोहलत मांग ली। महाराज जी ने कहा कि हम सोच विचार कर आपको जवाब देगें। ठीक है आपने अपनी बात कह दी, अब हम सोच विचार के बाद उत्तर देगें। जब वे दिल्ली लौटे तो बड़ी खुशियां मनाई गईं। सभी कहते कि इसकी लड़की की सगाई हो जायेगी, गुरू घर का रिश्ता मिल जाना है। उस समय गुरू की संगत के बहुत से प्रेमी चन्दू के घर चले जाते हैं। वे मन ही मन सोचते हैं कि यदि यह फैसला हो गया तो उसको बधाईयां देगें तथा जिस लड़की के साथ नया सम्बन्ध होगा, उसके चरण स्पर्श करेगें। वह बहुत ही भाग्यशाली लड़की होगी तथा जगत माता बनेगी। जब ये वहां पहुँचे और इसके पहलकारों ने रिश्ते के सम्बन्ध में बताया तो इसने नाक भौंह चढ़ा ली, माथे पर त्यौरियां चढ़ गई। कहता है, ''तुम्हें अकल नहीं थी। कितना बुरा काम कर आये हो?'' वे बोले, ''महाराज! उन जैसा तो संसार में और कोई है ही नहीं।''चन्दू अभिमान से भरकर बोला, ''मैं सरकारी अफसर हूँ और वे फकीरों की गद्दी पर बैठे हैं। तुमने यह क्या किया? चौबारे की ईंट को गन्दी नाली के साथ लगा दिया?'' इस प्रकार अहंकार से भरे वचन कहे।

उस समय जो गुरू घर के प्रेमी वहां बैठे थे, उनके मनों में बहुत पश्चाताप हुआ और अफसोस किया कि ऐसा अहंकारी, पापी इसका रिश्ता गुरू घर के साथ नहीं होना चाहिये। उन्होंने उसी समय एक पत्रिका लिखी। इनके पहुँचने से पहले पहले वह पत्रिका पहुँचाई। उसमें आप लिखते हैं -

धारना - मूरख आप नूं चौबारा आखे निदिआ करे पूरे गुरां दी -2, 4.

लिखतुम सभि दिल्ली की संगति
सतिगुर के सनमुख अरदासि॥
शाहि दिवान सुता को नाता॥
भेज्यों अहै तुमारे पासि॥
आप हंकारी बनयो चुबारा
तुमहि कहयो मोरी संकास॥
बिन शरधा ते मूरख बोलयो
इत्तयादिक निंदा की रास॥
हम को नहिं चलयो सु लिखयो ब्रितंत॥
सुता न साकत की तुम लीजहु
इह संगति को अहै मतंत॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, अंग - 2240

प्रस्ताव पास कर दिया गया कि यह रिशता मन्जूर नहीं करना। गुरू महाराज जी के पास चिट्ठी पहुँच गई। पक्ष विपक्ष पर विचार किया गया। सभी ने विचार किया कि जो पहले ही हमारे निन्दक हैं, उनका कोई अन्त नहीं। अब यह बड़े पद और मान वाला भी हमारा विरोधी बन गया तो वैर भाव और भी बढ़ जायेगा। इस प्रकार गुरू महाराज जी के सामने एक तरफ तो संगत की प्यार से भरी अरदास है, दूसरी ओर इतने सारे कष्ट हैं। उस समय गुरू महाराज जी ने संगत का पक्ष लेते हुए, संगत की बात मान ली। जवाब लिख कर भिजवा दिया, ''भाई! हम तो गरीब हैं, अतः आप कोई अपने मुकाबले वाला बड़ा रिश्ता देखो।'' सच तो यह है कि वह सतगुरू की महिमा नहीं जानता और न जानने के कारण पहचानता नहीं। गुरू तो सच्चा पातशाह होता है। दुनियां के पातशाह तो झूठे होते हैं।

राजा सगली स्त्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना॥

अंग - 707

जिसका मन, नाम के साथ पूरी तरह भीग जाता है वह तो सारी सृष्टि का पातशाह होता है। सतगुरू सच्चे पातशाह की अज्ञानता के कारण महिमा नहीं जानता।

इस प्रकार मूर्ख चन्दू, सच्चे पातशाह की कद्र नहीं जानता था। सतगुरू का कितना महान पद होता है?

समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ
इक वसतु अनूप दिखाई॥
गुर गोविंदु गोुविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई॥

अंग - 442

इस प्रकार जब गुरू महाराज जी द्वारा रिश्ते से इन्कार कर दिया जाता है। ईर्ष्या ओर द्वैष बढ़ाना शुरू कर देता है। मौके की तलाश में रहता है कि अच्छा मौका मिलने पर बदला लेकर रहूंगा। तब उनसे पूछूंगा कि तुमने जो इतना बड़ा काम किया था किसके बलबूते पर किया था? इधर पृथी चंद को एक और सहायक भी मिल गया। उस समय दोनों ने मिलकर षडयन्त्र रचा। यह शिकायत की गई कि जहांगीर के लाहौर आने पर चोरी हो गई और वह गुरू अर्जुन साहिब ने करवाई है। उनके पास सारे देश के लड़ाकू और डाकू रहते हैं। वज़ीर खान जिसका पांचवें पातशाह महाराज के वचनों से जलोधर रोग दूर हुआ था, वह गुरू महाराज जी का श्रद्धालु है। वह झिड़कियां देकर सभी को वापिस भगा देता है। उनकी दाल नहीं गलती। फिर निचले स्तर पर कोशिश करते हैं। सुलभी नाम के एक खान को पटाते हैं, जो सुलही खान का भतीजा लगता था। उसे गुरू जी को पकड़कर लाने के लिये भेजते हैं। उन्हें कष्ट दे और उनसे पूछ कि कितने डाकू उनकी शरण में रहते हैं? जहांगीर की चोरी का ज़रूर पता चल जायेगा। इस प्रकार वह षडयन्त्र रचा कर, सौ घुड़सवार साथ लेकर चलता है। गुरू महाराज जी को खबर दे दी जाती है। सन्देशा दिया, ''महाराज जी! एक हाकिम फौज़दार जिसका नाम सुलभी खां है, इस तरह से सिखी को बांटने के लिये चढ़ाई करके आ रहा है।'' महाराज जी कुछ न बोले। प्रेमियों ने प्रार्थना की, ''सच्चे पातशाह! हम भी कोई हथियार उठायें। कोई उपाय करें? सवारों का मुकबला करें क्योंकि ऐसे हाथ पर हाथ रख कर बैठे रहना तो ठीक नहीं है?'' महाराज जी ने कुछ देर मौन रहने के बाद कहा, ''हमारे पास तो बहुत बड़े बड़े हथियार हैं। हमारे पास ऐसी गदा है जो कभी हार नहीं मानती। उसकी हमेशा जीत होती है। भीम सैन के पास गदा थी। उसकी ज़िन्दगी में कभी हार नहीं हुई थी। हमारे पास तो उससे भी ज्यादा ताकतवर गदा है। हमारे हाथ में ऐसा खण्डा है जिसका वार कभी चूकता नहीं है।'' संगत ने कहा, ''सच्चे पातशाह! आज तक तो देखा नहीं?'' उस समय गुरू महाराज जी, संगत की जानकारी के लिये हथियारों की जानकारी इस प्रकार करवाते हैं।

धारना - गरीबी गदा हमारी है,
अग्गे कोऊ न टिके विकारी।

महाराज जी ने बताया, ''गुरसिखो! हमारे पास तो विनम्रता की गदा है और जो हमारे पास खण्डा है वह चरणो की धूल हो जायेगा।''

गरीबी गदा हमारी॥
खंना सगल रेनु छारी॥
इसु आगै को न टिकै वेकारी॥
गुर पूरे एह गल सारी॥ *अंग - 628*

पूर्ण गुरू महाराज जी ने यह बात बताई है। सुलभी खान सवार लेकर पहुँचता है। जब ब्यास पार करने वाले थे, अभी एक मन्जिल पीछे थे तो उस समय उसकी फौज में सैयद अली

नाम का एक सिपाही था। वह बोला, ''खान साहिब! आपने मेरा दो महीने से वेतन नहीं दिया और सभी को दे दिया।'' इस पर सुलभी खान ने दो चार गालियां सुना दीं। सिपाही तैश में आ गया। उसने तुरन्त तलवार निकाली और सिर धड़ से कलम कर दिया। महाराज जी के पास खबर पहुंची और बताया, ''महाराज जी! वह तो रास्ते में ही मर गया।'' पृथी चन्द को बड़ा अफसोस हुआ। उसने जाकर सुलही खान को झूठी खबर देकर और भड़का दिया। उसने कहा कि तेरे भतीजे को उन्होनें साजिश करके मरवा दिया। असली बात उन्हें न बताई। इतना होने पर भी निन्दक कभी मानता नहीं है। कुछ समय बाद सुलही खान जो बहुत बड़ा फौजी अफसर था, काफी सारी फौज लेकर चल पड़ता है। जब उसके आने की सूचना मिली तो उस समय बड़े बड़े मुखिया बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी, भाई कलिआणा जी, भाई बिधि चन्द जी, भाई पराना जी और भाई जेठा जी, सभी इक्ट्ठे होते हैं और विचार चलती है। सभी मिलकर निर्णय लेते हैं कि ऐसा करते हैं कि पहले उसे एक चिट्ठी लिखते हैं कि गुरू साहिब का कोई दोष नहीं है, पहले तुम जांच पड़ताल करवाओ, एक जांच कमेटी भेजो। ये सभी झूठी शिकायतें हैं जो गुरू महाराज जी के विरूद्ध की जा रही हैं। दूसरा यह निर्णय लिया गया कि पांच सात व्यक्तियों का प्रतिनिधि उसे जाकर मिले। तीसरा यह निर्णय हुआ कि परमेश्वर ने हमें भी हाथ पैर दिये हैं, अतः इनका मुकाबला करो। इस प्रकार गुरू साहिब के सामने तीनों प्रस्ताव रख दिये और पूछा,''महाराज जी! आप भी अपना निर्णय दीजिये क्या करें?'' महाराज जी ने कहा, ''हमारा तो यह मत है कि आखें बन्द करके, परमेश्वर के ध्यान में बैठ जाओ। जिसके हम हैं, वह अपने आप रक्षा करेगा।'' आप गुरू ग्रन्थ साहिब जी में अंकित करवाते हैं -

प्रथमे मता जि पत्री चलावउ ॥
दुतीए मता दुइ मानुख पहुचावउ ॥
त्रितीए मता किछु करउ उपाइआ ॥
मै सभु किछु छोडि प्रभ तुही धिआइआ ॥ अंग - 371

इधर जब सुलभी खान पहुंचता है तो वह पृथी चन्द को साथ लेकर चलने के लिये उसके गांव चला जाता है। जब वह वहां पहुँचता है तो पृथी चन्द ने बड़ी बड़ी इमारतें बनवाने के लिये आवे (ईटों के भट्टे) बनवाये हुए थे। उन्हें दिखाने के लिये ले जाता है। जब वह दिखा रहा था तो सुलही खान का घोड़ा बिदक गया और डर के मारे उसने भट्टे में ही छलांग लगा दी। पहली छलांग में वह ऊपलों पर जा गिरा और दूसरी छलांग में जहां ऊपले जल रहे थे, वहां जा गिरा। इस प्रकार घोड़े सहित सुलही खान का अन्त हो गया।

जब महाराज जी को यह सूचना मिली तो आप जी ने फरमान किया -

सुलही ते नाराइणु राखु ॥
सुलही का हाथु कही न पहुचै
सुलही होइ मूआ नापाकु ॥
काढि कुठारु खसमि सिरु काटिआ
खिन महि होइ गइआ है खाकु ॥ अंग - 825

परमेश्वर ने कुल्हाड़ा निकाल कर सिर धड़ से अलग कर दिया।

मंदा चितवत चितवत पचिआ
जिनि रचिआ तिनि दीना धाकु ॥
पुत्र मीत धनु किछू न रहिओ सु
छोडि गइआ सभ भाई साकु ॥
कहु नानक तिसु प्रभ बलिहारी
जिनि जन का कीनो पूरन वाकु ॥ अंग - 825

जब वह भी मर गया तो पृथी चन्द को बहुत दुख और पश्चाताप होता है और सोचता है कि दो वार किये, दोनों ही खाली चले गये। फिर ये मेहरबान के पास वापिस जाते हैं और कहते हैं, ''जब गुरू महाराज जी के कोई सन्तान नहीं हुई थी तो उन्होनें मुझे मसन्द बनाया था। अब जब सन्तान हो गई तो मुझे निकाल दिया। मेरा भी गुरुआई पर हक है। मुझे मेरा हक दिलवाया जाये।'' वज़ीर खान ने सोचा कि रोज रोज झगड़ा खत्म हो इसलिये इसे तीन मसन्दों की सिखी दिलवा दी। इसमें बन्नू की टाक, डेरा गाज़ी खान और चनिओट का इलाका शामिल था। उन गुरसिखों को जब पता चला कि हमारी अर्थात संगत में फूट डाल दी गई है तो इन्होनें जवाब दे दिया कि हम किसी मसन्द को नहीं मानते। मसन्द आकर कहते हैं कि जिसने तुझे देना है तू उसका मसन्द है। हमारा दसवन्ध तो गुरू के पास ही जायेगा। गुरू जी इतने दयालु हैं कि पता चलते ही तुरन्त हुक्मनामा भेज दिया, ''भाई! जो आप इन तीन स्थानों से हमें दसवन्ध में रकम भेजते हो, आप इस मेहरबान को दे दिया करो। आप की तरफ से ऐसी कोई बात नहीं होनी चाहिये।'' इस प्रकार से ये ऐसी ओछी हरकतें करते हैं।

इधर जहांगीर के पुत्र खुसरो ने उसके खिलाफ बगावत कर दी। लेकिन लड़ाई में हार गया। वह पानीपत से होता हुआ इधर की तरफ आता है। उन दिनों गुरु महाराज जी तरनतारन पधारे हुए थे। गोइन्दवाल साहिब के पत्तन से जब पार करते हैं, तो इसकी फौज भूख से व्याकुल हो रही होती है। धन इसके पास नहीं होता। कोई भी खाने-पीने का प्रबन्ध भी नहीं है। उस समय उसे पता चला कि गुरु नानक पातशाह की गद्दी के जो पांचवे पातशाह हैं, वे तरनतारन में ठहरे हुए हैं। फौज को उधर ले गया और गुरु महाराज जी के चरणों

में नमस्कार किया। बहुत दीन हीन होकर प्रार्थना करता है, ''सच्चे पातशाह! मैं जहांगीर का पुत्र हूँ। इस प्रकार मैं मारा-मारा भटक रहा हूँ। मेरा कुछ भी वश नहीं चलता। कृपा करके मेरी सहायता करो। मुझे दो लाख रूपये देकर कृतार्थ करो। फिर मैं दोबारा युद्ध करूंगा। यदि जीत गया तो पंजाब का राज्य पेशावर से लेकर दिल्ली तक, जितना रास्ता है - सच्चे पातशाह! यह मैं सारा का सारा आपको भेंट कर दूंगा।'' महाराज जी ने कहा, ''खुसरो! तुम्हें राज देने वाला, तुमसे राज्य मांगे। यह जो तुम्हें राज्य मिला है, यह तो गुरु नानक देव जी की कृपा से मिला है। ये झूठे राज्य हमें नहीं चाहिये।''

राज मिलख सिकदारीआ अगनी महि जालु॥
अंग - 811

ऐसो राजु न कितै काजि जितु नह त्रिपताए॥
अंग - 745

सच्चा राजा वह हुआ करता है -

जा का कहिआ दरगह चलै॥
सो किस कउ नदरि लै आवै तलै॥ *अंग - 186*

जिसके हुक्म को धर्मराज माने, हवा, पानी आग भी माने, वह तो असली राजा हो सकता है। हमारे यहां तो जो बन्दगी करके उसके साथ इकमिक हो जाये, प्रभु के साथ रम जाये, वे राजा होते हैं।

धारना - चित हरी दे नाम नाल लगिआ,
राजा सारी दुनीआं दा।

राजा सगली स्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना॥
अंग - 707

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ
मनि प्रीति चरन कमलारे॥ *अंग - 534*

महाराज जी कहते हैं, ''खुसरो! हमें ऐसे राज्यों की ज़रूरत नहीं है। राज पाट, पद तो बन्दगी करने वालों के चरणों में ठोकरें खाते फिरते हैं। वे तो इनकी तरफ झांकते तक नहीं।

राजु न चाहउ मुकति न चाहउ
मनि प्रीति चरन कमलारे॥ *अंग - 534*

गुरु नानक का घर उन दीनों की रक्षा करता है जो इसकी शरण आते हैं। भोजन कर और अपनी फौज को भी भोजन करवा, भूख से मर रही है और यह पांच हज़ार रूपया हम तुझे देते हैं। रास्ते का तुझे खर्च पानी दे रहे हैं। बाकी जहां तू जाना चाहता है जा। इसके बाद खुसरो वहां से चला जाता है।

उधर जहांगीर इसके पीछे-पीछे फौजें लेकर आ रहा होता है। जिस जिसने भी खुसरो की मदद की उन्हें सजायें देता है। कहते हैं कि सात सौ लोगों को गधों तथा गायों की चमड़ी उतरवाकर उनमें बन्द करके धूप में सूखने डलवा दिया। वे सभी दम घुटने से मर गये। बहुत से लोगों को फांसी पर चढ़वा दिया। ऐसे ज़ुल्म करते-करते 20 दिन बीत जाते हैं।

अब चन्दू और पृथी चन्द आपस में सलाह करते हैं। चन्दू, पृथी चन्द से कहता है, ''जहांगीर आजकल इधर आया हुआ है और तेरी बात बहुत जल्दी मान लेगा। और भी पूरी-पूरी कोशिश करूंगा। जो अन्य विरोधी हैं, वे भी हमारे साथ होंगे।''

जब पृथी चन्द घर से चलता है तो उसकी पत्नी करमों ने उसे जाने से मना किया और कहा कि मुझे अपशकुन दिखाई दे रहे, अभी मत जाओ। वह बोला, ''मैं तो गुरु हूँ, क्या मुझे भी अपशकुन लग जायेंगे।'' चलते-चलते जब हेरी पहुँचता है तो यहां पर आकर भोजन करता है। भोजन बड़ा ही स्वादिष्ट था। कुछ ज्यादा खा लिया। रात को पेट में ऐसा दर्द उठा कि तड़प-तड़प कर वहीं मर गया। लाहौर पहुँच ही न सका।

अब चन्दू अकेला रह जाता है। जहांगीर उसे इस इलाके का जानकार होने के नाते, उसके साथ सलाह मशवरा करता है। फिर चन्दू ने बात छेड़ दी। कहने लगा, ''महाराज! आपने सभी को सजा दे दी और बस एक आदमी ही रह गया है। असलियत में जड़ है। जो आपको सूचना देते हैं, वे आपको सही खबरें नहीं देते। आपके गुप्तचर भी ठीक सूचना आप तक नहीं पहुँचाते।'' इस पर जहांगीर ने कहा, ''चन्दू लाल! क्या बात है? दिल खोलकर बता।'' कहता है, ''महाराज! यहां पर अर्जुन नाम का एक व्यक्ति रहता है। आपने पहले भी इसके बारे में सुना हुआ है।'' जहांगीर बोला, ''हाँ, मुझे पता है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि वह मुसलमानों और हिन्दुओं दोनों को भड़काता रहता है और ठगी की दुकान चला रहा है। और मैं इस गद्दी को समाप्त कर देना चाहता हूँ। ताज़ुके जहांगीरी में यह बात लिखी हुई है। उस समय अच्छा मौका देखकर चन्दू बोला, ''असली दोषी तो वही रह गया है। उसने तो खुसरो को आपके खिलाफ बगावत के लिये दो लाख रूपये दिये हैं। साथ उसके माथे पर जीत का तिलक लगाया है। उसके राज्य के लिये प्रार्थना की है। महाराज! सारे पंजाब के खास तौर पर जाट लोग यदि हथियार उठा लें तो पता नहीं तुम्हारी फौजों का क्या हाल कर देंगे? वे सभी इस पर जान देने को तैयार रहते हैं। यदि आपने इसका कोई बन्दोबस्त न किया तो राज्य के लिये बहुत बड़ा खतरा बन सकता है।''

इतना ही नहीं और झूठ बोलते हुए कहता है, ''महाराज!

उसके पास तो बड़े-बड़े डाकू, चोर रहते हैं। आप बहुत बड़ा जादूगर है। पहले सुलभी खान को मरवा दिया। फिर सुलही खान मरवा दिया। बीरबल ने भी ऐसे ही कहा था। उस पर भी जादू किया था और वह भी डर गया था। इसके साथ जितना जल्दी हो सके, सुलझना चाहिये वरना इसकी ताकत इतनी बढ़ जायेगी कि सारी फौज भी खतरे में पड़ सकती है। राज्य को भी खतरा पैदा हो सकता है।'' जहांगीर कानों का कच्चा, उसी समय गुरु अर्जुन देव जी को हाजिर करने का हुक्म दे दिया।

जब महाराज जी के पास उसके सिपलहार पहुँचते हैं तो महाराज जी ने कहा, ''आप चिन्ता मत करो। हम तो आप ही आ जायेंगे।'' महाराज जी ने भविष्य देखा और पता चला कि शरीर छोड़ने में थोड़े से दिन बाकी रह गये हैं।

गुरु समरथ हुआ करता है। उनकी इच्छा होती है। वे शरीर रखना चाहें तो पचास साल तक शरीर में रह सकते हैं। इसके बाद आप जी ने विचार करके बाबा बुड्डा जी तथा भाई गुरदास जी को बुलाया। गुरु छठे पातशाह जी को भी बुलाया और आपने अपनी गुरुआई पंच परिक्रमा करके नारियल आदि लेकर शीश नंवाया और बाबा बुड्डा जी की ओर संकेत करके बोले, ''लो बाबा जी! यह राजगद्दी का तिलक है, यह उस समय इन्हें लगाना जब हम शरीर छोड़ जायें। यह पूर्ण गुरु होंगे। शस्त्रधारी गुरु होंगे। दोषियों, राक्षसों, बुरे कुकर्मी लोगों को दण्ड देंगे।'' इस प्रकार गद्दी सौंपने के बाद आप जी दूसरे दिन हरिमन्दिर साहिब की परिक्रमा करते हैं। सभी स्थानों पर देग रख कर शीश नंवाते हैं, फिर दरबार साहिब पहुँचते हैं। मस्तक नंवाया और पूरे गौर के साथ भविष्य जांचते हुए देखा कि अब यह हमारा अन्तिम दर्शन होगा। तत्पश्चात महलों में गये तथा माता गंगा जी को सारी बात बताई और कहा कि अब हम जा रहे हैं, फिर वापिस नहीं आयेंगे। हमारा और तुम्हारा यह अन्तिम मेल है। जब माता जी ने वचन सुने, उस समय बहुत वैराग करती हैं। दोनों हाथ जोड़कर आप इस प्रकार प्रार्थना करती हैं -

धारना - मैथों झलिआ विछोड़ा नहीओ जाणा,
जग रहिणा औखा होजूगा।

जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ॥
ध्रिग जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा॥
अंग - 83

नेत्रों से छमा-छम प्रेम आंसू झर रहे हैं। इस प्रकार छिप जायेंगे। हम आपके बिना कैसे जीएंगे? महाराज जी ने कहा, ''देखो, आप ज्ञानवती हैं। यह तो एक तमाशा हो रहा है।''

नह किछु जनमै नह किछु मरै॥
आपनु चलितु आप ही करै॥ *अंग - 281*

बाजीगर जैसे बाजी पाई॥
नाना रूप भेख दिखलाई॥
सांगु उतारि थंम्हिओ पासारा॥
तब एको एकंकारा॥ *अंग - 736*

यह तो एक ऐकंकार जी खेल कर रहे हैं। सभी रूपों में, तुम्हारे अन्दर, हमारे अन्दर, न कोई मरता है, न कोई पैदा होता है। आप इस प्रकार के विचारों में क्यों पड़ गये हो?'' धीरज बन्धाया, दिलासा दी और कहा कि गुरु हरगोबिन्द साहिब अभी बच्चे हैं, उन्हें तुम्हारी सहायता और मार्ग दर्शन की बहुत ज़रूरत है। उनका ध्यान रखना है। अब हमें खुशियां बख्शें।

उस समय महाराज जी की यह बात उड़ते-उड़ते चारों ओर सारी संगत में, जंगल में आग की तरह फैल गई। गुरु महाराज जी तो ऐसा करने जा रहे हैं। जिसने भी यह खबर सुनी, सारी संगत इक्ट्ठी होनी शुरू हो गई। बहुत बड़ा इक्ट्ठ हो गया। जिस प्रकार श्री राम चन्द्र जी को वनवास मिला था तो सारी अयोध्या उनके पीछे चल पड़ी थी। इसी तरह सभी गुरु महाराज जी के पीछे चल पड़े। कोई भी ऐसा न रहा जो महाराज जी के साथ न जाना चाहता हो। महाराज जी ने कई बार रूक-रूक कर कहा और समझाया, ''प्रेमियो! अब तुम जाओ। हमारी खुशी इसी में है कि आप वापिस लौट जाओ। अन्त में जब पिपली पहुँच गये तब महाराज जी ने कहा, ''बस, अब इस स्थान से आगे आप जी ने नहीं बढ़ना।'' पांच सिंह, भाई बिधि जन्द, भाई जेठा जी, भाई लंगाहा, भाई पराणा तथा भाई पैडा अपने साथ ले लिये। उस समय सभी ने अरदास की, ''पातशाह! जब श्री राम, सीता जी और लक्ष्मण जी वनवास गये थे तो वह वियोग तो केवल चौदह वर्षों का था, परन्तु यहां तो ज़िन्दगी भर के बिछौड़े हो जायेंगे। पातशाह! बड़ी मुश्किल हो जायेगी।'' इस तरह से बार-बार बेनतियां करते हैं।

धारना - किवें झलांगे विछोड़ा तेरा पातशाह॥

जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै॥
बूंद विहूणा चात्रिको किउ करि त्रिपतावै॥
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै॥
भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै॥
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥
अंग - 708

नेत्रों से प्रेम आंसू झर रहे हैं। मन में धैर्य नहीं बन्ध पा रहा। बस एक ही बात सभी के मन पर है कि अब थोड़ी देर के पश्चात ये रूहानी दर्शन सदा के लिये बिछौड़ा दे

जायेंगे। महाराज जी धीरज देते हुए उपदेश देते हैं, ''प्रेमियो! जाओ हमारा वचन मान कर लौट जाओ।'' इस प्रकार पांच सिहों को लेकर जब आप थोड़ी दूर निकल आये तो पीछे मुड़कर देखा, संगत को शीश नवाया और चल पड़े। संगत ने भी जी भर कर दर्शन किये और सिर झुका दिया। जब तक महाराज जी दिखाई दे रहे होते हैं, तब तक संगत वहीं खड़ी-खड़ी उन्हें निहारती रही। जब तक धूल उड़ती दिखाई देती रही, वे उसी तरह खड़े रहे। इसे बाद गुरु महाराज जी एक गुरसिख को भेजते हैं। उसे सन्देशा देते हैं, ''गोइन्दवाल जाओ। वहां पर अरथमल जी, गुरु अमरदास जी के पौत्र और मोहरी जी के पुत्र हैं, उन्हें कहना कि हमें कल लाहौर में आकर मिले।'' मुखिया थे। कुछ वचन वार्तालाप करके समझाना था। उस समय आपके अन्दर से एक आवाज़ आ रही है जिसे बड़े ध्यान से सुन रहे हैं। एक गुरसिख की हूक है। बार-बार हृदय से आवाज़ उठ रही है। वह लाहौर का गुरसिख भाई सन्धु है, जो इस प्रकार प्रार्थना कर रहा है।

धारना - जिवें कृष्ण बिदर घर आये
मेरे विहड़े आ जा मालका।

जे तू वतहि अंञणे हभ धरति सुहावी होइ॥

अंग - 1095

उधर संगत से विदा हो रहे हैं, इधर यह अरदास सुनी जा रही है। उधर सिख की भावना को फल लगाने के लिये यह अरदास सुनी। गुरसिखों ने देखा कि गुरु महाराज जी गम्भीर होते जा रहे हैं। किसी प्यारे की याद में खिंचे हुए चले जा रहे हैं। इस प्रकार चलते-चलते फिर वही करूणा पुकार सुनाई दी।

धारना - हउं तुमरी करों नित आसा,
कदों गल लावोंगे साहिबा।

प्रभ कीजै क्रिपा निधान हम हरिगुन गावहगे॥
हउ तुमरी करउ नित आस प्रभ मोहि कब गलि लावहिगे॥

अंग - 1321

अरदास हो रही है। गुरु महाराज जी तेजी से कदम बढ़ाते हुए जा रहे हैं। लाहौर में प्रवेश कर गये। भाई बिधि चन्द, भाई जेठा जी कहते हैं, ''पातशाह! धर्मशाला की ओर चलें।'' महाराज जी कहते हैं, ''भाई! एक गुरसिख प्रार्थना कर रहा है। आज उसके दिल की भावनाओं को फल लगाना है।'' अतः गुरु महाराज जी सीधे ही भाई सन्धु के घर चले जाते हैं। उसके तो खुशी के मारे धरती पर पैर नहीं टिकते। बड़ा हैरान होता है और कहता है - ''हैं! गुरु महाराज मेरे घर आ रहे हैं।''

करनि कामना पूरन तांही।
सभि तजि, गए सिखय घर मांही॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2353

बड़े-बड़े सेवादारों के घरों को छोड़कर आप जी एक गरीब घर में छोटे से कमरे में चले जाते हैं।

ऊच नीच की परख न कोई।
प्रेम बिलोकति हरि गुरु सोई॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2353

ऊंच-नीच, जात-पात कुछ नहीं देखा। बस प्रेम भरी भावना देखी।

कहता है - ''पातशाह! जिस प्रकार कृष्ण महाराज, बड़े-बड़े महलों के वासी भीष्म पितामाह जैसे महारथियों को छोड़कर, बिदुर की झौंपड़ी में आकर ठहर गये थे, यह तो आपका आदि से स्वभाव है। आज आपने मेरा घर भी उसी तरह से पवित्र कर दिया।'' उस समय आपने बड़ी मन-तन-धन से सेवा की। सारे गुरसिख प्रसन्न कर दिये। उसे कुछ भी पता नहीं था कि क्या होने वाला है। गुरसिख के धरती पर पांव नहीं टिक रहे। बेअन्त संगत आ रही है। जिसको भी पता चलता है वही प्रेमी महाराज जी के दर्शन करने के लिये भागा चला आ रहा है। दूसरे दिन भाई अरथमल जी भी आ जाते हैं। आप उसे एकान्त में ले जाकर बताते हैं, ''भाई अरथमल जी! अब हमारा अन्त समय आ गया है। बस थोड़े से दिन रह गये। इसके बाद हमने निज घर प्रवेश कर जाना है। वह कहता है, ''पातशाह! यह कैसी बात है। आप शरीर देने के लिये तैयार हुए हैं? महाराज जी कहते हैं, ''हां!'' भाई अरथमल ने बेनती की, ''पातशाह! आप तो समरथ सतगुरु हैं। आपका शरीर लेने की किसी में ताकत ही नहीं है।'' महाराज जी ने कहा, ''यह तो ठीक है। कोई नहीं ले सकता, पर हमारी कुछ ज़िम्मेवारियां हैं। एक तो यह कि जब हमारी माता जी ने दादा गुरु अमरदास जी से यह वरदाना मांगा था कि घर में गद्दी बनी रहे तो उस समय सहज स्वभाव उनके मुख से वचन निकल गया था कि आप बहती हुई सरसा नदी पर बान्ध बनाना चाहते हो। अच्छा, बना लो, परन्तु याद रखना, कष्ट बहुत आयेंगे। शरीर कुर्बान करने पड़ेंगे। एक तो गुरुदेव का वह वचन हमें याद है। दूसरी बात जब हमारे पास कान्हा आया था, जो ब्रह्मज्ञानी था, परन्तु हम उसकी बाणी को गुरु ग्रन्थ साहिब में स्थान नहीं देना चाहते थे क्योंकि उसका जो सच था। उसने बिना पर्दे के सच्च को बाहर निकाल दिया। कलयुगी जीवों ने उसे पढ़कर ब्रह्मस्मि बन जाना था और बिना कुछ साधना किये -

एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै॥

अंग - 930

हमने उन्हें कहा कि आपके ये वचन गुरु ग्रन्थ में नहीं रखे जा सकते क्योंकि यह भक्ति सहित ज्ञान का भण्डार

है। उस समय उनके मुख से ये वचन निकले थे कि तुम्हारे शरीर का अन्त तुम्हारे वैरियों के घर में होगा। उस साधु के वचनों को हमने पूरा करना है। फिर हमने इस प्रथा को बढ़ाना है कि सन्तों का वचन कभी नहीं टल सकता। चाहे चन्द्रमा और सूरज का नाश क्यों न हो जाये पर साधु के वचन सत्य सिद्ध होने चाहियें।

धारना - भावें चन्द्रमा नाश हो जावे,
सन्तां दा बोल ना टले।

महाराज जी कहते हैं, ''अरथमल जी! साधुओं के वचनों को गुरु तो उलट सकते हैं परन्तु यह आदि जुगादि से मर्यादा चली आ रही है, प्रभु ने कभी भी साधु के वचन नहीं टाले। सो इस प्रकार हम उनके वचनों को पूरा करना चाहते हैं। साथ ही बाबा श्री चन्द जी ने भी एक बार सहज स्वभाव वचन कर दिया था कि इनका शरीर इन्हीं के दुश्मनों के घर जायेगा। सो उनका भी वचन है। गुरु अमरदास जी का भी वचन है। फिर हमारी भी यही इच्छा है कि हम उस जुल्म राज्य को समाप्त कने के लिये अपना बलिदान देना चाहते हैं क्योंकि गुरु नानक पातशाह ने सात पातशाहियां बख्श दीं और सात शीश देकर इनसे वापिस ले लीं। उन्होंने वचन किया था कि यदि तुम अन्याय करोगे तो हम सात शीश देकर वापिस ले लेंगे। अतः पहला शीश हम अपना देना चाहते हैं। इस प्रकार यह सारी खेल पहले से ही रची हुई है।'' उस समय अरथमल जी से वैराग सहन न हुआ और बेनती करते हैं, ''पातशाह! यदि जाना है तो मैं चला जाता हूँ। मैं आपकी जगह जाने को तैयार हूँ।'' महाराज जी ने कहा, ''कोई बात नहीं। तुम्हें हमारा वियोग अधिक दिन नहीं सहना पड़ेगा। आज से 40वें दिन आप भी हमारे पास आ जाओगे। बस चालीस दिन और रूको।''

रही आरबल बासुर चाली॥
तबि तुम कायां तजो सुखाली॥
मिलहु आनि परलोक सु मोही॥
नहिं वियोग बहु दिन को होही॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ 2356

कहते हैं कि बहुत दिनों का वियोग नहीं होगा, चालीस दिन के अन्दर ही आप सहज शरीर छोड़ दोगे। अब तुम्हें देह रखने के लिये कष्ट उठाना पड़ेगा। उस समय उसे धीरज देकर गुरु महाराज पांच सिहों सहित जहांगीर की ओर चल पड़ते हैं और संगत को वापिस अपने-अपने घरों को भेज देते हैं। जब जहांगीर के पास पहुंचते हैं तो उसके पास चार्जशीट (दोषापोरण के कागज़ात) रखे होते हैं। वह देखता है कि इसमें लिखा है कि इनके पास चोर डाकू रहते हैं परन्तु यह तो निरे साधु स्वरूप हैं। वह तो परमेश्वर, अल्लाह का स्वरूप नज़र आते हैं। इन्हें देखकर मन में प्यार उमड़ता है। यह चार्जशीट झूठी है। अतः अपने हाथ से ही उसे काट देता है और कहता है कि यह गलत लिखी गई है। दूसरी बात उसने पातशाह से पूछा, ''पीर जी! हिन्दू कहते हैं कि हम स्वर्ग में जायेंगे, मुसलमान कहते हैं कि हम बहिशत में जायेंगे। दोनों का झगड़ा कैसे निपट सकता है?'' गुरु महाराज ने कहा, ''जहांगीर! न तो हिन्दू होने से स्वर्ग मिलता है और न ही मुसलमान बनने से बहिशत मिलती है। यह तो नेक कर्मों के अनुसार मिलती है।'' महाराज जी ने बाणी द्वारा फरमान किया -

कोई बोलै राम राम कोई खुदाइ॥
कोई सेवै गुसईआ कोई अलाहि॥ *अंग - 885*

जब पूरे शबद का भाव सुनाया तो उस पर इसका बहुत प्रभाव पड़ा। फिर कहता है कि तीसरा दोष तुम्हारे ऊपर बहुत ही भयानक है। वह यह है कि तुमने मेरे पुत्र के माथे पर विजय का तिलक लगाया और उसके तख्त पर बैठने की कामना की। आपने दो लाख रूपया तो नहीं दिया। महाराज जी ने कहा, ''बादशाह! यह जो हमारी गद्दी है, यह फकीरों की है, इसके पास धन नहीं हुआ करता। यह तो आनी जानी रहती है। जितना खर्च होता है बस उतना आ जाता है। हम गृहस्थियों की तरह पैसा इक्ट्ठा नहीं किया करते, न ही हम किसी को देते हैं, न हमारी किसी के साथ नज़दीकी रिश्तेदारी है और न ही दूर की रिश्तेदारी है। सारी सृष्टि परमेश्वर की है। राजभोग तो तुम करते हो, मान के साथ करो। हमारी कोई इच्छा नहीं है। बाकी यदि गरीब आदमी हमारे पास आया भी था तो गुरु नानक के घर में लंगर चलता है, कोई भी आकर भोजन कर सकता है, किसी को मनाही नहीं होती। चाहे राजा हो या प्रजा, डाकू हो या साधु, लंगर के द्वार तो हमेशा सभी के लिये खुले रहते हैं। निशान साहिब भूखों को आवाज़ें देता है, दो मील, तीन मील, चार मील की दूरी तक जहां तक भी दृष्टि जाती है, हर समय हिलता रहता है आवाज़ देता है, ''तुम इधर आ जाओ। यहां पर तुझे शारीरिक खुराक के साथ-साथ रूहानियत खुराक भी मिलेगी। यहां पर आने से तेरा जन्म भी सफल हो जायेगा और तेरी भूख भी मिट जायेगी। आजा। तेरे दुखों के खातमें की यह जगह है। वह तो हर समय लहराता हुआ दुनियां को आवाज़ें लगा रहा है। कोई भी गुरु घर में आ सकता है। यहां पर तुम्हारे पिता जी भी आये थे, अब्बा जान भी आये थे, उन्होंने भी दो बार यहां पर आकर भोजन किया था। यह गुरु नानक देव जी का घर सब के लिये खुला है। यदि तेरा पुत्र आया तो हमने उसे कोई धन दौलत नहीं दी, बस पांच हजार रूपये दिये थे। जहांगीर बोला, ''इसकी सजा तुम्हारे ऊपर दो लाख रूपये

दण्ड लगाऊंगा।'' महाराज जी ने कहा, ''हमारे पास तो दो लाख रूपये नहीं हैं और न ही हम संगत के पैसे को इधर देना चाहते हैं और न ही किसी अन्य स्थान पर खर्च करते हैं। यह तो यहीं लंगर की सेवा में लगेगा।'' वहां पर एक और अहलकार बैठा था। वह कहने लगा, ''गुरु जी! सारी बात का निपटारा हो जायेगा यदि आप अपने ग्रन्थ में दो चार शबद मोहम्मद साहिब के लिखवा दें। बस इतना लिखवा दो कि मोहम्मद साहिब बहुत बड़े पीर आये थे।'' महाराज जी ने कहा, ''खान साहिब! हम बाणी नहीं रचा करते-

हउ आपहु बोलि न जाणदा
मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ॥ *अंग - 763*

यह वाणी मेरी रची हुई नहीं है।

धारना - इह धुर की बाणी आई।

बादशाह यह तो धुर की बाणी है।

जैसी मै आवै खसम की बाणी
तैसड़ा करी गिआनु वे लालो॥ *अंग - 722*

''यह तो सत की बाणी है जो धुर से आ रही है। इसमें एक भी अक्षर, एक भी मात्रा छोटी-बड़ी बिन्दी भी कम नहीं हो सकती।'' बाणी की रक्षा के लिये पहली शहीदी गुरु अर्जुन साहिब ने दी। बाणी को उलट-पुलट नहीं किया जा सकता। जिसने भी इसे छेड़ा और इसके अन्दर तोड़-फोड़ की है, उसे उसका फल भुगतना पड़ा। बहुत से लोगों ने कोशिश की थी कि इस बाणी में कुछ और मिला दें। परन्तु कुछ न बन सका। कचहरी की समाप्ति का समय हो गया। बादशाह उठ कर चले गये। फिर चन्दू कहता है, ''महाराज! आप इसे मेरे हवाले कर दो। मैं दो लाख रूपया इससे वसूल करके खजाने में जमा करवा दूंगा तथा इन्हें यह भी मनवाने की कोशिश करूंगा कि मोहम्मद साहिब की तारीफ ग्रन्थ साहिब में लिख दें।'' चन्दू इन्हें घर ले जाता है और वहां पर हवेली के अन्दर, गुरु महाराज जी को डयोढ़ी में कैद कर दिया। गुरु साहिब एक सीखों वाले पिंजरे में कैद हैं। निकलने का कोई रास्ता नहीं है। इसके बाद वह गुरु महाराज जी से पूछता है, ''बताओ अब कोई तुम्हारी सहायता करने वाला है? यहां पर तुझे कोई बचाने वाला है तो उसे बुला ले।'' महाराज जी मुस्कराये और कहने लगे, ''चन्दू! रक्षक तो हर समय हर स्थान पर साथ रहता है। वह कहीं दूर नहीं रहता, उसे बुलाने की ज़रूरत नहीं होती। तू अपना काम कर। जो कुछ भी तू करना चाहता है, किये जा।'' चन्दू बोला, ''मेरा रिश्ता मान ले। वरना मैं रात-रात भर तुझे चैन से नहीं बैठने दूंगा। भूखा प्यासा सताऊंगा।'' महाराज जी ने कहा, ''तू जो मर्ज़ी करना चाहता है, कर ले। हमने तो गुरसिखों की प्रार्थना सुनकर प्रण कर लिया, वह अब नहीं टूट सकता। अब चाहे कुछ भी हो जाये, वह नहीं बदला जा सकता।'' चन्दू बोला, ''मैं बदलवा कर दिखाऊंगा। ऐसी बातें बनाना बड़ा आसान है पर जब कष्ट दिये जायेंगें, तब पता चलेगा। डन्डे के आगे तो बड़े-बड़े राठ भी मान जाते हैं। जो यह कहते हैं कि मैंने नहीं मानना, चाहे हमारा पुर्ज़ा-पुर्ज़ा भी क्यों न कट जाये, वे भी बोल पड़ते हैं।'' वे कहते हैं, ''हां, हम ऐसा ही करेंगे।'' हम वहां अमुक स्थान पर रहे आदि-आदि। महाराज जी ने दो टूक जवाब दे दिया, ''तेरी मनमर्ज़ी तेरे साथ, हमारी हमारे साथ है। जैसा तेरा मन करे, कर ले।'' उस समय उसने गुरु महाराज जी पर पहरा लगवा दिया और कहा कि इन्हें सारी रात बैठने नहीं देना। कोई पानी नहीं देना, भोजन नहीं देना। यदि भोजन के लिये कहें तो एक रोटी के लिये पहले एक लाख रूपया दो। पानी मांगें तो कह देना कि एक लाख रूपया लाओ फिर पानी का एक गिलास मिलेगा। इन्हें यहीं पर डयोढ़ी में बन्द रखना है। बाहर नहीं निकलने देना। फिर इसके बाद झूठा दोष मढ़ते हुए बोला, ''देख! एक बात तुझे और बताता हूँ कि तूने मुझे कुत्ता कहा है।'' महाराज जी ने तुरन्त कहा, ''हम ऐसे फीके और बेहूदा वचन नहीं बोला करते पर यदि किसी गुरसिख ने कह भी दिये तो गुरसिख भी हमारा ही रूप होता है। अगर तू नहीं मानता, तो फिर तेरी मर्ज़ी है, जैसा तू समझता है, समझ। परन्तु हम तुझे फिर भी यहीं कहेंगे कि हम ऐसा अपशब्द नहीं बोला करते।'' इतना सुनकर वह चला जाता है।

दूसरे दिन आकर फिर वही तकरार शुरू कर देता है। महाराज जी ने कहा, ''हम प्रण नहीं तोड़ सकते।'' वह घमण्ड में बोला, ''मैं तोड़कर दिखाऊंगा।'' उस समय एक बहुत बड़ी देग मंगवा ली और चूल्हे पर रखवा दी। उसके बाद उस पानी को उबलने के लिये रख दिया। जब पानी खौलने लग गया तब बोला, ''आपको इसमें उठाकर फैंक देते हैं।'' महाराज जी कहते हैं, ''उठा कर फैंकने की ज़रूरत नहीं है। हम अपने आप ही चले जाते हैं।'' इधर महाराज जी उठे देग की तरफ बढ़े और उसमें ऐसे चरण रख रहे हैं जैसे ठण्डे पानी में रख रहे हों। इस तरह का फ़रमान है -

धारना - देग उबले, उबाले खावे
सतिगुरू आ के विच बैठ गए।

भाई साहिब भाई सन्तोख सिंह जी लिखते हैं -

कहि चाकर सो देग उबारी।
पकरो देहु तिसी महिं डारी।
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

इसे पकड़कर इसमें डाल दो। देग में उबाल आता है।

तबि सतिगुरु उठि आपे गए।
तपति नीर महिं बैठति भए।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

जिस प्रकार कोई स्नान करने के लिये पानी में बैठता है, इस प्रकार जाकर बैठ गये। तपते हुए नीर में शीतल जल की तरह बैठ गये। जब गुरसिखों ने यह दृश्य देखा तो सहन न हुआ।

हाहाकारि हेरि सिख करैं।
उठयो पिराणा शकति न जरै॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

भाई पराना जी उठ कर खड़े हो गये। आन्तरिक शक्ति को जर नहीं कर पा रहे, बाहर निकलने के लिये खौल रही है। आपने बाजू ऊपर उठा ली। तब महाराज जी ने कहा, ''भाई पराना! ठहर, ठहर। यह क्या करने चला है?''

प्रभु जी! रहयो जाइ नहिं मोते।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

''हे प्रभु! अब मुझ से सहन नहीं होता। मैं बेबस हो गया हूँ।''

रावर को एतिक दुख होते॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

''इतने कष्ट होते हुए, मैं कैसे सहन करूं?''

दिल्ली लवपुरि नगर बिसाले।
अहि लेवौं निज हाथ उठाले।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

एक तरफ दिल्ली और दूसरी तरफ लाहौर उठा लिया।

दुहनि भिरावों जिउं करतारी।

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

महाराज! जिस प्रकार झुनझुने को बजाते हैं, इस तरह से अभी बजा देता हूँ।

देउं नास करि, लगहि न बारी॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

''मैं अभी दोनों का नाश कर देता हूँ। मुझ से सहन नहीं हो रहा।'' महाराज जी ने कहा, ''भाई पराना! तेरे अन्दर इतनी शक्ति कहां से आ गई?'' उन्होंने कहा, ''महाराज आप की सेवा से।'' फिर कहने लगे, ''सेवा करने से यदि इतनी शक्ति आ सकती है तो जो देने वाला है क्या उसके अन्दर शक्ति नहीं है। न मेरे प्यारे! हम तो एक उपदेश दे रहे हैं। इसमें आप हमारी सहायता करो।''

धारना - इह भाणा मालक दा,
मिट्ठा करके मंन लै पिआरे।

भाई पराना! यह तो अकालपुरुष का हुक्म है। इसे प्यार से मान ले। कोई शक्ति दिखाने की ज़रूरत नहीं है। शक्ति नहीं दिखानी, वरना हमने शक्ति खींच लेनी है। फिर तुझे और भी मुश्किल हो जायेगी।

भाणै उझड़ भाणै राहा॥
भाणै हरि गुण गुरमुखि गावाहा॥ *अंग - 98*
जो तुधु करणा सो करि पाइआ॥
भाणे विचि को विरला आइआ॥
भाणा मंने सो सुखु पाए भाणे विचि सुखु पाइदा॥

अंग - 1063

सभी को सहारा दे दिया उन्हें टिका दिया। सारा दिन जिस तरह आलुओं को उबाला जाता है, इस प्रकार उबाल दिया। कुछ समय बाद चन्दू ने सोचा कि अब तो अच्छी तरह से उबल गये होंगे, खत्म हो गये होंगे, देखने के लिये आया। कहता है, ''बाहर निकालो इसे।'' गुरु महाराज जी को बाहर निकाला गया। शरीर पर फफोले पड़े हुए हैं। कहता है, ''अब भी बता दे। अभी भी हमारा रिश्ता मान ले। मेरी बाकी की बातें भी मान ले। तूने मुझे कुत्ता कहा है, अब देख कुत्ता क्या-क्या करता है?'' महाराज जी ने कहा, ''अभी तक तो तुझे कहा ही नहीं, पर तू कहता है तो कहता रह। ऐसे ही सही क्योंकि हमें तेरा कोई डर या भय नहीं है।''

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन॥

अंग - 1427

उस समय गुरसिखों से कहा कि तुम शूरवीर बन कर रहना।

हमने इम ही कारन करना।
तूं नहिं लखैं एव आचरना॥

श्री गुरु प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

हम अपना कारण आप ही बना रहे हैं। चन्दू तुझे इन बातों का पता नहीं है। इतना सुनकर चला जाता है। धमकी देकर चला जाता है, कहता है, ''सुबह देखूंगा।'' उस समय गुरु महाराज जी की खबर इसके घर पहुँचती है। इस महिला गुरसिख लड़की ने सुना, तभी से अन्न, पानी त्याग दिया। बहुत ज़ोर-ज़ोर से रो रही है। रात हो गई। इतना सख्त पहरा है कि कोई भी पहरेदार, सेवक अन्दर नहीं जा सकता। पहरेदार को बुलाया। उसे सोने का जेवर देते हुए कहा, ''भाई! आप मेरे सतगुरु हैं। मैं उनके दर्शन करना चाहती हूँ।'' वह बोला, ''देख! शोर मत मचा देना वरना हम मारे जायेंगे।'' उसने मीठा पानी एक लोटे में डाला और चूरमा बनाकर एक साफ पवित्र कपड़े में बान्धी और गुरु महाराज जी के पास चली जाती है। धड़ाम से महाराज जी के चरणों में गिर जाती है। महाराज जी ने शीश पर हाथ रखा, प्यार किया और कहते हैं, ''बेटी! सावधान!'' वह बोली, पातशाह!'' मेरे ससुर ने आपका यह हाल कर दिया। मैं गुरसिख की बेटी हूँ। मैं जीवित नहीं रह सकती। कृपा करो।

मैं थोड़ा सा प्रसाद लेकर आई हूँ। आपको भूखे रहते पता नहीं कितने दिन बीत गये? पानी तक भी नहीं पीया। आपके लिये मीठा जल लेकर आई हूँ।'' महाराज जी ने उस गुरसिख लड़की का मीठा पानी नहीं पीया। साध संगत जी! जब से गुरु साहिब गये हैं, तभी से ही आज तक हम लोग मीठा पानी पिलाने की प्रथा चलाते आ रहे हैं। यह एक तरह से गुरु साहिब को ही पिला रहे हैं। महाराज जी ने कहा, ''नहीं बेटी! हमने इस घर का अन्न, जल नहीं पीना।''

खान पान इस के घर केरा।
हम नहिं करहिं, जाहु ले फेरा॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2364

इस बुरे व्यक्ति का अन्न अच्छा नहीं है।

जा की रहित न जाणीऐ गुरबाणी नही रीत
तिस दे हथहु खाधीऐ विसरे हरि की प्रीत।

इस तरह महाराज जी ने वह वापिस कर दिया। बहुत दुखी हुई, वापिस लौट आती है। दूसरे दिन चन्दू आता है। उसने एक भट्टी गर्म करवा रखी है, उसके अन्दर रेता डाला हुआ है। रेता बहुत गर्म हो जाता है। हाथ तक कोई नहीं लगा सकता।

महाराज जी से कहता है, ''यदि नहीं मानना तो इसमें बैठने के लिये तैयार हो जा।'' महाराज जी कहते हैं, जहां मेरा मालिक बिठाना चाहेगा, बैठ जायेंगे।

जह बिसालहि तह बैसा सुआमी जह भेजहि तह जावा॥
सभ नगरी महि एको राजा सभे पवितु हरि थावा॥

अंग - 993

यहां पर बिठायेगा तो यहां भी बैठ जायेंगे। महाराज जी उठे और वहां पर जाकर ऐसे समाधि लगा ली जैसे ठण्डे रेते पर बैठे हों। देखा कोई हिल-जुल नहीं जाकर समाधि में बैठ गये। चन्दू कहता है - ''ऐसे करो, रेता भर-भर कर इसके सिर पर डालो।'' इस प्रकार कलछा भर-भर सिर पर तपता हुआ रेता फैंके जा रहे हैं।

धन्य गुरु अर्जुन साहिब जी महाराज! साध संगत जी इतना बड़ा जिगर! इतना सब्र (सन्तोष)! जिसका व्यवहारिक अर्थ बता रहे हैं। बहुत बड़ा उदार दिल है।

धारना - रुखां वरगा जेरा पिआरे
लोड़ीदै दरवेसां नूं।

साध संगत जी! कितना महान विशाल दिल है? दरवेशों का जिगर पेड़ों की तरह होता है। कोई काटे जाओ, कोई ईंट, पत्थर मारे जाओ लेकिन वे अपना फल देते ही रहते हैं। इसी तरह का दिल साधुओं का होता है। कष्ट सहन करके भी, अपनी शक्ति का प्रयोग नहीं करते। इस तरह से -

भरि करछे तबि ऊपर पाए।
नहिं कुछ कहयो न अंग डुलाए॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2369

बिल्कुल हल-चल नहीं है। मौन बैठे हुए हैं जैसे शीतल जल का स्रोत हों। कोई धारा शीश पर पड़ रही है। गुरसिख देख रहे हैं। चीख, पुकारें, शोर मच रहा है। चन्दू को दोषी बता रहे हैं। बार-बार आवाजें आ रही हैं, ''चन्दू, तू अपना सर्वनाश कर रहा है। अपनी जड़ें आप खोद रहा है। इतना घृणित कर्म!'' सिपाहियों को हुक्म दे दिया कि इन लोगों को यहां से भगाओ। इन्हें डण्डों से मारो। सिपाही अपने पूरे जुल्म दिखाते हैं। गुरसिखों की टांगों, घुटनों पर डण्डे मारते हैं। महाराज जी ने कहा, ''क्यों मार खाये जा रहे हो। सावधान होकर बैठ जाओ। हमें भी पता है जो कुछ हो रहा है।'' साध संगत जी! इस दृश्य को देखकर उस समय सारा देवलोक हिल गया। इन्द्र का तख्त भी डोलने लग पड़ा। वे देख रहे हैं कि मातलोक में इतना बड़ा सिद्धान्त परिपक्व किया जा रहा है जो आज तक नहीं हुआ। प्राचीन ऋषियों-मुनियों की यदि थोड़ी सी भी अवज्ञा हुई थी तो तुरन्त शाप दे देते थे। वहीं पर ही भस्म कर देते थे। ऐसी महान शक्तियां उनके पास थीं।

धन्य गुरु अर्जुन साहिब जी महाराज! कितना कष्ट दिया जा रहा है! उस समय देवलोकों के देवता भी चक्रित हो गये। आप जी जैसे-जैसे कष्ट में से गुज़र रहे हैं, जय-जयकार हो रही है।

धारना - देव लोकां च जैकारे बोलदे,
हथ बंन्हीं खड़े देवते।

सभी सुरलोक, गन्धर्व लोग, देव गन्धर्व लोक, पितृलोक, इन्द्र लोक, स्वर्ग लोक, कर्मदेव लोक, अजानदेव लोक, प्रजापति लोक, ब्रह्म लोक, शिव लोक, वैकुण्ठ धाम सभी देवताओं सहित विष्णु, ब्रह्मा, शिव जी हैरान हो रहे हैं कि गुरु अर्जुन देव जी महाराज, अकालपुरुष का रूप होते हुए भी दुख को ज़र कर रहे हैं। इतना अपमान सहन कर रहे हैं। आज तक तो इस मात लोक पर ऐसा कोई बहादुर नहीं जन्मा जिसने ऐसे कष्ट सहन किये हों। आमतौर पर समरथ व्यक्ति तो थोड़ा सा अपमान होने पर ही श्राप दे देता है। उसी समय भस्म कर देता है। इनका दिल कितना विशाल है! भाई सन्तोख सिंह जी लिखते हैं -

अजर जरनि की औधि जनाई॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2369

जो ज़र न हो सकता हो, उसे ज़र करके प्रत्यक्ष दिखा दिया।

इते कशट ते नहीं दिखाई।
इन्द्र आदि जेतिक सुर सारे।
चक्रित चित गुरि चलित निहारे॥

'धन्य धन्य' सभि करहिं बखाना।
'इन ते बिना न ऐसो आना।'

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 2369

इनके सिवाय आज तक दुनियां में कोई ऐसा नहीं देखा। सभी शक्तियों का मालिक होते हुए भी, कुछ नहीं कह रहे। दूसरे दिन चन्दू फिर आ जाता है। कहता है, ''कल रेत डालने पर भी कुछ न हुआ, अब बड़ी लोह लाओ।'' छह फुट लम्बी लोह गर्म करवा दी। जब पूरी तरह से लाल हो गई तो उसकी ओर संकेत करते हुए कहता है, ''देख ले आग का रूप बनी हुई है। अभी भी मान जा। अभी भी अवसर है।'' महाराज जी ने कहा, ''जब तुझे एक बार कह दिया कि जो कुछ तू कर सकता है, कर ले। परन्तु हमने वचन नहीं बदलना। न तो किसी का भय मानना है और न ही भय देना है।''

चन्दू क्रोध और घमण्ड में आकर कहता है, ''बैठ जाओ इसके ऊपर।'' सेवादारों को कहता है, ''इसे उठाकर बिठा दो, अब इससे बैठा नहीं जायेगा।'' महाराज जी ने इसे कहा, ''एक तरफ हो जा।'' और स्वयं खड़े हो गये। तपती हुई लोह की ओर कदम बढ़ाया और उस पर ऐसे पैर रख दिया जैसे कुछ हुआ ही न हो। पैरों तले से धुआं निकला। साध संगत जी! तुरन्त दूसरा पैर भी रख दिया और चौकड़ी लगाकर उस पर बैठ गये।

धारना - तपदी लोह ते समाधीआं ला के,
बोलण भाणा मिठा लगदा।

तेरा कीआ मीठा लागै॥
हरि नामु पदारथु नानकु मांगै॥ अंग - 394

हिमालय पर्वत पर जहां बर्फ ही बर्फ पड़ी रहती है। जहां पर कोई भी आदमी नहीं पहुंच सकता, उन गुफाओं में बैठे गोरख नाथ की समाधि टूट जाती है। उसके साथ बैठे सभी साथियों की समाधि भंग हो जाती है। सिद्धों ने कहा, ''गुरदेव! बाहर इतनी बर्फ पड़ी है। पता नहीं जेठ आषाढ़ महीने की गर्मी से अधिक गर्मी यहां पड़ रही है। यह सारे ब्रह्मांड की गर्मी कहां से आ गई?'' गोरखनाथ ने अर्न्तध्यान होकर देखा और कहने लगे, ''नाथो! इस समय गुरु अर्जुन पातशाह एक गर्म-गर्म तवी पर बैठे हैं। वे सारे ब्रह्मांड के मालिक हैं। उससे सारे ब्रह्मांड की गर्मी फैल गई। अब और अधिक गर्मी सहन नहीं होती। उस समय उड़ान भरी और आते ही सभी पहरेदारों को सुला दिया और आप गुरु महाराज जी के सामने आकर खड़े हो गये और इस प्रकार बेनती की, ''महाराज! आदेश! आदेश! पातशाह! यह आप क्या करने चले हैं? आप इतने समरथ हैं कि सारे सिद्ध आपके सामने शक्तियां दिखा-दिखा कर थक गये थे, अब ऐसा कौन पैदा हो गया जो आपको गर्म तवी पर बिठा रहा है।'' महाराज जी ने कहा, ''गोरख नाथ! हम तो सब्र (सन्तोष) का अर्थ बता रहे हैं।''

सबर अंदरि साबरी तनु एवै जालेन्हि॥
होनि नजीकि खुदाइ दै भेतु न किसै देनि॥
सबरु एहु सुआउ जे तूं बंदा दिड़ु करहि॥
वधि थीवहि दीरआउ टुटि न थीवहि वाहड़ा॥

अंग - 1384

महाराज जी ने कहा, ''परमेश्वर शबद में वास करता है। शबद का अर्थ कर रहे हैं। सारी शक्तियों के मालिक होते हुए भी एक अनजान व्यक्ति की तरह बैठ कर दिखा रहे हैं। यदि हम चाहें तो अभी सभी कुछ भस्म कर सकते हैं। लेकिन परमेश्वर की रज़ा को प्रसन्नचित्त होकर मान रहे हैं।'' गोरखनाथ कहता है, ''महाराज! मैं यह नहीं देख सकता। इस चन्दू और इसके साथियों तथा जहांगीर सहित सभी के महल उलट-पुलट कर देता हूँ। ऊपर का हिस्सा धरती की ओर और ज़ड़ (नीचे) वाला हिस्सा ऊपर कर देता हूँ।''

महाराज जी ने कहा, ''गोरखनाथ! यह काम नहीं करना। हम तो यह उपदेश दे रहे हैं। कलयुग में आने वाली नसलों को जो मामूली सा दुख आने पर, डर के मारे अपने नियमों को छोड़ दिया करेंगे। हम तो एक पद चिन्ह छोड़ चले हैं ताकि लोग अपने नियमों पर दृढ़ रहें। गलत कामों की ओर न बढ़ें। सही कामों के लिये यदि शहादत देनी पड़े तो देनी चाहिये।'' इस प्रकार महाराज जी ने समझा बुझा कर उन्हें वापिस भेज दिया। जब मीयां मीर को पता चला तो वह भी बहुत क्रोधित हुआ और गुरु साहिब के पास आता है। उस समय महाराज जी से कहता है, ''सच्चे पातशाह! सारी शक्तियों के मालिक होते हुए, आप यह क्या कर रहे हैं? मुझसे यह सहन नहीं होता।'' इतना कहकर दोनों बाजू ऊपर उठा लीं। महाराज जी ने पूछा, ''मीर जी! यह क्या करने जा रहे हो?'' मीर जी बोले, ''मैं इसकी सजा दिल्ली और लाहौर दोनों को देने जा रहा हूँ।'' महाराज जी ने पूछा, ''मीर जी! लाहौर और दिल्ली ने क्या कसूर किया है?'' वह बोले, ''पातशाह! फिर आप ऐसा क्यों कर रहे हो?'' महाराज जी ने कहा, एक दिन आप आये थे तो आपने प्रश्न पूछा था -

ब्रहमगिआनी कै धीरजु एक॥
जिउ बसुधा कोऊ खोदै कोऊ चंदन लेप॥अंग - 272

आपने कहा था कि ब्रह्मज्ञानी में इतना धैर्य होता है कि चाहे कोई धरती खोदता रहे या कोई उस पर चन्दन का लेप करता रहे, वह हमेशा एक समान रहता है। तूने ऐतराज़ किया था कि ऐसी समवृति होना बहुत कठिन है। हमने तुम्हें जीवन मुक्त के अर्थ समझाये थे।

प्रभ की आगिआ आतम हितावै॥
जीवन मुकति सोऊ कहावै॥
तैसा हरखु तैसा उसु सोगु॥
सदा अनंदु तह नही बिओगु॥ *अंग - 275*

खुशी तथा गमी दोनों अवस्थाओं में आनन्द में रहना है।

तैसा सुवरनु तैसी उसु माटी॥
तैसा अंम्रितु तैसी बिखु खाटी॥
तैसा मानु तैसा अभिमानु॥
तैसा रंकु तैसा राजानु॥
जो वरताए साई जुगति॥
नानक ओहु पुरखु कहीऐ जीवन मुकति॥ अंग - 275

उस समय तुमने शंका जताई थी कि महाराज! यह निश्छल बुद्धि, ब्रह्मज्ञानी तथा जीवन मुक्त के आपने जो अर्थ किये हैं क्या कलयुग में ऐसा जीवन मुक्त हो सकता है जो इन अर्थों का पालन करेगा? यही प्रश्न अर्जुन ने श्री कृष्ण से पूछा था, ''निश्छल बुद्धि व्यक्ति की क्या पहचान होती है?'' यह जो बात हुई थी, गुरु नौंवे पातशाह ने उसका हू-ब-हू अर्थ किया है।

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै॥
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै॥
नह निंदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहु अभिमाना॥
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना॥
आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा॥
कामु क्रोधु जिह परसै नाहिनि तिह घटि ब्रहमु निवासा॥
अंग - 633

''जीवन मुक्त के यह अर्थ थे। अब तुम जीवन मुक्त और ब्रह्मज्ञानी के व्यवहारिक अर्थ देख लो और समझ लो। कोई भी शक्ति प्रदर्शित नहीं करनी। अकालपुरुष की रज़ा देख। आपने कुछ नहीं कहना। कल हमारा अन्तिम दिन है। यह सब अपने आप ही खत्म हो जायेगा, तुम क्यों दुखी हो रहे हो? हमारा जाने का समय आ गया है।'' उस समय इस प्रकार महाराज जी ने अर्थ समझाये।

धारना - जीवन मुकत दे रथ,
मीआं मीर करे बंदना।

इस प्रकार नमस्कार करके चला जाता है। धन्य गुरु अर्जुन! धन्य गुरु अर्जुन! आप जैसा न तो कोई संसार में हुआ है और न ही होगा। ऐसा कहता हुआ, नमस्कार करता हुआ चला जाता है। साध संगत जी! उस समय पृथ्वी भी डोलने लगी, चन्द्रमा भी डोलने लगा, सूरज डोलने लगा, परन्तु जो पापी चन्दू है, अभी तक भी इसका मन नहीं डांवाडोल हुआ। बल्कि सोच रहा है कि अब मैं और क्या करूं? जिससे इन्हें मानना पड़ जाये। इसके बाद एक गाय मरवाता है, उसकी चमड़ी उतरवा लेता है। उस चमड़ी को दिखाते हुए अगले दिन फिर गुरु महाराज जी से कहता है, ''अब भी मान जाओ मेरी बात, वरना इस खाल के अन्दर मढ़वा दूंगा। संसार से बे-दीन होकर जाओगे। अभी भी मौका है, मान जाओ।'' उस समय महाराज जी ने देखा कि जाने का समय बहुत नज़दीक आ गया है, कहते हैं, ''हम रावी में स्नान करना चाहते हैं।'' चन्दू ने सोचा कि अब मेरी बात मान लेंगे। पांच सिहों, दस पन्द्रह बीस पहरेदारों को साथ भेजकर, गुप्त रास्ते द्वारा रावी की ओर भेज देता है। सिपाहियों को समझा दिया कि पूरा-पूरा ध्यान रखना है। दूर-दूर तक पहरे लगा दिये। उस समय पांचों गुरसिखों को पास बिठाया और बोले, ''प्रेमियो! तुमने घबराना नहीं है। इसे दाता द्वारा भेजी हुई दात समझ लो।''

धारना - इह भाणा दाते दा,
असीं मंनणै मिठा करके।

महाराज जी ने कहा, ''गुरमुखो! यह अकालपुरुष की रज़ा (भाणा) हमने प्रसन्नतापूर्वक हंसी-खुशी मानना है। किसी को बुरा नहीं कहना। किसी के खिलाफ कुछ भी बुरा नहीं चितवना।''

जो किछु वरतै सभ तेरा भाणा॥
हुकमु बूझै सो सचि समाणा॥ *अंग - 193*

जो उसकी रज़ा को मान लेता है, वह उसी में समा जाता है। महाराज जी ने स्नान किया और चौकड़ी लगाकर बैठ गये। कुश का आसन मंगा लिया। जपुजी साहिब का पाठ पूरा करके, ऊपर वस्त्र ओढ़ लिया।

उस समय महाराज जी ने फरमान किया कि हमारा संस्कार नहीं करना और यहीं पर ही जल में प्रवाह कर देना है। आपने अपने ऊपर चादर डाली और लेट गये। फिर शरीर को ऐसे छोड़ दिया जैसे सांप कैंचुली को छोड़कर चला जाता है।

गुरमुखि आवै जाइ निसंगु॥ *अंग - 932*

गुरु महाराज जी ने इस प्रकार आज के दिन एक महान कौतुक दिखा दिया। अकेले ईसा जी को सूली पर चढ़ाया गया था। उन पर बहुत जुल्म हुआ था। जिस सूली पर चढ़ाया जाना ता, वह उनसे उठवाई गई जो बहुत भारी थी। जिस शरीर पर उसे गाढ़ना था, चलना मुश्किल हो रहा था। बेहोश होकर गिर जाते थे। हन्टरों वाले ज़ोर-ज़ोर से हन्टर मारते थे। फिर उठाकर चल पड़ते थे। उनके साथ, 12 चेले जो थे वे भी जवाब दे गये थे। अकेले रह गये थे। लेकिन इसाई कौम केवल एक शहीदी देकर महान बन गई। जब उनका कोई प्रोग्राम देखते हैं, मैंने अमेरिका में देखा था, जब वे इस घटना का उल्लेख करते हैं, तो उस समय सभी श्रोताओं के नेत्रों में आंसू आ जाते हैं। टैलिविजन पर मैंने देखा कि उन सब की आंखों पर रूमाल होते। चाहे हज़ार बैठे हों या दस हज़ार सभी के नेत्रों से प्रेम आंसू गिर रहे होते हैं। मैं मन ही मन कहता कि देखो इनका कितना प्यार है।

हमारे यहां तो शहीदियों का कोई अन्त नहीं है। कहीं तो नीवों में चिने जा रहे हैं, कहीं युद्ध में शहीद हो रहे हैं, कहीं चांदनी चौंक में शहीदी दे रहे हैं, कहीं गर्म तवों पर बिठा कर शहीद हो रहे हैं, अफसोस होता है कि हमारे दिलों से दर्द की एक चीख भी नहीं निकलती। वही झगड़े, झन्झट, लड़ाईयां, मास, शराब, कबाब छोड़ने को तैयार ही नहीं होते। हमारा गुरु के साथ प्यार नहीं है। ईसाई हुक्म मानते थे अत उन्होंने सारी दुनियां पर राज भोग किया उनका भी हमारी तरह ही हाल था। उन्हें भी कोई टिकने नहीं देता था। सभी राज्यों से खदेड़ दिया गया। आज यदि जर्मनी, अफ्रीका और इंगलैंड ऊंचे उठे हैं तो केवल इसलिये कि उन्होंने अपने रहबरों को मान्यता दी। हमने अपने रहबर का मान नहीं किया। साध संगत जी! गुरु अर्जुन साहिब जैसा बनना है तो बनो -

धारना - गुरां वरगा ना जगत उते होइआ,
आखो धंन गुरू अर्जुन जी।

आप जी ने जो अद्वितीय शहीदी संसार के कल्याण के लिये, जुल्मों का खातमा करने के लिये, विशेष नियमों को कायम रखने के लिये दी, अतः आप सभी शहीदों के सरताज कहलाये। आज आप सभी प्यार से उनकी याद मना रहे हो। गुरु ग्रन्थ साहिब में, गुरु महाराज गुरु अर्जुन पातशाह का फरमान है -

जपिओ जिनि अरजुन देव गुरू
फिरि संकट जोनि गरभ न आयउ॥ अंग - 1409

उसके सभी संकट समाप्त हो गये। ईसा जी को जब सूली पर चढ़ाया जा रहा था तो उस समय उन्होंने आवाज़ दी - ''इसाईयो! जितने भी तुम यहां खड़े हो और जितने तुम्हारे पीछे आयेंगे, उनके भी और उनसे भी जो बाद में आयेंगे, उनके भी पाप, मैं अपने शरीर पर सहन करके, तुम्हें सदा के लिये सुखी करके जा रहा हूँ।'' इसी प्रकार गुरु अर्जुन पातशाह ने हमारे कितने पापों का खातमा कर दिया। जिसने भी उन्हें जप लिया भाव उनकी बाणी को जप लिया, सुखमनी साहिब पढ़ लिया - कहते हैं फिर वे -

.... संकट जोनि गरभ न आयउ॥ अंग - 1409

न तो उस पर कोई संकट आ सकता है और न ही वह गर्भ यौनि में जायेगा। इस प्रकार आप गुरु महाराज जी की याद में बैठे, उनकी याद मना रहे हो। एक झांकी उनके सारे जीवन की पेश की थी। कुछ इतिहासकारों द्वारा गलतियां हो जाती हैं। अतः कुछ अटपटी बातें लिख देते हैं जैसे किसी इतिहासकार ने लिखा कि अन्त समय गुरु महाराज जी ने गुरसिखों को कहा, ''सिखो! गुरु हरगोबिन्द साहिब को कहना कि हमारी शहीदी का बदला लें। ऐसे ही हाथ पर हाथ रखकर न बैठें।'' ये मनमत और मन घड़न्त बातें होती हैं। ज़रा सोचो, वह जो गुरु है वह तो यह कह रहे हैं -

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाइ॥
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ॥ अंग - 1381

ववा वैरु न करीऐ काहू॥
घट घट अंतरि ब्रहम समाहू॥ अंग - 259

भाई गुरसिख घनइया तो पानी पिलाने में भी किसी से वैर नहीं रखता तो क्या गुरु यह कहेंगे कि वैर का बदला लेना। बदलना लेना तो छोटे लोगों का काम हुआ करता है। आमतौर पर जाट मरते समय अपने पौत्र को कहा करते हैं - ''पुत्र तो बदला न ले सका, पर तू दृढ़ रहना। याद रखना इससे हमने सात पुश्तों तक बदला लेना है।'' गुरु महाराज जी ने हमें इन बदले की भावना से दूर कर दिया। नेकी सिखा दी। बुरे का भी भला करना सिखा दिया। महाराज जी कहते हैं - बदला कौन लिया करता है।

जेहा बीजै सु लुणै करमा संदड़ा खेतु॥ अंग - 134

जो कर्म किये गये हैं, वे बदला लेते हैं। अपने आप ही लेते हैं।

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥
अंग - 433

- आनन्द साहिब -

- गुर सतोतर -

आवश्यक निवेदन

रिन्युवल का चन्दा भेजने के लिए मेंबरशिप नम्बर (सदस्यता संख्या) तथा रिन्युवल तारीख (पुनर्नवीनीकरण तिथि) का ब्यौरा अवश्य दिया जाए तथा यह भी बतलाया जाए कि चन्दा, रिन्युवल के लिए है अथवा नई मेंबरशिप प्राप्त करने के लिए प्रेषित किया गया है।

यदि किसी प्रेमी पुरुष ने आत्म मार्ग मैगजीन के लिए चन्दा जमा करवाया हो और उसे मैगजीन न पहुँच पा रहा हो, तो उसे जमा करवाई गई रकम का रसीद नम्बर आदि लिखकर आत्म मार्ग कार्यालय से सम्पर्क करना चाहिए।

'आत्म मार्ग' एक धार्मिक मैगजीन है, इसके अन्तर्गत श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी छपी हुई होती है, इसलिए समस्त पाठक बन्धुओं से अनुरोध है कि कृप्या इसका प्रयोग रद्दी पेपर की भांति न किया जाए। यदि आप पुराने मैगजीन को रखना नहीं चाहते हैं तो उन्हें हमारे किसी भी वितरण केन्द्र पर सहर्ष वापिस कर सकते हैं।

बाबाणियाँ कहानियाँ

सन्त वरियाम सिंह जी
संस्थापक वि. गु. रू. मिशन

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, अंग - 14)

2. मन्द वैराग - दूसरी प्रकार का वैराग्य जिसे मन्द वैराग्य कहते हैं। इस वैराग्य का कारण, कार्य के भय की वज़ह से घर छोड़ कर भाग जाना या किसी साथी का वियोग हो जाना या व्यापार में घाटा हो जाना, उस समय चित्त दुनियां से उचाट होकर सोचता है कि मैं परमात्मा का ही नाम जपूं, किसी महापुरुष का चेला बन कर अपना जीवन सफल करूँ। जिसके बारे में ऐसा महापुरुषों का फ़रमान है -

नार मरै घर संपत नासी।
मूंड मुंडाइ भइआ संनिआसी॥

या कथा में जाकर सुन लेना कि जगत मिथ्या है, इसकी सभी चीज़ें नाशवान है या पदार्थों की कमी हो जाने के कारण वैराग्य हो जाना; उस वैराग्य को मन्द वैराग्य कहा जाता है। यह सदा कायम नहीं रहता। जैसे ही विषय भोग प्राप्त हो जाते हैं यह फिर गिर जाया करता है। जैसा कि महापुरुषों का फ़रमान है -

आइआ बुल्ला पउण दा
चड़िआ कख अकाश।
ढहिंदा ढहिंदा ढहि पिआ
कख कखां दे पास।

गुरयद्व वै

बाणी में फ़रमान आया है -

फिरदी फिरदी दह दिसा
जल परबत बन राइ।
जिथै डिठा मिरतको
इल बहिठी आइ॥ *अंग - 322*

ऐसा भी फ़रमान आता है -

छाणी खाकु बिभूत चड़ाई
माइआ का मगु जोहै।
अंतरि बाहरि एकु न जाणै
साचु कहे ते छोहै।
पाठु पड़ै मुखि झूठो बोलै
निगुरे की मति ओहै।
नामु न जपई किउ सुखु पावै
बिनु नावै किउ सोहै॥
मूंडु मुडाइ जटा सिख बाधी
मोनि रहै अभिमाना।
मनूआ डोलै दहदिस धावै
बिनु रत आतम गिआना। *अंग - 1013*

ऐसा भी फ़रमान है -

हाथ कमंडलु कापड़ीआ
मनि त्रिसना उपजी भारी।
इसत्री तजि करि कामि विआपिआ
चितु लाइआ पर नारी। *अंग - 1013*

पूंअर ताप गेरी के बसत्रा।
अपदा का मारिआ ग्रिह ते नसता।
देसु छोडि परदेसहि धाइआ।
पंच चंडाल नाले लै आइआ॥ *अंग - 1348*

3. एक इन्द्रिय वैराग्य - तीसरा वैराग एक इन्द्रिय वैराग्य होता है। वह वैराग्य ऐसा होता है कि मन में तो विषय विकार अपना प्रभाव दिखाते रहते हैं और मन भोगों की प्राप्ति के फुरने करता रहता है पर शारीरिक तौर पर बचा रहता है जिसके बारे में फ़रमान है -

मोनी होइ बैठा इकांती
हिरदै कलपन गाठा।
होइ उदासी ग्रिहु तजि चलिओ
छुटकै नाही नाठा॥ *अंग - 1003*

4. यतमान वैराग - इसके लक्षण यह हुआ करते हैं कि महापुरुषों के मुखार विन्द से यह श्रवण करना कि संसार नाशवान है, संसार की वस्तुएं नाशवान हैं। पारिवारिक मोह, प्रभु प्राप्ति में बन्धन रूप होकर प्रयोग करते हैं। जीव का परम मनोरथ इसी जन्म में प्रभु की प्राप्ति है जैसा कि फ़रमान है -

भई परापति मानुख देहुरिआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।

अवरि काज तेरै कितै न काम।
मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥
सरंजामि लागु भवजल तरन कै।
जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥ अंग - 12

ऐसा वचन सुनकर नाशवान चीज़ों से मुँह मोड़ लेना और सत्य वस्तु प्रभु का नाम, गुरू का प्यार और वाहिगुरू के मिलन की लालसा मन में रख कर और झूठी वस्तुओं का त्याग कर देना जैसा कि विचार है -

कहत कबीर चेति रे अंधा।
सति रामु झूठा सभु धंधा॥ अंग - 326

5. वितरेक वैराग्य - यह वैराग्य सहज ही आता है। महापुरुषों की संगत में जाकर इस बात का निर्णय होता है कि गलत काम करने से शान्ति प्राप्त नहीं होती। आदमी के अवगुण उसके हाथों तथा पैरों में हथकड़ियां तथा बेड़ियां बन कर नरकों में ले जाते हैं। सतगुरू की बाणी पर विचार करना तथा बुरे कामों से बचकर सेवा सत्संग शुरू करना। जीवन को वैरागमयी बनाना वितरेक वैराग्य कहलाता है। कोशिश करके गुण धारण करना तथा अवगुणों को अन्दर से निकाल देना क्योंकि ऐसा निश्चय परिपक्व हो जाया करता है कि दरगाह में जाकर पाप करने वाले को लेखा जोखा देना पड़ता है। जैसा कि फ़रमान है -

लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी।
तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी।
संन्ही देन्हि विखंम थाइ मिठा मदु माणी।
करमी आपो आपणी आपे पछुताणी।
अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी॥ अंग - 315

इस निश्चय से यह प्रत्यक्ष भासित होना कि -

ओथै खोटे सटीअहि खरे कीचहि साबासि।
बोलणु फादलु नानका दुखु सुखु खसमै पासि॥
अंग - 146

और इन महावाक्यों को पूर्ण निश्चय के साथ अन्दर धारण करना जैसे कि-

नानक जीअ उपाइ कै
लिखि नावै धरमु बहालिआ।
ओथै सचे ही सचि निबड़ै
चुणि वखि कढे जजमालिआ।
थाउ न पाइनि कूड़िआर
मुह काल्है दोजकि चालिआ।
तेरै नाइ रते से जिणि गए
हारि गए सि ठगण वालिआ।
लिखि नावै धरमु बहालिआ॥ अंग - 463

6. वसीकार वैराग्य - इसमें महापुरुषों के वचन सुनकर अपने अन्दर आसुरी शक्तियों के योद्धाओं के साथ हर समय युद्ध करना तथा उनकी मार से उनके छिप कर करने वाले हमलों से सदा ही सावधान रहना। जागरूक रहते हुये, सत्संग की ओट धारण करके और महापुरुषों की संगत करके इन दुष्टों, काम, क्रोध, लोभ मोह, अहंकार से अपने आप को बचाना तथा कोशिश करना कि इन्हें वश में कर लिया जाये। ऐसे विचार जो विषयों से बचायें उन पर सदा विचार करते रहना।

पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र। अंग - 274

करन न सुनै काहू की निंदा।
सभ ते जानै आपस कउ मंदा। अंग - 274

मिथिआ स्रवन पर निंदा सुनहि।
मिथिआ हसत परदरब कउ हिरहि।
मिथिआ नेत्र पेखत पर त्रिअ रूपाद।
मिथिआ रसना भोजन अनस्वाद।
मिथिआ चरन पर बिकार कउ धावहि।
मिथिआ मन पर लोभ लुभावहि।
मिथिआ तन नही परउपकारा।
मिथिआ बासु लेत बिकारा।
बिनु बूझे मिथिआ सभ भए।
सफल देह नानक हरि हरि नाम लए॥
अंग - 269

इन महावाक्यों पर विचार करके हृदय में धारण करना तथा उसके अनुसार अपने मन को काबू में करके प्रभु का सुमिरन करना, सेवा करना, गुरू शब्द की कमाई करना।

7. तीव्र वैराग्य - दुनियाँ के सभी सुखों को छोड़कर केवल वाहिगुरू जी के मिलन की प्रबल इच्छा तीव्र वैराग्य कहलाया करती है। ब्रह्ममुहुर्त में उठकर आलस्य का त्याग करके स्नानादि करके नितनेम के अनुसार सुमिरन करना, बाणी पढ़ना और सत्य पुस्तकों पर विचार करना जिनसे माया के बन्धनों से छुटकारा मिल सके और प्रभु के साथ प्यार जाग्रत हो। यह वैराग अति उच्च हुआ करता है। इस वैराग्य में महापुरुषों की लालसा सदा बनी रहती है।

8. तर तीव्र वैराग्य - यह वैराग उस प्रेमी को प्राप्त होता है जिसने निर्णय पूर्वक जान लिया कि दुनियाँ के अन्दर प्राप्त होने वाला बड़प्पन, मायिक सुख, मित्रों दोस्तों की संगत आदि दरगाह में काम नहीं आया करतीं। इन सारी चीज़ों को परम पद की प्राप्ति के लिये निश्चय पूर्वक विघ्नकारी समझना और साधु की संगत की हर समय इच्छा रखना।

महापुरुषों की संगत में तत्व वचन सुनने तथा नितनेम, बन्दगी करना, सेवा करना, सत्य शास्त्रों की विचार करना, हर समय अपने मन को प्रभु के प्यार में लीन रखना और दुनियाँ की ओर अपने मन का रुख बिल्कुल ही न आने देना। न स्वर्ग की आशा मन में रखना, न ही पुरियों के भोगों की वासना को मन में रखना, इसके विपरीत चरण कमलों की मौज में अपना जीवन लगाने के लिये अपनी पूरी ताकत लगाना। महापुरुषों के साथ प्यार करना तथा उनकी आज्ञा में रह कर जीवन व्यतीत करना। सांसारिक उपलब्धियां, बड़प्पन सभी सपने की तरह समझना, यह वैराग्य बहुत उच्च कोटि का हुआ करता है।

कबीर सुरग नरक ते मै रहिओ
सतिगुर कै परसादि।
चरन कमल की मउज महि
रहउ अंति अरु आदि॥ *अंग - 1370*

9. तर तीव्र तर तम वैराग्य - इस वैराग्य को पूर्ण वैराग्य कहा जाता है। जिस समय मृत्यु लोक की धरती से लेकर ब्रह्म लोक तक प्राप्त होने वाले सुखों को कौवे की विष्ठा के समान समझ कर पूर्ण रूप में त्याग करना।

ब्रहमा इंद्र आदि लौ होत देह धर भोग।
काक बिशटा सम जे गिने बीतराग ते लोग।
अधिआतम प्रकाश

तथा विचार सागर में महापुरुषों ने इस सारे विषय पर विचार करके फ़रमान किया है -

ब्रहम लोक लौ भोग जो चहै
सभन को तिआग॥
बेद अरथ गिआता मुनी
कहित ताहि बैराग॥ *विचार सागर*

विवेक और वैराग्य मन में धारण किये बिना परमार्थ के रास्ते पर चलना अति कठिन है। क्योंकि सांसारिक प्राप्तियां, दुनियां की जय जय कारें, स्वार्थियों के झुरमुट, जिज्ञासु को परमार्थ के रास्ते पर चलने में भारी रुकावट डालते हैं। विवेक वृत्ति निर्णय करती है, सत्य की प्राप्ति के लिये प्रकाश देती हैं, उत्साह प्रदान करती हैं। वैराग्य माया के पड़े हुये बन्धनों को तोड़ता है।

वैराग के वशीभूत हुये असंख्य साधक, सिद्ध पीर, औलिए, साधु, सन्त सांसारिक झमेलों को पीठ दिखाकर कठिन संघर्ष कर करके परम पद की प्राप्ति के अधिकारी बन गए। इस प्रकार की अन्य रूहानी सीढ़ियां जिन पर जिज्ञासु को चढ़ कर उच्च अवस्था की प्राप्ति करने के लिये अपनी चढ़ाई करनी पड़ती हैं जिनमें से षटमति, जिसके बारे में विचार सागर में बताया गया है -

सम, दम, श्रद्धा तीसरी समाधान उपराम॥
छठी तितिकशा जाणीए भिंन भिंन इह नाम॥
विचार सागर

इनकी व्याख्या महापुरुष हर समय करते रहते हैं।

चार अन्तरीव साधन हैं जिन्हें सुनना, मानना, निधि-आसन तथा प्राप्ति कहते हैं। महापुरुष इसकी विचार विस्तार पूर्वक सदा ही अपने सत्संग में करते रहते हैं। महापुरुषों का जीवन पूर्ण रूप पर सत्य पर आधारित हुआ करता है जिसमें दिखावे के दाखिल होने की तनिक भी गुंज़ाइश नहीं है वह सदा ही प्रभु प्यार में लीन रहते हैं। वह प्रभु की रज़ा में आनन्दित रहते हैं। वह किसी के आगे हाथ नहीं फैलाते, न ही माया इकट्ठी करने के लिये कोई कार्यक्रम बनाते हैं। वे तो प्यार में ही लीन रहते हैं। एक कवि ने इस अवस्था को इस प्रकार समझाया है कि प्रभु प्यारों के हृदयों में सदा ही विनम्रता का वास होता है जो उनका सबसे बड़ा आभूषण (गहना) हुआ करता है। वह सभी में एक ही प्रभु को देखते हैं। द्वैत की दृष्टि उनके अन्दर से समाप्त हो जाती है जैसा कि -

चोला पहिर गरीबी दा जग,
संत सुखाले होए।
न किसे रंज न आप रंजीवन
मरन थी आगे मोए।
निंदा क्रोध नूं दई विदैगी
बाद बिबाद सभ खोए।
लाल लद्धा लै पले बद्धा
दास सेवा चरन तिन धोए।
हरदम खालक याद जिन्हां नूं
किउं कढण लोकां दीआं काणां।
हथ जिन्हां दे पारस चड़िआ
किउं मंगण दाणा दाणा।
जो चितवण सो साहिब मंने
सभ करे तिन्हां दा भाणा।
ओह रब्ब दे ते रब्ब ओहनां दा
जिन्हां छड्डिआ हभो माणा।

ऐसी अवस्था महापुरुषों की होती है।

'चलता'

प्यारे महापुरुषों का प्यारा जीवन

नोट - विश्व गुरमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट के संस्थापक सन्त महाराज ब्रह्मलीन श्रीमान संत बाबा वरियाम सिंह जी रतवाड़ा साहिब वालों के शरीर का जन्म, माता इन्द कौर जी की कोख से, पिता जत्थेदार करतार सिंह के घर, नगर धमोट, तहसील पायल, जिला लुधियाना (पंजाब) में 17 जून 1918 को हुआ। महापुरुषों ने अपने जीवन के सम्बन्ध में अपने 83वें जन्म दिन पर स्वयं अपने प्रवचनों के रूप में कथन की है। उस जीवन कथा को टेप रिकार्डर में से हू-ब-हू उतार कर संगत की जानकारी के लिए, आत्म मार्ग पत्रिका में प्रकाशित करने की खुशी ले रहे हैं।

सम्पादक आत्म मार्ग

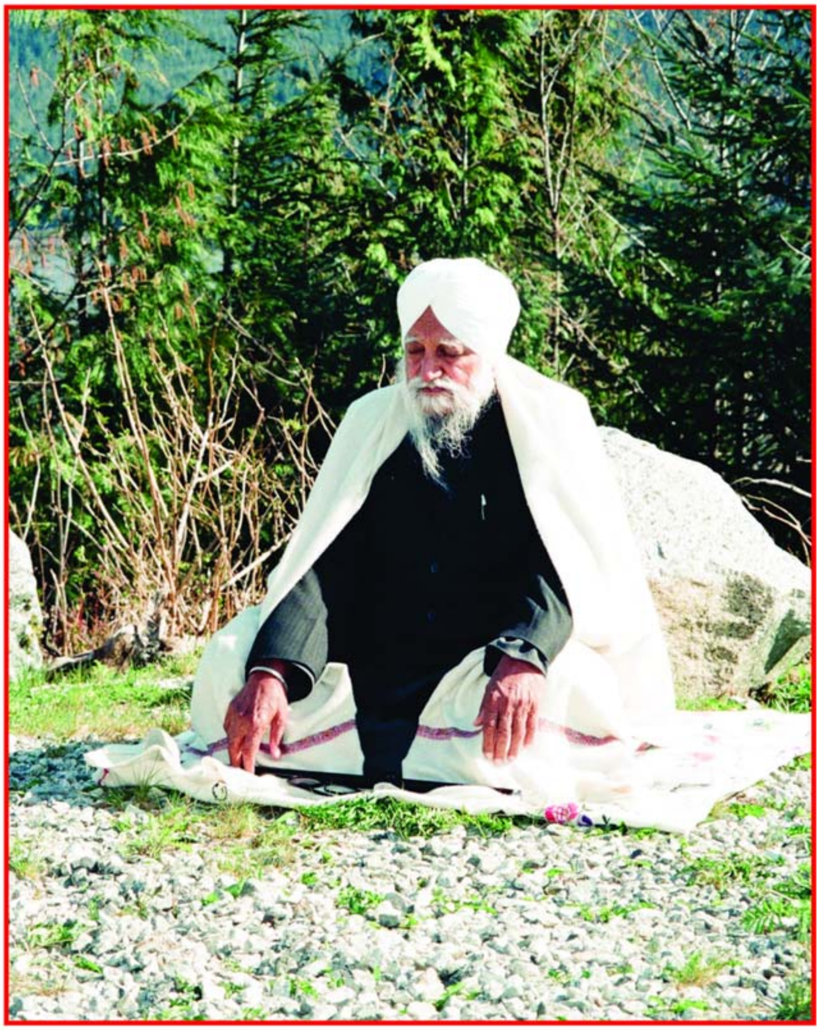

सन्त महाराज - रतवाड़ा साहिब 'आत्मानन्द में'

मुझे बोलने के लिए कहा है, मुझे तो पता ही नहीं लगता कि मैं क्या कहूँ? आप सभी इकट्ठे होकर प्यार दे रहे हो। आयु तो अपने हिसाब से चलती जाती है, समय रोकने से रुकता नहीं है।

इह ठहिरन जाच ना जाणदा
लंघ गिआ न मुड़ के आंवदा।

डा. भाई वीर सिंह जी

परन्तु इसमें कुछ तरीके होते हैं, कुछ बातें होती हैं, जो संसार को रास्ता दिखाती हैं, स्वयं के लिये भी बहुत कुछ होता है। शरीर तो सदैव ही नाशवान होते हैं। ये रहते ही नहीं हैं -

बुढा होआ सेख फरीद कंबण लगी देह।
जे सौ वरिआं जीवणा भी तन होसी खेह।
अंग - 1380

वास्तविक निशाना तो यही है कि संसार से एक दिन जाना ही जाना है। परन्तु संसार बहुत प्यारा लगता है। आप सभी कितने प्यार में आए हो। विदेश से टैलीफोन आए हैं कि आज अखंड पाठ करवाया है, आज कीर्तन करवा रहे हैं कि आज 17 जून है, मैंने कहा कि तुम्हें भी पता लग गया 17 जून का? कहने लगे, हाँ जी। मुझे 17 जून का पता नहीं था, मुझे तो 20 जून का पता था, क्योंकि मेरे पासपोर्ट पर भी 20 तारीख लिखी हुई है। परन्तु इस बीबी दविन्द्र कौर ने पुराने कागजों में से ढूँढ़ लिया है। आप सभी ने मुझे बहुत प्यार किया है। इतना ज्यादा प्यार किया है कि मैं तुलना करता हूँ, यहाँ जो मेरे साथ प्यार है आपका उस में कोई मतबल छिपा हुआ नहीं है। मैंने कौन सा आपको कोई जायदाद देनी है, यह तो परमेश्वर की ओर से ही प्यार है। छोटे-छोटे बच्चे भी प्यार करते हैं, बहनें (महिलाएं) प्यार करती हैं, भाई करते हैं। जब ऐसा देखता हूँ कि इनके मनों में बहुत प्यार है और जहां मैंने जाना है क्या वहां इतना ही प्यार होगा? वहां तो मैं किसी को जानता नहीं हूँ। वहाँ तो एक से बढ़कर एक हैं -

इक दू इकि चड़दीआ
कउणु जाणै मेरा नाउ जउ॥ *अंग - 762*

परन्तु फिर भी मेरे मन में बड़ी जबदस्त आशा है कि दुनियां में एक प्यार मैंने देखा है, जिसे प्यार कहा जाता है। मैं उतना प्यार नहीं निभा सका जितना मुझे निभाना चाहिए क्योंकि मैंने लेना ही नहीं था। संत महाराज ईशर सिंह जी राड़ा साहिब को मैं इस तरह नहीं मिला था -

एकु जु साधू मोहि मिलिओ
तिनि लीआ अंचलि लाइ॥ *अंग - 1368*

मैं उन्हें देखकर खिंचता चला गया, वैसे मैं वहाँ जाता नहीं था क्योंकि बहुत से संतों के पास बचपन से ही घूमता था। मुझे तो चार वर्ष की आयु से ही पता था कि संत क्या होते हैं? उनके प्रभाव मेरे मन में होते थे। ईश्वर की कृपा से मेरी पिछले जन्म की याददाश्त खत्म नहीं हुई थी। वहीं एक जगह स्थिर रही, पहले तो वह साफ ही नहीं हुई, एक भ्रांति लगती थी, वह इस प्रकार कि जब मैं छोटा था, मुझे भगवा भेष के साधु नजर आते रहते थे। मैंने अपनी माता को बताना कि मुझे साधू नजर आते हैं, तो माता ने कहा कि जो तुम्हारा बड़ा भाई था, जो स्वर्ग सिधार गया है, उसे भी दिखाई देते थे। कहने लगी कि तुम्हें साधू ही नजर आते रहते हैं। मैंने कहा मुझे कहते कुछ नहीं हैं, आते हैं मेरे पास और चले जाते हैं। ये सब पिछले जन्मों के अपने-अपने संयोग होते हैं। इस जन्म में यदि मैं यह बात कह दूँ कि मुझे अक्ल नहीं है, यह बात मैं बिल्कुल सच्चाई से कहता हूँ। संसार की अक्ल मुझे बिल्कुल नहीं है, वैसे रूहानी है। यह अक्ल नहीं है कि संसार में कैसे बर्ताव करना है, परिवार में कैसे रहना है, रिश्तेदारी में कैसे रहना है, यह अक्ल मुझे बचपन से ही नहीं आई। यह तो मैं अब सोचता हूँ, पहले तो सोचता ही नहीं था कि यहां किसी के मन में नहीं है कि संसार का उद्धार हो जाये, गुरू की ओर लग जाएं, संसार का भला हो जाए तो फिर मुझे क्यों फिक्र पड़ा हुआ है संसार का। फिर मुझे स्वयं ही उत्तर मिल जाता है कि तुम समझदार नहीं हो, तुम्हें जीवन को जीना नहीं आया है। क्योंकि मेरा सारा जीवन ऐसे ही व्यतीत हुआ है। मुझे यह जो कार्य मिला है, यह बड़ी मुश्किल अदायगी थी, कोई आसान नहीं था। पिछले जन्म का मुझे पता था, बड़ा अच्छा जन्म बीता था, एकांत में, यहीं पास में ही आपके नजदीक है, बरोटी वाला। यहां मैं अकेला नहीं था, तुम्हारे बीबी जी भी थे।

वहाँ बड़े बुजुर्ग बताते हैं कि यहां एक संत रहता था, जब मैंने उनको निशानियां बताईं कि वहां एक वट का वृक्ष है, पास में एक कुआं था, रास्ता पहाड़ी को चढ़ता था। कहने लगे हां जी! वहाँ एक धूनी होती थी, वहाँ बहुत संत आते थे और उनकी भोजन पानी की सेवा एक बीबी करती थी। उसने सारी उम्र शादी नहीं करवाई थी। हमारे गांव में आज भी उसकी मान्यता है। हम उस बीबी को मानते हैं। अत: वह जन्म जो था, वह तो ऐसे ही बीत गया। न किसी को देना, न लेना, न कोई डेरा बनाना, न ही कोई लंगर चलाया, आ गया भोजन और खा लिया और बैठे रहते थे। एक कपीन पहनी होती थी, सिर पर जटाएं होती थीं, हमारे सामने धूनी जलती रहती थी। वही मुझे अब इस जन्म में नजर आती थी। महाराज जी ने देख लिया। जब मैं महाराज जी को पहली बार मिला, इससे पहले तो मैं मिलता ही नहीं था। वैसे मेरा प्यार उनके साथ बाल्यावस्था से ही था। हमारे यहां बहुत से संत आते थे। उनके संस्कार हमारे ऊपर पड़ते थे। क्योंकि दुनियां में ख्याल चलते हैं। उस समय महाराज जी की शारीरिक आयु बहुत कम थी, अभी जो सीनियर संत थे, वे यह मानने को तैयार नहीं थे, कि यह बहुत बड़ी रूह है। किसी-किसी ने उन्हें माना था, परन्तु वे भी बहुत तप वाले थे, आपने बहुत भारी तपस्या की थी। जब मैं उनको मिला, तो उस समय भी भ्रम में ही पड़ा रहा। दूर से ही दर्शन कर लिये, और सोचा कि पास में जाकर क्या दर्शन करने हैं। उस समय आयु छोटी थी, स्कूल से पढ़कर हटा था। मेरी माता जी को पता था कि यह भटक रहा है, संतों के पीछे। जब किसी के बारे में सुनता है, तो चुपके से घर से निकल जाता है। घरवाले मुझे कभी भी रोकते नहीं थे क्योंकि उन्हें पता था कि यह कोई भी बुरा काम नहीं करता। वे सोचते थे कि होगा किसी संत के पीछे, कीर्तन सुन रहा होगा, बैठा होगा कहीं आँखें बंद करके। वे मेरी ओर से बेफिक्र थे। मेरे पिता जी मुझे कहते थे कि यदि तुम मेरे पुत्र न होते तो मैं प्रतिदिनि तुम्हें माथा टेकता। मैं इन बातों का कभी कोई ध्यान नहीं करता था। मैं सोचता था कि यह तो ऐसे ही बात है। अत: मेरी माता जी इस बात का ध्यान रखते थे कि इसे कोई पूरा संत मिल जाये तो अच्छा है। अभी तक तो यह ऐसे ही संतों के पिछे फिर रहा है। कभी वहां चला गया, उसके वचन सुन लिये, कभी किसी का कीर्तन सुन लिया। सारी-सारी रात सुनता रहता है। माघ के महीने में वे मुझे राड़ा साहिब ले गये, जब महाराज जी ढक्की से आ गये थे। हम ढक्की में पहले भी कीर्तन सुनने जाते थे। परन्तु पास होने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ था। दूर से ही कीर्तन सुनते थे। कुछ बात यह भी थी कि महाराज कम ही किसी को मिलते थे, वे ज्यादा किसी को मिलते ही नहीं थे।

अत: जिस समय माता जी अन्दर गए, मैं बाहर ही खड़ा रहा, वे फिर से आए और कहा, आ जा सन्त जी के दर्शन कर ले। मैंने कहा कि वे जब यहां से जा रहे थे, मैंने दर्शन कर लिये। वह फिर उठ कर आए और कहा कि तुम उनके सामने चलो। तीसरी बार तो उन्होंने मेरी बाजू पकड़ ली, वे बहुत तगड़ी थीं, जमींदारों की बेटी थी, पूरी बोरी तक वे उठा लेती थीं। उनके सामने मेरी ताकत नहीं थी। उन्होंने मुझे झटका मारा, वहां एक दीवार में एक मोरी थी, मेरा हाथ उस पर पड़ गया, उन्होंने फिर झटका मारा, तो मैं खींचा न गया, फिर झटक कर कहा कि देखो तो कितना जोर है! मेरा हाथ छुड़ा दिया और कहा सीधे हो कर चलो। संतों के दर्शन कर। इतना कहने तक ही मेरी भावना बन गई, बाहर से अन्दर जाने तक मेरे मन में बात तो कोई नहीं थी, परन्तु मैं ऐसे ही मिलता नहीं था। मुझे साधु बहुत मिल चुके थे, बड़े-बड़े मिल चुके थे, भाई रणधीर सिंह जी जैसे। उनसे भी मैं कई बार प्यार ले चुका था। उनके साथ मैंने कीर्तन भी किया, जब मैं दसवीं में पढ़ता था, ऐसे महात्मा आते रहते थे। उस समय के जो गुरसिक्ख थे, वे भी पूरे महात्मा थे। वे वेषधारी नहीं थे, परन्तु वे थे साधू। मेरा कई बार मन करता था कि मैं वह बातें लिखूँ, वह समय तो अब बीत ही गया है, जब आम सिक्ख भी साधूजन ही होते थे। इस तरह से महाराज जी के पास मुझे कोई आवश्यकता नहीं थी, कोई पूछने वाली बात मेरे पास नहीं थी।

जब मैं महाराज जी के पास गया तो उन्होंने एक क्षण में ही सारी बात देख ली। कहा कि तुम कौन हो? यह बात सुनकर मैं चुप कर गया। एक मिनट खड़ा रहा, संगत बोलती रही। कहने लगी कि बेटा! बताओ, तुम्हें पूछा है कि तुम कौन हो? महाराज कहने लगे, तुमने बताया नहीं? मैंने कहा, बताता हूँ जी। एक मिनट फिर से बीत गया। काफी समय होता है, यदि एक मिनट खड़े रहो। उसके बाद तीसरा मिनट आ गया। जब महाराज जी ने फिर से कहा कि बताया नहीं? तो संगत हँसने लग गई कि लो इस लड़के को बताना नहीं आता कि मैं कौन हूँ। महाराज जी ने कहा खामोश! तुम्हें नहीं पता कि क्या बात हो रही है? दसवीं पास किए हुए मुझे थोड़े दिन ही हुए थे। आवारा घूमते को, आवारा मतलब कि मैं जहां

सन्त महाराज जी तथा सन्त माता जी 'एक अविस्मरनीय स्मृति'

सिंह था। महापुरुषों ने इस बात पर बहुत ध्यान दिया। अभी मुझे वह नहीं दिखा था जो बरोटी वाले जन्म की घटना थी। यह तो मुझे बहुत देर बाद की आयु में आकर पता चला था। मैंने कहा महाराज उस से आगे फिर चलो, मेरा उससे पहले कोई और जन्म था, उससे पहले और था। मैंने कहा कि जैसे कुएं की जगत पर बाँधी रस्सी को गांठ आ जाती है, और जहाँ गांठ आ जाती है, वहां मुझे लगता है कि किसी दिन मेरा अस्तित्व कायम हुआ है। मैं उस दिन कुछ बना था। महाराज कहने लगे, बैठ जाओ। बस इतनी ही बात उन्होंने सुनी थी, 45 मिनट उन्होंने भी नेत्र नहीं खोले और न ही मैंने। 45 मिनट बाद बोले कि नेत्र खोलो! कहने लगे इसे कोई बता नहीं सकता। परन्तु ज्ञानवान लोगों ने इसे आत्मा कह दिया। जहाँ की आपने बात की है न, यह बहुत बड़े ज्ञान की बात है। साधु बताते नहीं होते। क्योंकि कोई अधिकारी नहीं होता। कहने लगे कि जहाँ तुम बताते हो कि मैं पहले दिन बना हूँ, उससे पहले भी पता है कि तुम थे। मैंने कहा कि महाराज था तो सही, लेकिन मुझे पता नहीं। परन्तु जो मैं बना हूँ, वह जरूर कुछ था। वहीं घूमते-घूमते जो बना हूँ, इसे वरियाम सिंह कहते हैं। महाराज जी कहने लगे कि जहाँ की तुमने बात की है, उसे ही जीवात्मा कहते हैं। साथ ही वहाँ जो संगत बैठी थी, उन्हें कहा कि आज से पहले तो सभी विधवाओं से ही मेल हुआ है, आज एक सुहागिन से मेल हुआ है। अभी मैं छोटा ही था, अभी मेरे चेहरे पर दाढ़ी नहीं आई थी। वे कुछ शब्द थे महाराज जी के जो मुझे काट गए। काट इस तरह गये कि इससे आगे भी मुझे उन्होंने कुछ वचन कह दिये। वे कहने लगे कि तुम इससे आगे एक कदम और चल पड़ो। तुम्हारा सिर्फ एक और बाकी रहता है। वह कदम उठा लो। यह जीव वाली बात से उतर आओ, तुम जीव नहीं हो। जीव इसलिये बने हो, क्योंकि तुम आत्मा हो। कभी भी तुम्हारी मृत्यु नहीं होगी। कभी तुम जन्मे नहीं हो, कभी तुमने कुछ किया नहीं, यह तो खेल है, आदेश के अन्दर ही जीवात्माएं खेल कर रही हैं।

उस के बाद मैं घर से चला गया, छः महीने किसी को नहीं मिला। क्योंकि मुझे अपना प्यार मिल गया था। मैं ऐसे ही नहीं कि दिखावा करूँ। परन्तु मैं अकेला बहुत रोता था। महराज जी ने राड़ा साहिब बुला लिया। जो वहाँ सिक्ख रहते थे, उन्होंने कहा कि महाराज! यह कीर्तन भी अच्छा करता है, पाठ भी बहुत अच्छा करता है, परन्तु हमें एक बात नहीं पता चलती कि ये रोता बहुत है उस समय राड़ा साहिब में झाड़ियां बहुत

दिल करता था, वहाँ चला जाता था। जहाँ दिल करता ठहर जाता था, मुझे कोई रोकता नहीं था। या तो मैं किसी गुरुद्वारे में ठहरता था, या फिर साधु के पास रहकर वहां कीर्थन सुनता रहता था, भजन पर बैठा रहता था। मुझे कोई पूर्ण साधू नहीं मिला था, जिसे मैं स्वयं को सौंप दूँ। क्योंकि मेरे अन्दर तर्क था, परख थी कि साधू कैसा होता है नहीं। मेरा नामधारी संतों के साथ भी काफी मेल-जोल रहा। नामधारियों के संत तो बहुत नाम जपते थे, सचमुच ही जपते थे। उनका भी असर मुझ पर था। महाराज से पूछने की बात ही नहीं थी, कि मेरे से क्या पूछा जाए? महाराज जी ने प्रश्न कर दिया। तीन मिनट बीत गये, महाराज जी कहने लगे बताते नहीं हो? मैंने कहा, जी! मुझे बताना नहीं आता। उन्हें पता चल गया और कहने लगे कि अच्छा बताओ कैसे नहीं बताना आता? आप हैरान होंगे कि ये कोई सयाने आदमी की बातें नहीं हैं। यह तो मूर्ख आदमी की बातें हैं। मैं इसीलिये कहता हूँ कि मुझे संसार का ज्ञान नहीं है। पता ही नहीं है कि यहाँ पर मेरा नुक्सान हो जायेगा, यहाँ पर कोई मुझे धोखा दे देगा अथवा कोई मुझे पकड़ा देगा। पता ही नहीं है इन बातों का।

इस तरह से महाराज जी फिर से कहने लगे कि, कैसे नहीं बताना आता? मैंने कहा, जी ऐसे नहीं आता कि पहले तो मैं नाम बताने लगा था, इतने में मेरे अन्दर दो तीन प्रश्न हो गये, कि मैं यदि कहूँ कि दरवाजा बन्द है और फिर तो मैं अपना नाम बताऊँ। यदि अंधेरा होता तो मैं कहता कि जी मैं लड़का हूँ। यदि मैं पंक्ति में बैठता तो अपनी जाति बताता। क्योंकि उन दिनों में जाति-पाति का चलन बहुत था। मैंने कहा कि ये तीनों बातें तो हैं नहीं। कहने लगे, फिर? फिर मैंने कहा महाराज! मैं अपना नाम बताने लगा, मेरे मुँह से निकल गया कि मेरा नाम पिछले जन्म में हरनाम

होती थीं। यह जब भी वहाँ झाड़ियों में जाता है तो रोता बहुत है। मैं ईश्वर को मिलने के लिये नहीं रोता था, मैं तो महापुरुषों के प्यार के कारण रोता था। क्योंकि मैं एक क्षण के लिये भी अलग नहीं होना चाहता था। उन्होंने मुझे बहुत प्यार दिया, जी भर कर प्यार दिया। उन्हें यह भी पता था कि या एक अच्छा गृहस्थी नहीं है। न ही यह बाल बच्चों की परवाह करेगा, न ही यह मां-बाप, न अपने जीवन, न किसी और की यह परवाह करेगा। यह तो बस अपनी ही धुन में रहेगा। जब तक महाराज जी का शरीर रहा उन्होंने ही मेरी सांसारिक जिम्मेवारी अपने ऊपर रखी, यदि कोई बात हो जाती थी तो वे मुझे बहुत नाराज होते थे। बच्चों का सब कुछ उन्होंने स्वयं ही किया। बीजी का सत्कार लोग करते थे।

मैं और महराज जी एक जगह जा रहे थे, क्योंकि मुझे साथ ही रखते थे। मैं अलग रहता ही नहीं था, रोने लग जाता था, जैसे बच्चे रोते हैं। जो वहाँ प्रेमीजन रहते थे, उन्हें भी कहा हुआ था कि कोई रोकना मत, इसे आने देना है। नहीं तो यहीं घंटों बैठे रोते रहेगा। जब भी यह आए तो दरवाजा खोल दिया करो। फिर मुझे स्वयं आकर बता कर गये थे कि यहां चाभी होती है, ऐसे हाथ डाल कर चाभी निकाल कर, स्वयं खोल कर, हमारे पास सीधा आ जाया कर। चाहे हम स्नान कर रहे हों, चाहे भोजन ग्रहण कर रहे हों, तुम्हें इससे कोई मतलब नहीं। इस तरह से उन्होंने मुझे बहुत प्यार दिया। प्यार की जिन्दगी शुरू हो गई, प्यार से वैराग्य आया, प्यार से संसार की बातें खत्म हो गईं। सालों तक मैं सिर्फ एक रोटी खाकर समाधि में जोकि बिना किसी ध्यान की होती है, लीन रहा। सिन्ध में भी ऐसे ही रहा। लेकिन अन्दर से मुझे एक अनुभव हुआ कि सिंध में भी लोगों को सिक्खी का पता नहीं है, वहां भी मैंने सिक्खी का स्वरूप कायम किया। वहां सिंधी लोगों ने तुम्हारे बीबी जी को भी बुला लिया। फिर बीबी जी ने भी औरतों को वाणी पढ़ानी आरम्भ कर दी। वह कुछ और तरह का जीवन था। संतों जैसे जीवन नहीं था, जैसे संत होते हैं।

मैं तुम्हें एक बात बताता हूँ। वहीं से आप अन्दाजा लगा लोगे। वे लोग ईख की गुड़ाई कर रहे थे। मैंने सोचा मैं भी खाली हूँ, मैं भी उनके साथ ईख की गुड़ाई करने लग गया। वे कहने लगे नहीं जी नहीं आप मत करो। ये जो मजदूर हैं, मजदूरी लेते हैं उन्होंने लगाने हैं। मैंने कहा आप, मुझे भी मजदूरी देना। मैं भी ले लूँगा मेरे पास कौन सा पैसा है? परन्तु वह मजदूरी पैसे की नहीं है, कहने लगे वह क्या है? मैंने कहा कि आज मैंने तुम्हारे साथ गुड़ाई करके, जपुजी साहिब याद करवाना है। पाँच पद याद करवाऊँगा और मैंने अपनी क्यारी बीच वाली रख ली। वहाँ से ही मैंने शुरू कर दिया '१ओंकार सतिनाम' याद करो। मैंने वहाँ जाकर सुन लेना है। क्यारियाँ लम्बी थीं। वहां तक पहुँचते-पहुंचते पहले पद तक पहुँच गये। किसी को पूरा याद हो गया, किसी को आधा। इस तरह मैंने दो दिन में पाँच-पाँच पद याद करवा दिये। यह मेरी मजदूरी थी कि बाणी याद करवानी है। फिर यह था कि अमृतपान करवाना है। शराब पीते थे, शराब का मुझे पता था कि बहुत नुकसान होगा, क्योंकि ये लोग नये नये फार्मर आए हैं, और पुलिस इन्हें खींचती फिरेगी। मैंने फिर से कमर कस ली और 60 मील के अन्दर-अन्दर शराब छुड़ा दी। वे इतनी प्रेमी हो गये थे कि जब मैं वहाँ से चला क्योंकि मैं वहाँ काफी समय तक रहा, तब महाराज जी का पत्र आ गया। लिखा था कि चाहे पत्र दिन को मिले या रात को, यदि शाम को मिले तो वहां सूरज नहीं छिपने देना, बस चल पड़ना है। चार बजे मुझे पत्र मिला, मैंने सभी को बुलाया और कहा कि मुझे निमन्त्रण आ गया है। अब मैं सूरज नहीं छिपा सकता, मैंने अब जाना है। वे सब कहने लगे कि अब शाम के समय कैसे जाओगे? अब तो कोई गाड़ी भी नहीं मिलेगी। मैंने कहा कि नहीं। मैं आपकी जो सीमा है, वहां रात काट लूँगा। आदेश बहुत सख्त है, मेरे गुरू का। जब मैं चलने लगा, तो सारा इलाका इकट्ठा हो गया, जो बुजुर्ग थे वे सभी मेरे आगे लेट गये, ऊँचा-ऊँचा रोते हैं, और कहने लगे कि हमारे ऊपर को हो चले जाओ। मैं मजबूर था कि मैंने तो जाना ही जाना है। महापुरुषों का आदेश था। वहाँ से मैं बहुत मुश्किल से आया। जितने वे रोते थे, उससे कहीं ज्यादा मैं रोता था। यानि कि हमरा बिछुड़ने वाला काम नहीं था, हमारा जीवन तो प्यार वाला था। सब प्यार में ही रहते थे। वे सभी भी प्यार में मस्त थे। वहां चार मील पर एक झोंपड़ी थी, वहां रात काट कर मैं महाराज जी के पास आ गया।

मैं तुम्हें एक बात बता देता हूँ आपकी बीजी की। मैं कराची गया वहाँ मुझे दो चीजें बहुत पसंद आईं। एक बैड-कवर था और एक कश्मीरी शाल थी। मैं उन दोनों चीजें खरीद कर ले आया। कयोंकि मैंने कपास बोई हुई थी, मैं थोड़ा बहुत काम भी करता रहता। वे दोनों चीजें जब मैंने तुम्हारे बीजी को दीं, तो इसने जब खोलकर देखीं तो मन में ख्याल आया और कहा कि ये हमारे उपयोग में लाने की चीजें नहीं हैं। ये तो हम महाराज के लिये लेकर चलते हैं। उसी समय इन्होंने इनकी तह लगा कर उनको सम्भाल कर रख दिया। उनका उपयोग नहीं किया क्योंकि प्यार तो एक जैसा ही था। ये भी बहुत प्यार करते थे महाराज जी को। क्योंकि मायके घर में ये बहुत बड़े महापुरुष की बेटी थीं, इसलिये इनके संस्कार भी वैसे ही थे। जब महराज जी के पास गये तो महाराज जी उठकर खड़े हो गये, कहने लगे कि यह तो हमारे पलंग पर बिछा दो। सर्दियां शुरू हो गईं थीं इसलिये शाल अपने ऊपर ले ली। उसे देख कर दूसरे अमीर लोगों ने बहुत चादरें भेंट कीं। सब ऐसे ही पड़ी रह गईं। महाराज जी ने किसी का बिछाया नहीं। इस प्रकार यह भी महाराज जी को बहुत प्यार करती थीं।

उस प्यार का मैंने जीवन भर आनंद उठाया। गल्तियां भी कीं, मैं कई बार महाराज जी के साथ नाराज भी हुआ, परन्तु उन्होंने मुझे नहीं छोड़ा। मुझे फिर से सम्भाल लेते थे।

आखिर वह दिन आ गया मैं बाजार में चला जा रहा था, खुशी-खुशी बातें करते आ रहे हैं। इतने में मुझे अखबार मिला तो उसमें लिखा हुआ था कि महाराज जी इंग्लैंड में स्वर्ग सिधार गये हैं। उस दिन को मैं भूल नहीं सकता। मैंने कहा कि यहां कोई और अखबार नहीं है, इस पर तो बिल्कुल गलत लिखा हुआ है। मैं नहीं मानता। मुझे कहने लगे, भाई जी! महाराज जी, सचमुच में चले गये हैं। मैं पूरा एक वर्ष रोता रहा। मैं अकेले ही होता रहता, कीर्तन करता, तब भी रोता। ऐसे ही एक वर्ष बीत गया रोते-रोते। उसके बाद महंपुरुषों ने कहा कि तुम रोया मत करो, हम कहीं नहीं गये हैं। हमारी संगत में हमें ही देखना। जब मुझे यह बात कही

सन्त महाराज जी – आत्म मार्ग कार्यालय में 'एक अविस्मरनीय स्मृति'

ओइ जीवंदे विछुड़हि ओइ मुइआ न जाही छोड़ि ॥
अंग – 1102

वे शरीर का परित्याग करने के बाद भी कहीं नहीं जाते हैं। इसलिए ठीक है, मैंने आपके प्यार को जिया है। आप लोग कहते हो कि मैंने प्यार बांटा है, लेकिन प्यार मैंने नहीं बांटा बल्कि आपने मुझे प्यार दिया है। मैं तो बिल्कुल खाली हूँ, परन्तु मेरे अन्दर द्वैत भावना बिल्कुल भी नहीं है, चाहे कोई छोटा बच्चा है, अथवा कोई बड़ा है, चाहे किसी ने कितनी ही बड़ी गल्ती कर ली है, चाहे इस प्रकार की भी गलती कर ली हो, जिसे कभी माफ नहीं किया जा सकता है, परन्तु मेरी दृष्टि में कोई बुरा नहीं है। बाकी यह सब प्रकृति का खेल हो रहा है, इसमें कई लोग अच्छे होते हैं, कई बुरे होते हैं। वाहिगुरू जी ने सबको अपने-अपने रोल दिए हुए हैं। कई लोग अच्छे होते हैं, तो दूसरी तरफ कुछ लोग घटिया भी होते हैं। बुरा व्यक्ति सदैव ही बुरा नहीं रहता है। उतार चढ़ाव तो जिन्दगी में आते ही रहते हैं।

कबहू जीअड़ा ऊभि चड़तु है कबहू जाइ पइआले ॥
लोभी जीअड़ा थिरु न रहतु है चारे कुंडा भाले ॥ अंग – 876

इसके अलावा जहाँ तक रहने का सवाल है, तो इस संसार में कोई भी सदा के लिए नहीं रहा करता है। यथा–

जे सौ वरिआं जीवणा भी तन होसी खेह। अंग – 1380

बाकी बहुत कुछ शारीरिक दशा पर भी ऊपर निर्भर करता है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं यहां दुनिया से ऊब गया हूँ। आप लोग मुझे बहुत प्यार देते हैं। प्रत्येक स्थान पर प्यार है, इस प्रकार का वातावरण है कि ऐसे समझ लो मानो बड़ी-बड़ी कोठियों को छोड़कर, किसी टूटे-फूटे छप्पर में जाना हो? यह मैं सोचता व अनुभव करता हूँ कि आप सबके मन में बहुत अधिक प्यार है। इस प्यार को अलविदा कहना बहुत कठिन प्रतीत होता है। परन्तु इसकी तुलना, जब मैं उस (पारलौकिक) प्यार से करता हूँ, तब वह मुझे बहुत भारी प्रतीत होता है। बाकी मैं अकेला तो हूँ नहीं, मेरा कोई मालिक भी है जो अभी नहीं चाहता है कि मैं यहाँ से जाऊं। मेरी आयु सत्तर वर्ष की लिखी हुई थी, उसके बाद बीमार हो गया, लीज मिल गई, दिल की तकलीफ हो गई, पुनः लीज मिल गई। उसके बाद बाईपास सर्जरी हुई, गले में कैंसर हो गया, हारपीज हो गई, जिसे जनेऊ कहते हैं। जो कुछ होना है होता रहे। मुझे जाने से तो डर नहीं लगता है।

आप लोग आज के दिन की बहुत खुशियां मनाते हो। ठीक है, पहले तो मैं मानता नहीं था, लेकिन अब मैंने मान लिया है कि इन सबका यह फर्ज ही है क्योंकि इन्हें इस शरीर से सुख मिला है तो इन लोगों ने इन तारीखों को गिनना ही है। यदि मैं कहूँगा कि तुम यह सब मत करो तब भी ये नहीं हटेंगे। यदि मैं यह कहूँ कि मैं जन्म नहीं लेता हूँ और न ही मरता हूँ तो ये सब ज्ञान की बातें हुआ करती हैं, असली नहीं हुआ करती हैं। प्रायोगिक रूप से बिछोड़े को सहन करना बहुत कठिन है –

तो मुझे प्रतीत हुआ कि वे तो कहीं गये ही नहीं है। अब मैं जिस बात पर आया हूँ, वह यह है कि एक ओर तो आप संगत का प्यार है, जब मैं इसे तोलता हूँ तो मैं अनुभव करता हूँ कि इसे छोड़ना बहुत मुश्किल है, क्योंकि आगे जहाँ जाना है, वहाँ मेरा कोई वाकिफ नहीं है। वहाँ कोई जगह भी नहीं बनाई, कोई ऐसे कार्य भी नहीं किये जिसका मैं बदला ले लूँ। जितने कार्य किये हैं, वे तो मैं प्रतिदिन गुरू को अर्पित कर देता हूँ। जो यहाँ प्रचार हुआ है, सिंध में हुआ है, यू. पी. में हुआ है, और कहीं भी किया है, वह मैंने अपने पास कुछ नहीं रखा है, सब गुरू को दे दिया है। जैसे एक ईमानदार बच्चा अपनी कमाई, अपने मां बाप को सौंप देता है। इसी तरह से मैंने सारे जीवन के जो भी नेक कार्य किये हैं, गुरवाणी पढ़ी है, पाठ किये हैं, सब आप की नजर में हैं। वह मैंने स्वयं के पास कुछ नहीं रखा है, वह सब मैंने महापुरुषों के खजाने में जमा कर दिए हैं।

इसलिए नहीं जमा करवाए कि मुझे फिर इसका बदला मिले। नहीं, बिल्कुल नहीं। मैंने इसे पूर्णतः छोड़ दिया है। जब मैंने उसे छोड़ ही दिया है तो फिर अब वहां पर मेरे पास तो बचा नहीं है, जिसका मैं हौंसला रखूं कि मैं बहुत मालामाल होकर जा रहा हूँ। इसके विपरीत मैं तो बिल्कुल खाली हाथ ही जा रहा हूँ। मेरे पास तो कुछ भी नहीं है। लेकिन मुझे एक विश्वास है कि वहाँ पर चाहे मेरा कोई जानकार है अथवा नहीं लेकिन एक मेरा सज्जन अवश्य है, जिसने मुझे बिछुड़ने नहीं देना हा। बस मुझे वास्तविक प्यार उसी 'एक' ने देना है और किसी से मैं कोई उम्मीद ही नहीं रखता हूँ क्योंकि मैंने दूसरा कोई बनाया ही नहीं है। मैंने तो एक सज्जन ही बनाया है, उस एक को ही अपना सब कुछ समझा है। यह दुनिया भी बड़ी सुन्दर लगती है, इसे छोड़ने के लिए भी मन नहीं कर रहा है, दूसरी तरफ कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता है, बस एक महापुरुष ही नजर आ रहे हैं, उन्हीं के ऊपर मुझे भरोसा है, कि उन्होंने मुझे संभाल लेना है। दूसरी बात जो गुरू साहिब कहते हैं वह यह है कि –

जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ ॥
ध्रिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा ॥ *अंग – 83*

इस प्रकार अब जाना तो है ही। अब 82 वर्ष पूरे हो चुके हैं। 83वां आ गया है, वाहिगुरू की मर्जी है कि वह कितना समय और लीज देता है, वे कितना स्वास्थ्य प्रदान करते हैं। क्या जाने कोई कर्म भोगने से रह गया हो। हो सकता है वह उसे भी भुक्ता कर मिटाना चाहता हो, यह सब उसकी मर्जी है। मैं तुम लोगों के साथ बेरुखी नहीं करता हूँ, कि मैं यहाँ से चला जाऊँ न ही मैं इस प्रकार का संकल्प ही करता हूँ। क्योंकि आप लोगों जैसी संगत किसे मिलती है? यह तो बहुत अधिक ऊँचे भाग्य हों तभी इस प्रकार की संगत प्राप्त हुआ करती है। छोटे से छोटा बच्चा भी मुझे प्यार करता है। प्यार के जीवन में हम लोग रहते हैं। प्यार के जीवन में रहते हुए किसी का भी मन नहीं करता है, कि वह यहाँ से चले जाए। ठंडी कोठियों को छोड़कर कौन चाहता है कि वह झोंपड़ियों व टीनों की शेड में चले जाए? परन्तु यह सब हुक्म का खेल है। बाकी आप लोगों का जो सान्निध्य प्राप्त हुआ है, यह तो संयोगों की ही बात है। यदि मैं सिन्धु प्रदेश में गया , उस समय मेरे अभी दाढ़ी भी नहीं आई थी, उसी समय से मैंने प्रचार शुरू किया हुआ है। जब गांव में था तो गांव में हमारे घर को 'सिक्खों का घर' कहते थे। उस समय कोई विरले-विरले ही सिक्ख हुआ करते थे। यदि कोई पूछता था तो लोग कहा करते थे कि यह सिक्खों का लड़का है। हम लोग घर-घर जाकर कीर्तन भी किया करते थे। बचपन से ही हमने यह सब शुरू कर लिया था। जब मैं सिन्धु में गया तो वहाँ पर विधिवत् रूप से प्रचार शुरू कर लिया था। वहाँ पर मैं कोई वेतन वगैरह नहीं लिया करता था। वहाँ मैंने चार एकड़ कपास बो दी थी। इसी से गुजारा चल जाता था। बहुत अधिक खर्चे उस समय नहीं हुआ करते थे। उसके बाद मुझे महाराज जी (सन्त ईशर सिंह महाराज जी) ने बुला लिया। उन्होंने मुझे दिल्ली भेज दिया। छः महीने मैं वहाँ पर रहा। उसके बाद राड़ा साहिब वाले महापुरुषों के पास आ गए उस समय बहुत बड़े टिब्बे हुआ करते थे। महाराज जी मुझे अपने साथ रखा करते थे। वे अपना गड़वा (जल पात्र) मुझे ही पकड़ाया करते थे। वे वचन करते रहते थे, बातें मुझे भी बहुत सी आती थीं। कभी मैं करता रहता था तो महाराज जी सुनते रहते थे और कभी वे अपने मुखारविन्द से वचन करने लगते थे तो मैं सुनता रहता परन्तु मुझे वे कहते नहीं थे कि तुम बहुत बातें करते हो। एक ज्ञानी मेहर सिंह थे, वे भी बहुत बातें किया करते थे। एक दिन महाराज जी एकदम मेरे सामने खड़े हो गए। उनके पास एक छड़ी थी, जिसे थोड़ी सी चौड़ी करके उस पर बैठ भी जाया करते थे। मैं हैरान हो गया कि महाराज जी मेरे सामने क्यों खड़े हो गए हैं? मैंने कहा महाराज जी क्या बात है? आप जी कहने लगे, एक बात बताओ कि आग कितनी तेज होती है? मैंने कहा महाराज जी! बहुत तेज। फिर कहने लगे, क्या कोई पिता अपने पुत्र को आग में गिराता है? मैंने कहा, महाराज जी! आग में गिरे हुए पुत्र को यदि पिता चाहे तो वह निकाल कर ला सकता है। महाराज जी बोले, बस यही बात है, मैं तुम्हें आग में फेंकने लगा हूँ। वह बात मेरी समझ में ही नहीं आई कि आग में क्या फेंकना है? आग में फेंकना है तो फेंक दे यह उनकी मर्जी है। मैंने कहा महाराज जी! मुझे समझा दीजिए। वे कहने लगे, तुम गृहस्थ के योग्य नहीं थे, लेकिन तुम्हारे कर्म अभी शेष हैं, इसलिए तुम उन्हें हमारे रहते हुए भोग लो। बाद में न जाने तुम्हें कोई साधू मिले या न मिले। मैंने तो चले जाना है। मैंने दोबारा तो आना नहीं है। तुम हमारे रहते हुए सारे कर्मों को भोग लो। मैं रोने लग पड़ा। मुझे पता चल चुका था कि महाराज जी मुझे अब घर भेजेंगे। कहने लगे, तम रोओ मत, हम तुम्हारी मदद करेंगे, लेकिन –

भोगे बिन भागे नहीं करमगती बलवान।

कर्मगति इतनी बलवान है, कि यह तुम्हें भोगनी ही पड़ेगी। कुछ जीवों ने आना है, गृहस्थ का जीवन, लेना-देना, भाईचारे के साथ व्यवहार, ये सब तुम्हारे कार्य शेष रहते हैं। इसलिए उन्हें तुम अब भोग लो। तुम हौंसला रखो। जब तक हमारा शरीर है, तब तक हम तुम्हें कोई मुश्किल नहीं होने देंगे। उन्होंने जो वचन कहा था वह पूर्णतः ठीक था। वह कर्म जो भोगने थे, वह मुझे पता हैं कि कौन से कर्मों को मैं अब भोग रहा हूँ लेकिन मेरा नुक्सान बहुत हुआ है। नुक्सान यह हुआ है कि मुझे जीवन की जो अदाकारी मिली वह बहुत टेढ़ी-मेढ़ी थी। यदि मैं बिना रोजगार के चला तो मैंने कभी पाठ वगैरह का किसी से कोई पैसा नहीं लिया। पाठ मुझे बहुत बढ़िया आता है। उसके द्वारा मैं पाठ कर सकता था। इन बातों की तरफ मैंने कोई ध्यान नहीं दिया। यदि कोई मेरी प्रशंसा करता रहा तो मैंने उसका भी कोई ध्यान नहीं दिया, कभी किसी चीज का लालच नहीं किया, अन्य चीजों की दृष्टि से भी मैं निर्लेप रहा। सही इसलिए भी रहा क्योंकि मुझे यह पता चल गया था कि –

काहे रे मन चितवहि उदमु
जा आहरि हरि जीउ परिआ ॥ *अंग – 10*

मुझे शत प्रतिशत विश्वास हो गया कि रोटी तो वाहिगुरू जी ने ही देनी है, वह स्वयं ही लेकर आएगा। किसी न किसी को भेजेगा ही। एक बार मैं एक गांव में चला गया। वहाँ पर मुझे एक तालाब बढ़िया लगा, उसके पास मैं बैठ गया (भजन बन्दगी की दृष्टि से)। वहाँ पर एक कराह चलता था। जब दोपहर हो गया तो उसकी बेटी खाना लेकर आई। वह बोला, बेटी! कितने लोगों के लिए रोटी लाई हो? वह बोली, आज तीन लोगों के लिए रोटी लाई हूँ। अब दो तो वह लोग थे और तीसरा मैं बैठा था। उस लड़की की माँ को तो पता ही नहीं था कि तीसरा व्यक्ति भी कोई है। उस व्यक्ति का नाम उताभा सिंह था। वह अपने बेटे को बोला, गुरपाल! जाओ, उस लड़के को भी बुला लाओ। वह मेरे पास आकर कहने लगा, भैया जी! पिता जी बुला रहे हैं। मैं चला गया, वह बोला, बेटा! खाना खा लो। मैंने कहा, मैं इस प्रकार तो नहीं खाऊँगा। वह बोला, फिर कैसे खाओगे? मैंने कहा, फिर मुझसे कोई काम करवा लो अन्यथा मैं नहीं खाऊँगा। मैं कराह चलाना जानता हूँ, मुझसे कराह ही चलवा लो। मुझसे एक घंटा कराह चलवा लो। फिर मैं रोटी खा लूँगा। आठ पहरों के बाद मैं एक रोटी खाता हूँ। जितने दिन मैं यहाँ पर रहूँगा आप मुझसे प्रतिदिन एक घंटा काम करवा लिया करो और मुझे एक रोटी दे दिया करो। वह भी जिद करने

लग पड़ा आखिर हुआ यह कि मैंने कराह का मुट्ठा पकड़ लिया तथा उसे भरकर ले आया। वह कहने लगा देखो! लड़का कारीगर है, किस प्रकार से कराह को भर कर लाया है? वह कहने लगा, लो भाई, आ जाओ! तुम्हारा रोटी जितना काम हो गया है। मेरे मुँह से निकल गया कि मुझसे एक भला करवा लो। उस समय मेरे मुँह पर दाढ़ी नहीं आई थी। मेरी आयु 18-19 वर्ष की थी। वह बोला, मेरा भला तो कर दो परन्तु मैं शराब नहीं छोड़ूँगा। शराब तो मुझे गुढ़ती (बच्चे के जन्म के पश्चात प्रथम पेय पदार्थ) में मिली है। मैंने कहा बापू! मैं आपकी शराब तो अवश्य ही छुड़वऊँगा। वह कहने लगा, ठीक है, यदि छुड़वा सकते हो छुड़वा दो। फिर वह मुझसे कहने लगा, अब तुम पहले रोटी खा लो। मैं वहाँ पर एक महीने तक रहा। धीरे-धीरे मैंने उनके घर के सारे सदस्यों को गुरवाणी पढ़ने में लगा दिया। उनके घर की महिलाएं नसवार लिया करती थीं। इसी प्रकार वह थोड़ी सी शराब रोज गिरा देता था। जब थोड़ी सी रह गई तो वह रोने लग पड़ा तथा मेरी तरफ इशारा करके एवं शराब को सम्बोधन करते हुए कहने लगा, ये हमारे और तुम्हारे बीच दरार डालने वाला आ गया है। इसने मेरे और तुम्हारे प्यार को समाप्त कर दिया है तथा ऊँची आवाज में रोने लग पड़ा। उसने घुमा कर शराब की बोतल को फेंक डाला तथा कहने लग पड़ा, आज के बाद मेरा और तुम्हारा प्यार खत्म हो गया है। यह मैं एक उदाहरण बताता हूँ कि मैंने किसी उपदेश के द्वारा उसकी शराब नहीं छुड़वाई थी। इस प्रकार से मैं अपना जीवन गुजार रहा था।

इसके बाद मैं अपने गांव आ गया, वहाँ पर भी मैंने अपना वही काम शुरू कर लिया। जब मैंने फौज में सर्विस की तो वहाँ पर भी यही काम करता रहा। जब मैं सिविल में आ गया यानि कि 1957 में सेक्रेटरिएट को ज्वाइन किया तो वहाँ पर भी मैंने नौकरी करने का ढंग बताया कि किस प्रकार से नौकरी की जाती है। मेरे पास परचेज ब्रांच थी, जिसमें लाखों रुपयों का कमीशन मिलता ता। एक दिन की बात है कि एक ठेका किया गया, उसमें मैंने लिख दिया कि यह ठेका महंगा है। जब मैं लिख रहा था, तो ठेकेदार ने मेरी बांह पकड़ ली, कहने लगा जरा बाहर आना। जब मैं बाहर आया, तो वह मुझे तीन हजार रुपया देने लगा। तीन हजार को दो सौ से गुणा कर लो, छः लाख बन गया। वह बोला, यह ले लो परन्तु लिखो नहीं। मैंने कहा, हुक्म चन्द! लिखना तो मैंने अवश्य है क्योंकि मेरी तो यह ड्यूटी है। इतनी देर में लन्चब्रेक हो गई और मैं घर आ गया। वहाँ पर वह दस हजार रुपया लेकर आ गया। अधिकारी से छुट्टी करवा कर लेकर आया। उसके ऊपर मेरे हस्ताक्षर नहीं थे। केवल हस्ताक्षर करने के मुझे दस हजार रुपया मिल रहा था। वह बोला, मैं महालेखाकार तक पैसे दे चुका हूँ। लेकिन मैंने नहीं लिए। अर्थात मुझे माया गिरा नहीं सकी। मुझे बहुत समय बाद वही हुक्मचन्द ठेकेदार मिला तथा कहने लगा वरियाम सिंह! यदि तुम उस समय वह रकम ले लेते तो तुम आज कितने अमीर होते! और मैं कितना बड़ा ठेकेदार होता। इस प्रकार से मैंने पैसे नहीं लिए।

सन्त महाराज जी, तपोस्थान रतवाड़ा साहिब में समाधिस्थ अवस्था में

वहाँ पर मैंने बताया कि नौकरी किस प्रकार की जाती है। मैंने वहाँ पर दिन रात काम किया। इसके बाद मैं सिविल में आ गया। वहाँ पर भी मैंने बहुत काम किया। वहाँ पर जो मेरा अधिकारी था, वह कहने लगा, मैंने तुमसे बात करनी है। उसने मुझे कुर्सी पर बैठा लिया। वह कहने लगा, यह देखो तुम्हारी फाइलें धरती से लेकर यहाँ तक आ गई हैं। मेरे नीचे दो ब्रांचें और भी हैं, उनकी बस ये चार चार फाइलें पड़ी हैं। तुम अकेले सारा दिन काम करते रहते हो। तुम कोई शिकायत भी नहीं करते हो? तुम रोज के काम को रोज ही निपटा लेते हो, तुम्हारे पास बहुत काम है। मुझे पता चला है कि तुम चार बजे आते हो तथा ग्यारह बजे रात को वापिस घर जाते हो। मैंने कहा, भनोट साहिब! मैं एक बात बताऊँ? आप लोगों के यहां गिरजाघर होता है न? वह बोला, हाँ? मैंने कहा, हमारे यहां गुरुद्वारा होता है। एक गुरुद्वारा तो वह होता है जिसे हम बनाते हैं, लेकिन एक गुरुद्वारे के बारे में हमें गुरू ने बताया है। वह गुरुद्वारा हमारा दिल्ली से लेकर यमुना के साथ साथ तिब्बत तक चले जाओ और इधर पाकिस्तान तक है, उधर फिर दिल्ली के नीचे हरियाणा के महिन्दरगढ़

तक, इतना बड़ा हमारा गुरुद्वारा है। मेरे पास प्राकृतिक आपदाओं का विभाग है। यदि मेरे होते हुए एक बाँध भी टूट गया, एक व्यक्ति भी बह गया, किसी की खेती खराब हो गई, किसी के पशु बह गए तो फिर मेरे द्वारा किया गया जपुजी साहिब का पाठ, क्या महत्व रखेगा? फिर मेरे भजन का क्या लाभ होगा? इसलिए मेरा भजन तो अब यही है जिसमें मैं प्रातः चार बजे लग जाता हूँ और रात के ग्यारह बजे तभी जाता हूँ जबकि मेरी तसल्ली हो जाती है कि अब सब ठीक ठाक है। वह हैरान हो गया कि तुम इतनी बड़ी सोच रखते हो? मैंने कहा मेरे गुरू ने मुझे यह बताया है कि -

इहु जगु सचे की कोठड़ी सचे का विचि वासु ॥ अंग - 463

यह सारा संसार ही सच्चे (परमेश्वर) की कोठी है। यह सारा ही वाहिगुरू जी का गुरूद्वारा है और मैं इसकी सेवा करता हूँ। उसने सरकार को पत्र लिख दिया और मेरे पास पत्र आ गया कि सरकार तुम्हारे 1958 के काम की प्रशंसा करती है। तुमने कोई गलती नहीं होने दी। फस्वरूप कोई धन व जन की हानि नहीं हुई। उसने मेरे अकेली सीट की दो ब्रांचें बना दीं। इस प्रकार मैंने वहाँ पर यह करके दिखलाया कि यदि नौकरी करनी है तो इस प्रकार करनी चाहिए। यदि मुझे वाहिगुरू जी ने जमीन दी और मैंने खेती की तो मैंने यह निर्धारित कर रखा था कि इतने कुन्तल से कम फसल नहीं होनी चाहिए। तुम्हारे बीजी मेरे साथ लगे रहते थे। मुझे आकर बताया करते थे कि अमुक स्थान पर पानी खड़ा है। मुझे बिना बताए हुए ही वे नौकरों को साथ लेकर व बाल्टियां लेकर पहुँच जाते थे। वे कहीं भी पानी को खड़ा नहीं होने देते थे। वे कहते थे कि पानी वाले स्थान पर गेहूँ कमजोर पड़ जाएगी। इसलिए खेती भी हमने बहुत अच्छे ढंग से की। लोग हैरान थे कि यह सत्संग भी करता है तथा खेती भी अव्वल दर्जे की करता है। उसके बाद मैं यहाँ पर आ गया तथा यहाँ के गांवों का हालचाल देखा। यहाँ पर गावों का हाल बहुत ही दयनीय था। मेरे पास धन की कोई कमी नहीं थी। मैंने सलाह की कि गोदाम ले लेते हैं, जिसका 65 हजार रुपया महीने का किराया आया करेगा और उस पैसे से गुरवाणी का प्रचार करेंगे, ट्रक वगैरह ले लेते हैं, उसके अन्दर श्री गुरू ग्रन्थ साहिब का प्रकाश कर लेते हैं, बाकी लोगों को (प्रचारार्थ) मैं तनख्वाह पर रख लूँगा, फिर मैंने यह देख लिया कि गोदामों वाला काम मुझसे नहीं चलेगा। वैसे गोदामों वाली स्वीकृति मुझे भारत सरकार की ओर से मिल गई थी। 65 हजार रुपया किराया था। इसमें से 13 हजार प्रतिमाह मुझे मिलना था तथा 52 हजार की किश्त उन्होंने कर्जे की काटनी थी। मैंने

ट्रस्ट के संस्थापक महापुरुष 'गुरू गोबिन्द सिंह विद्या मन्दिर रतवाड़ा साहिब' के विद्यार्थियों को अपने प्रवचनों द्वारा श्शार करते हुए

फिर निर्णय लिया कि इस कार्य को भी छोड़ो। बिन मतलब, एक ख्याल सा बना रहेगा जबकि मैं तो गुरवाणी के प्रचार में रात दिन एक करना चाहता हूँ। ये गांवों के लोग तो गुरवाणी की दृष्टि से पूर्णतः अनभिज्ञ हैं। फिर गुरू के पास जाकर तो मुझे उनकी नाराजगी सहन करनी पड़ेगी। वह फिक्र इसलिए था कि ऐ मन! तुम इस कार्य को कर सकते हो, फिर करते क्यों नहीं हो? इस प्रकार मैंने यह निर्णय लिया और शत प्रतिशत इस काम के लिए समर्पित हो गया। मैं अपनी कार या जीप स्वयं ड्राइव करता था। रात को एक बजे मैं कीर्तन करके वापिस आया करता था। मुझे कई लोग कहा करते थे कि तुम अब आधी रात को कार चला कर जाओगे? यह तो तुम स्वयं को बहुत दुख दे रहे हो। मैं हँस पड़ता था कि चलो यदि इसी प्रकार से यह शरीर लेखे में लग जाए तो फिर वह अच्छा ही है। उसका परिणाम यह हुआ कि आज आप लोग मुझे इतना प्यार दे रहे हो। तुम्हारे अन्दर सिक्खी का कितना जज्बा है, प्यार है। अभी देख लो कि लंगर का समय निकलता जा रहा है लेकिन एक भी आदमी उठने के लिए तैयार नहीं है। अतः मैं आप सबका हार्दिक धन्यवाद करता हूँ। मेरा मन यहाँ से जाने के लिए नहीं चाह रहा है, परन्तु फिर भी जिस दिन बुला लिया फिर तो प्रस्थान करना ही है। जगीर सिंह के बारे में मुझे पता है कि जब वह हजूर साहिब अमृतपान करने लगा तो उसे पंक्ति में से उठा दिया कि वहाँ पर मैंने वरियाम सिंह (सन्त) को भेज दिया है। उसके द्वारा अमृतपान कर लो। अतः इस प्रकार श्री गुरू महाराज जी ने सारी मदद की है। और अब मैं आप सबका धन्यवाद करते हुए यहीं पर समाप्ति करने की अनुमति चाहता हूँ।

वाहिगुरू जी का खालसा

वाहिगुरू जी की फतह।

आत्म ज्ञान

सन्त वरियाम सिंह जी
सम्पादक - प्रो. गुरदेव सिंह

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक मई, पृष्ठ - 39)

'काम' कितना बलवान है जिसने कि उच्च कोटि के महात्मा, योगी मत्स्येन्द्र नाथ को भी अपना शिकार बना लिया। यह गोरखनाथ सिद्ध का गुरू था और लंका का राजा 'अमरू' इसका सेवक था और उसके पास ही यह ठहरा हुआ था। जब राजा परलोक गमन कर गया तो रानियों को विलाप करता हुआ देखकर इसने कहा कि मैं इसे योग बल से जीवित कर देता हूँ। इसने अपने शरीर को कन्दराओं में छिपा दिया और उस राजा अमरू के शरीर में प्रवेश कर गया, फलस्वरूप वह उठ खड़ा हुआ, पन्द्रह साल इसी तरह से बीत गए। उधर सभी योगी हैरान हो गए कि मत्स्येन्द्रनाथ योगी कहाँ चला गया है। रानियों के भोग में यह इतना अधिक मस्त और ग्रस्त हो गया कि अब यह वहाँ से निकलता ही नहीं है। इधर पंजाब के अन्दर बाल कन्धाई एक महात्मा हुए हैं। उसने गोरखनाथ के साथ बातचीत करते हुए पूछा, गोरखनाथ! तुम्हारे गुरू मत्स्येन्द्रनाथ आजकल कहाँ पर हैं? कभी उनके दर्शन नहीं होते हैं? वह बोला कि शायद हिमालय की कन्दराओं में कहीं समाधिस्थ अवस्था में बैठे होंगे। वह बोला ढूँढ़ कर देखो। जब गोरखनाथ ने अर्न्तात्मा तौर पर ध्यान दौड़ाया और सारी दुनिया, पर्वत व समुद्र आदि देखे तो उसे कहीं पर कुछ भी पता न चला। उस समय बाल कन्धाई ने उसे उलाहना दिया कि गोरखनाथ! जिसे तुमने अपना गुरू बनाया हुआ है, वह लंका के राजा अमरू के शरीर में बैठकर उसकी पदमिनी रानियों को भोग रहा है। इसके बाद गोरखनाथ लंका में पहुँचा और अपने गुरू मत्स्येन्द्रनाथ को वहाँ से निकाला। यह तो केवल 'काम' शूरवीर की बात है इसके साथ क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार आदि भी अन्दर पड़े हुए हैं। यह जीव परमात्मा के नाम को भूलकर इनके पीछे पड़ गया है और इन चोरों ने उसे पकड़ लिया है। इसका कारण यह है कि इसने परमात्मा को इतना अधिक विस्मृत कर दिया है कि मानो वह इसका कुछ लगता ही नहीं है। यानि कि जो दुश्मन है उसे इसने मित्र बना लिया है तथा जो दाता है जिसने कि इस जीव की प्रत्येक जगह पर मदद करनी है, उस प्रभु के नाम को इसने विस्मृत करके पूर्णत: पराया समझ लिया है। यथा -

संगि सहाई सु आवै न चीति ॥
जो बैराई ता सिउ प्रीति ॥ अंग - 267

सभु किछु अपना इकु रामु पराइआ ॥ अंग - 1342

रामु संगी तिसु गति नही जानहि ॥
पंच बटवारे से मीत करि मानहि ॥
....
कामि न आवै सु कार कमावै ॥
आपि बीजि आपे ही खावै ॥ अंग - 898

इस भूल में पड़कर यह 'मैं' बन बैठा है और 'मैं' बनकर बीज बोने लग पड़ा है। अब यह प्रत्येक चीज का कर्ता बन गया है। यह प्रत्येक समय यही कहता है कि मैं करता हूँ और यही कारण है कि यह कर्म के साथ बँध जाता है, फलस्वरूप इसे उसका फल भोगना पड़ता है।

गुरू दशमेश पिता जी के पास संगत ने विनती की कि सच्चे पातशाह जी! हम कर्मों के बारे में बहुत सुनते हैं, आप कृपा करके अपने मुखारविन्द से इस शंका की निवृत्ति करो। महाराज जी कहने लगे तुम्हारी शंका ठीक है लेकिन भाई दया सिंह जी मेरा ही रूप है शारीरिक तौर पर हम दो हैं, लेकिन वे अभेदावस्था के गुरुमुख प्यारे हैं और प्रत्येक समय मेरे अन्दर ही रहते हैं, इसलिए वे तुम्हारी शंका की निवृत्ति करेंगे। आप उनके माध्यम से इसका सविस्तार उत्तर श्रवण करो। क्योंकि -

खालसा मेरो रूप है खास॥
खालसे महि हौं करौ निवास॥ (सरब लोह ग्रंथ 'चों)

जिन्हा न विसरै नामु से किनेहिआ ॥
भेदु न जाणहु मूलि साँई जेहिआ ॥ अंग - 397

भाई दया सिंह जी ने बहुत ही विनम्रता व सम्मानपूर्वक शीश निवाया तथा आप कहने लगे कि सच्चे पातशाह जी! यह शरीर आपका ही है इसलिए आप जी जो भी बुलाओगे दास तो उसी प्रकार से उसकी व्याख्या करेगा -

जिउ बोलावहि तिउ बोलह सुआमी
कुदरति कवन हमारी ॥ अंग - 397

उस समय भाई साहिब जी ने वचन किए। आप कहने लगे प्रेमीजनो! ये कर्म तीन प्रकार के होते हैं - क्रियामान कर्म, संचित कर्म और प्रारब्ध कर्म। इनके अतिरिक्त नित्य कर्म, कायिक कर्म, प्रायश्चित कर्म आदि भी होते हैं लेकिन

जीव का सम्बन्ध पहले तीन प्रकार के कर्मों के साथ ही होता है। जब तक हउमै का नाश नहीं होता है, तब तक जीव जितने भी कर्म करता है उसे उन कर्मों ने पकड़ना ही पकड़ना है जैसे कि गुरू महाराज जी ने फुरमान किया है कि -

होंदा फड़ीअगु नानक जाणु ॥
ना हउ ना मैं जूनी पाणु ॥ *अंग - 1289*

आपन करम आपे ही बंध ॥
आवनु जावनु माइआ धंध ॥ *अंग - 888*

बंधन बंधि भवाए सोइ ॥
पइऐ किरति नचै सभु कोइ ॥ *अंग - 465*

इसलिए जब तक 'मैं' में फंस कर रहेगा, तब तक कर्मों के बन्धन में फँसा ही रहेगा क्योंकि जो 'मैं' को धारण करके कर्म करना है तो फिर उसका फल तो मिलना ही है। जो अच्छे कर्म हैं, वे सोने की बेड़ियाँ हैं और जो बुरे कर्म हैं वे लोहे की बेड़ियाँ हैं। वैसे दोनों बेड़ियाँ ही हैं। अच्छे कर्मों का अच्छा फल होता है और बुरे कर्मों का बुरा फल होता है। जब तक इस जीव के अन्दर मैं भाव विद्यमान है तब तक जीव कर्मों के बन्धन से मुक्त नहीं हो सकता है। भले ही गुरसिक्ख अरदास तो करता ही है कि हे सच्चे पातशाह जी! ब्रह्ममुहुर्त से लेकर अब तक मैंने जितने भी पाठ किए हैं, जितनी भी वाणी पढ़ी है उसे सही करके अपने खजाने में दाखिल कर लेना। इसका तात्पर्य है कि वह कर्मों का समर्पण करता है लेकिन वह कर्म तो अहंभाव धारण करके ही करता है। यह तो कहने मात्र के लिए एक वाक्य बन गया है लेकिन उसे समझ नहीं है कि मैं क्या कह रहा हूँ। जब तक इसकी हउमै कायम है, तब तक यह कर्मों के शिकंजे में से निकल ही नहीं सकता है। भाई साहिब जी ने बतलाया कि जीव नित्य प्रतिदिन जो भी अच्छे या बुरे कार्य करता है इन्हें क्रियामान कर्म कहते हैं। ये कर्म साथ ही साथ जमा होते रहते हैं। कई कर्म ऐसे भी होते हैं जो कि तुरन्त फल देते हैं जबकि कई कर्म ऐसे भी होते हैं जिनका फल 5, 7 या 10 साल बाद ही मिलता है। कई कर्म इस प्रकार के भी होते हैं जिनका फल 50 साल बाद भी मिलता है और कई कर्म ऐसे भी होते हैं जिनका फल 1000 साल बाद भी प्राप्त होता है अत: अच्छे कर्म सुख देते हैं और बुरे कर्म दुख देते हैं, लेकिन फल तो दोनों का ही भोगना पड़ता है।

एक बार गुरू नानक पातशाह जी को पूछा कि सच्चे पातशाह जी! जीव शिकायत करते हैं कि मेरे साथ अमुक व्यक्ति ने बुरा किया, नजायज किया यानि कि वे दूसरों पर दोषारोपण करते हैं। महाराज जी कहने लगे, प्रेमीजनो! यह संसार कर्मों के बन्धनों में बँधा हुआ चल रहा है। कुछ लोग तो ऐसे हैं जो कि बात को समझ लेते हैं और दूसरों पर दोषारोपण नहीं करते हैं जबकि कुछ लोग ऐसे होते हैं जो कि दूसरों को ही दोष देते रहते हैं -

ददै दोसु न देउ किसै दोसु करंमा आपणिआ ॥
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥
अंग - 433

जिस प्रकार से कोई व्यक्ति व्यभिचार करता है और उसे एड्स की बीमारी लग गई। यह पूर्वजन्म का रोग नहीं था बल्कि यह तो उसने स्वयं अपनी गलती से ही बीमारी को अपने पास बुलाया है। अब इस बुरे कर्म का फल भी जल्दी ही प्राप्त हो गया और कई कर्म इस प्रकार के हैं जो कि बाद में फल देते हैं। महाभारत के युद्ध के बाद श्री कृष्ण महाराज जी पाँडवों को अपने साथ लेकर धृतराष्ट्र के पास उसे सांत्वना देने के लिए गए। आप कहने लगे, राजन्! हमें बड़ा अफसोस है कि तुम्हारे सौ पुत्र युद्ध में शहीद हो गए, रानियाँ विधवा हो गईं और राजभाग तुम्हारे हाथ से चला गया तथा बच्चे भी साधारण बच्चों की भांति हो गए क्योंकि राज शक्ति न होने के कारण आमदन कम हो गई। राजा युधिष्ठर कहने लगा, आप चिन्ता मत करो। आपके सारे परिवारों का खर्च हम स्वयं वहन करेंगे और आप लोग जिस जीवन शैली में पहले रहते थे, उसी प्रकार से जीवनयापन करो लेकिन पुत्रों का जो बिछोड़ा पड़ गया है उस कमी को तो कभी भी पूरा नहीं किया जा सकता है। आप स्वयं को पूर्ववत् राजगद्दी पर ही आसीन समझो और आपके हुक्म को किसी राजा के हुक्म की भांति ही माना जाएगा।

धृतराष्ट्र कहने लगा, मुझे अपने पुत्रों की शहादत का कोई अफसोस नहीं है क्योंकि उन्होंने युद्ध में पीठ नहीं दिखलाई है बल्कि वे तो वीरगति को प्राप्त होकर स्वर्गों में पहुँचे हैं। जन्मजात अन्धा होने के कारण मुझे विगत सौ जन्मों का ज्ञान है और उनके अन्दर मैंने कोई भी ऐसा कार्य नहीं किया है जिसका फल मुझे इस प्रकार से मिलता। श्री कृष्ण महाराज जी बोले, राजन्! अपने 107वें जन्म को देखो। वह बोला, महाराज जी आप दिखाने की कृपा करो। महाराज जी ने दृष्टि कर दी फलस्वरूप उसे अपना 107वां जन्म दिखाई पड़ गया। वह देखने लगा कि उस जन्म में भी वह राजा ही है लेकिन उसे माँस खाने का बहुत शौक है। एक दिन उनके रसोइयों को कोई माँस न मिल सका। इधर इसके महलों के ऊपर हँसों के एक युगल ने सौ बच्चे दिए हुए थे। रसोइयों ने एक बच्चे को मारकर उसके माँस को तैयार करके राजा को परोस दिया। राजा को वह माँस बहुत स्वाद लगा। उसने कहा, यही माँस मेरे लिए रोज बनाया करो। 100 दिन के अन्दर उसने सारे बच्चों को खा लिया। जब हँसों का वह युगल मान सरोवर से वापिस आया तो उसे पता चला कि इन्होंने उनके बच्चों को खत्म कर दिया है तो उन्होंने राजा के महल के चारों तरफ चक्कर लगा लगाकर और धरती पर गिर कर अपनी जानें दे दीं। श्री कृष्ण महाराज जी कहने

लगे, राजन्! तुम्हें इस कर्म का ही फल प्राप्त हुआ है। फिर उसने अगला प्रश्न किया कि मैं जन्मजात अन्धा क्यों हूँ? श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे, अब तुम अपने 104वें जन्म को देखो। अब यह क्या देखता है कि बच्चे मदार के पौधों पर से टिड्डों को पकड़ रहे हैं और उनके पैरों के साथ धागा बाँधकर उन्हें पतंग की भांति उड़ा रहे हैं और जब वह धागा टूट जाता है तो वे आजाद हो जाते हैं। इसने भी एक टिड्डा पकड़ लिया और एक शूल को लेकर उसकी आँखों में से आर पार निकाल दिया, फलस्वरूप उसने तड़प-तड़प कर जान दे दी। श्री कृष्ण महाराज जी बोले यह तुम्हारे ही कर्मों का फल है कि तुम जन्मजात अन्धे हो। इसके आगे वह कहने लगा कि फिर उन कर्मों के फल को भोगने में इतना समय क्यों लगा? या फिर किसी अन्य जन्म में जैसे कि 106वें या 103वें जन्म में क्यों नहीं भुगता दिया गया? महाराज जी बोले, राजन्! तुम्हारे पुण्य कर्मों का भण्डार ही बहुत बड़ा था जिस प्रकार से आटा चक्की चल रही हो और मक्की के दानों को पीस कर आटा बनाया जा रहा हो और उस समय यदि कोई कहे कि मेरी गेहूँ को पीस दो तो उस समय आटा चक्की का मालिक कहेगा कि इस समय मक्की की पिसाई चल रही है, जब मक्की समाप्त हो जाएगी तो उस समय फिर गेहूँ की पिसाई हो जाएगी। इसलिए जब पुण्य कर्मों की बारी समाप्त हो जाती है तो उस समय फिर पाप कर्मों की बारी शुरू हो जाती है। यही कारण था कि तुम्हारे उस पाप का फल इतनी देर बाद मिला है।

भाई साहिब भाई दया सिंह जी कहने लगे कि किसी कर्म का भुगतान तो उसी समय हो जाता है, जबकि किसी कर्म का फल बहुत देर बाद हो पाता है। जब जीवन भर में किए गए कर्मों के उपरान्त यह जीव परलोक गमन कर जाता है तो जितने भी कर्म उसने किए होते हैं तो उन्हें संचित कर्म कहते हैं। ये कर्म जमा हो जाते हैं और जब यह जीव नया जीवन धारण करता है तो उस समय देखा जाता है कि कौन सा जीव आ रहा है, जिसका फल, इसने चुकता करना है किससे इसने लाभ लेना है, किसे अदा करना है। किसे इसका पुत्र बनाएँ किसे पुत्री बनाएँ, किसे पत्नी बनाएँ आदि। इसे लेने देने के हिसाब से ही जब कर्म फिट हो जाते हैं तो फिर ये प्रारब्ध कर्म बन जाते हैं। इसे इस प्रकार से समझ लो कि जैसे कर्मों के स्टोर में तीरों को भर दिया जाए, वे प्रारब्ध रूपी तरकश के तीर हैं। ये तीर फिर समय रूपी कमान पर चलते रहते हैं जिस कारण से यह जीव सारी उम्र प्रारब्ध कर्मों को भोगता रहता है -

लेखु न मिटई हे सखी जो लिखिआ करतारि ॥

अंग - 937

'भोगे बिन भागै नही करम गती बलवान।'

उपर्युक्त कहावत के अनुसार यह जीव कर्म भोगता हुआ इस चक्रव्यूह में फँसा रहता है और जन्म लेता व मरता रहता है। जब तक इसे अपने निजत्व की समझ नहीं आती है और इसकी 'मैं' नहीं मरती है फलस्वरूप इसे वास्तविक ज्ञान नहीं होता है, तब तक कर्मों का नाश नहीं होता है। जिस प्रकार से अन्धकार में पड़ी हुई रस्सी को साँप समझ कर सारी रात डरता रहा लेकिन जब प्रकाश हुआ तो अन्धकार रूपी अज्ञानता का नाश हो गया क्योंकि वह तो पहले भी रस्सी थी और अब भी रस्सी ही है तथा भविष्य में भी रस्सी ही होगी। इस प्रकार से जब जीव को ज्ञान हो जाता है तो फिर कर्मों का नाश हो जाता है अन्यथा यह परमात्मा से बिछुड़ कर अपनी पृथक दुनिया को ही निर्मित करके रखता है। जीव जो भी कर्म करता है, उसे हउमै में ही करता है, नाम जपता है तो हउमै में ही जपता है, पाठ करता है तो हउमै में, सेवा करता है तो हउमै में और यह प्रत्येक चीज का फल मांगता है। इस हउमें के कारण ही यह कभी राजा बनकर तख्त पर बैठता है और कभी कंगाल बनकर दर-दर भटकता है। इस बारे में महाराज जी फुरमान करते हैं -

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ॥
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ॥

अंग - 466

जिस प्रकार से बहते हुए दरिया से पृथक होकर तालाब बन गए और खड़े हुए पानी में कीड़े पड़ गए और इसी प्रकार से हम प्रभु जी के साथ से टूट गए हैं तथा हमारे अन्दर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, बखीली, हंगता, ममता आदि असंख्य कीटाणु पड़ गए हैं। जब तक यह दोबारा अपने मूल श्रोत के साथ नहीं जुड़ता है तब तक वह साफ नहीं हो सकता है। अब तालाब स्वयं तो नदी या समुद्र के साथ तो जाकर मिल नहीं सकता है यदि कोई कृपा करके मोटर लाकर गन्दे पानी को पाइप के साथ निकाल कर दरिया में डाल दे तो फिर पुनः वह पुर्ववत निर्मल जल बन जाएगा। ठीक इसी प्रकार से हम भी परमात्मा से बिछुड़ कर दुखी हो रहे हैं। गुरू महाराज जी बार-बार हमें समझा रहे हैं कि ऐ भद्रपुरुष! अब बड़ी मुश्किल से तुम्हें यह अवसर मिला है यह देखना कि कहीं चूक मत जाना क्योंकि जिन चीजों में तुम फँस गए हो वे तुम्हारे साथ जाने वाली नहीं हैं-

कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि ॥
नाँगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि ॥

अंग - 1365

राजु मालु रूपु जाति जोबनु पंजे ठग ॥
एनी ठगीं जगु ठगिआ किनै न रखी लज ॥

अंग - 1288

'चलता'

सूरा सो पहिचानीऐ जो लरै दीन के हेतु

सन्त बाबा हरपाल सिंह जी

परमेसरि दिता बंना ॥
दुख रोग का डेरा भंना ॥
अनद करहि नर नारी ॥
हरि हरि प्रभि किरपा धारी ॥ 1 ॥
संतहु सुखु होआ सभ थाई ॥
पारब्रहमु पूरन परमेसरू
रवि रहिआ सभनी जाई ॥ रहाउ ॥
धुर की बाणी आई ॥
तिनि सगली चिंत मिटाई ॥
दइआल पुरख महरवाना ॥
हरि नानक साचु वखाना ॥ अंग - 628

परम सम्माननीय गुरू प्यारी साधु संगत जी! आओ! ख्यालों को बाहर जाने से रोकें तथा चित्त वृत्तियों को एकाग्र करते हुए जिह्वा की पवित्रता के लिए सारे ही उच्चारण करो जी 'सतिनाम श्री वाहिगुरू'। पातशाह जी की अपार कृपा है कि रतवाड़ा साहिब वाले महापुरुषों के जन्म दिवस तथा उनकी याद में इस धरती पर सत्संग हो रहे हैं -

रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ ॥
हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ ॥ अंग - 156

कितना समय बीत गया है। समय है ही ऐसा कि -

इह ठहिरन जाँच ना जाणदा,
लंघ गिआ न मुड़ के आँवदा।

केवल यादें रह जाती हैं -

सन् 1609 ई. में धन्य-धन्य श्री गुरू हरिगोबिंद महाराज जी ने श्री अकाल तख्त साहिब जी की स्थापना की, जहाँ पर कि मीरी व पीरी का यानि कि राजनीति व धर्मनीति का सुमेल हो क्योंकि यदि इनका तालमेल ठीक बैठ जाए तो फिर राजा न्यायकारी बन जाता है। यदि मीरी (राजनीति) पीरी (धर्म) के नीचे चले तो फिर वहाँ पर सत्युग ही बन जाता है यानि कि वहाँ पर सत्य का राज होता है। धन्य गुरू हरिगोबिंद महाराज जी स्वयं ईंटें लगाते तथा बाबा बुड्ढा जी गारा बनाते और ईंटें पकड़ाते। कितनी महान सेवा अकाल तख्त की हुई और आज के दिन अकाल तख्त की स्थापना हुई। यह भी अकाल पुरुष की बहुत बड़ी कृपा की बदौलत ही हो सका। दरअस्ल जो राजनीति होती है, यह चार सोपानों पर आधारित होती है। ये चार सोपान होते हैं - साम, दाम, दण्ड व भेद। दिल्ली शहर के अन्दर जो चाणक्यपुरी है वह ऋषि चाणक्य के नाम पर ही बनी हुई है अधिकतर राजनेता वहीं पर रहते हैं। उस ऋषि ने एक ग्रन्थ लिखा जिसमें उसने राजनीति के उपर्युक्त चार स्तम्भ बतलाए हैं। 'साम' होता है - प्यारपूर्वक। 'दाम' का तात्पर्य है - धन के बल पर, जैसे कि 'नोट के द्वारा वोट'। इसके आगे है - दण्ड के द्वारा यानि कि यदि इस प्रकार से नहीं मानते तो फिर डरा धमका कर तथा दण्ड देकर और अन्तिम है भेद के द्वारा। वैसे तो सभी राजनेताओं को गोपनीयता की कसम चुकाई जाती है, लेकिन भेद क्या है? असली बात तो यह थी कि इस भेद को गुप्त रखना है लेकिन वे लोग करते कुछ और हैं तथा कहते कुछ और हैं। इसीलिए अपने महापुरुषों ने विश्व गुरमति रूहानी मिशन की स्थापना की क्योंकि उनकी विश्व व्यापी सोच थी -

एहु विसु संसारू तुम देखदे
एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ ॥
अंग - 922

उन्होंने ये वचन किए थे कि ये जो समय की सरकारें होती हैं इनके द्वारा किए गए समझौते उसी समय तक कायम रहेत हैं, जब तक इनके हित सुरक्षित रहते हैं। यदि इनके हित की पूर्ति उस समझौते के द्वारा न हो रही हो तो ये उसी समय समझौते को तोड़ देते हैं। अब धन्य श्री गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी यह सब कुछ जानते हैं -

घट घट के अंतर की जानत।
भले बुरे की पीर पछानत। (चौपई)

आपको पता था कि ये लोग राजनीति खेल रहे हैं, भले ही उन्होंने धर्मनीति को, राजनीति के ऊपर रखा कि आप इस प्रकार से किले को खाली करके चले जाओ और आपको कुछ भी नहीं कहा जाएगा। तीन सौ पचास वर्षीय स्थापना दिवस, श्री आनन्दपुर साहिब का मनाया गया। इसी स्थान को खाली करवाने के लिए ही मुगल शासकों के द्वारा यह राजनीति प्रयोग में लाई गई। क्या थी वह राजनीति! औरंगजेब की तरफ से हस्तलिखित चिट्ठी लिखी गई और उस पत्र के साथ आटे की गाय बनाकर तथा गीता का पावन ग्रन्थ एवं कुरान शरीफ का पावन ग्रन्थ भी भेजा गया। अब सरकार

के राजदूत जाते हैं और वे सौगन्धें खाते हैं कि आप किले को खाली कर दो, आपको कोई कुछ भी नहीं कहेगा, जहाँ आपका मन करता है वहाँ पर आप चले जाओ। आपके साथ कोई भी लड़ाई झगड़ा नहीं है। गुरू महाराज जी इस सारी रहस्यात्मक बात से पूर्णत: भिज्ञ थे, लेकिन जब इतने पावन ग्रन्थों की बात आई, उनकी आन, बान और शान की बात आई, उनकी मर्यादा की बात आई तो धन्य श्री गुरू गोबिंद सिंह महाराज जी ने फिर सब कुछ ही कुर्बान कर दिया। आपने धर्म की नीति को बरकरार रखा कि हमें दीन की जरूरत है और फिर शूरवीर व्यक्ति का काम भी यही हुआ करता है –

सूरा सो पहिचानीऐ जो लरै दीन के हेत।
पुरजा पुरजा कट मरै कबहुं न छाडै खेत।

शूरवीर कौन है? जो दीन व पीरी को ऊपर रखकर विचरण करता है। पीरी है शीश और राजनीति (मीरी) है पैर। धर्म जो है दस्तार (पगड़ी) की भांति है और राजनीति पैर के जूते की भांति है। इसीलिए सच्चे पातशाह जी ने अकाल तख्त को ऐसे महान तख्त के रूप में स्थापित किया जहाँ पर कि समस्त पन्थक मामले सुलझाए जाते थे कि यह सच्ची सरकार का तख्त है। इस प्रकार से गुरू हरिगोबिंद महाराज जी ने मीरी तथा पीरी का सिद्धान्त रूपमान किया।

धन्य श्री गुरू गोबिंद सिंह जी महाराज जी के साथ समझौता हुआ लेकिन वह कितनी देर तक कायम रहा? 6 व 7 पूस की रात, ब्रह्ममुहुर्त शुरू हो चुका था, उस समय जब किला खाली कर दिया गया तो फिर क्या हुआ? सारे वादों को भुला दिया गया।

पुरातन समयों में वचन की कीमत इतनी अधिक हुआ करती थी कि उस पर न्यौछावर हो जाया करते थे –

रघुकुल रीत सदा चली आई,
प्राण जाए पर बचन न जाई।

यदि कैकेयी ने राजा दशरथ से वचन ले लिया। एक युद्ध के दौरान जब राजा दशरथ जी घायल हो गए थे तो कैकेयी ने बड़ी ही शूरवीरता का परिचय देते हुए व स्वयं रथ चला कर इसे वहाँ से निकाल कर लाई और उसके प्राणों की रक्षा की। राजा ने प्रसन्न होकर रानी कैकेयी को कहा कि तुम दो वरदान माँग लो तुम जो भी मांगोगी मैं उसे पूरा करूँगा। इसने कहा ठीक है जब समय आएगा तो मैं फिर माँग लूँगी।

इस प्रकार जब समय आया तो इसने वचन माँग लिया। वचन में इसने अपने भरत के लिए राज सिंहासन और श्री रामचन्द्र जी के लिए वनवास माँग लिया। अब यह रीति ही चली आती थी कि लोग वचन से मुनकर नहीं हुआ करते थे–

साध बचन अटलाधा।

हम सबको भी अपने अन्दर विश्लेषण करना चाहिए कि हम किस सीमा तक महापुरुषों के वचनों पर कुर्बान हो रहे हैं? उनके उपदेशों पर कितना चलते हैं? हमें इन बातों पर चिन्तन करना चाहिए। जो यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान व समाधि हैं, ये सब हमारा आन्तरिक विश्लेषण करवाते हैं क्योंकि नाम जो है, वह हमारे अन्दर है और वहाँ तक पहुँचने के लिए ये सब नियम व मर्यादाएँ हैं –

सूरबीर बचन के बली ॥ कउला बपुरी संती छली ॥
अंग – 392

अन्यथा माया सबको भुला देती है लेकिन जो सतगुरू के वचन हैं या जो सतपुरुष है ये हमारे प्रकाश स्तम्भ हैं। एक भी वचन कमा कर देख लो –

संतहु सागरू पारि उतरीऐ ॥
जे को बचनु कमावै संतन का सो गुर परसादी तरीऐ॥
अंग – 747

मैदान-ए-जंग में अर्जुन को जो उपदेश दिया गया कि तुम कर्मयोगी बनो। रणक्षेत्र से भागो नहीं क्योंकि यह शूरवीर का कार्य नहीं है बल्कि शूरवीर का कार्य तो यह है कि –

सूरा सो पहिचानीऐ जो लरै दीन के हेत।

दीन या धर्म के लिए कुर्बान होना ही शूरवीर का परम कर्तव्य है। अपने लिए तो दुनिया लड़ती-झगड़ती है क्योंकि यदि हम संसार के अन्दर हुए अन्य युद्धों पर दृष्टिपात करते हैं तो वे सब जर, जोरू, जमीन के लिए ही हुए दिखाई पड़ते हैं लेकिन धन्य श्री गुरू हरिगोबिंद महाराज जी ने चार युद्ध किए और ऐसा नहीं था कि आपने किसी के क्षेत्र को हथियाने के लिए स्वयं आक्रमण किया हो बल्कि आप तो आक्रमणकारी का मुँहतोड़ जवाब ही देते थे। युद्ध सुबह शुरू हो जाता था और सूर्यास्त से पहले-पहले उस युद्ध की समाप्ति हो जाती थी और युद्ध जीत लिया जाता था। इसके माध्यम से गुरू जी ने यह भी इशारा किया है कि खालसे को तो प्रत्येक समय अपने आन्तरिक दुश्मनों के साथ युद्ध करते रहना चाहिए यथा –

खालसा सो जो करै नित जंग।

यानि कि जो हमारे अन्दर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध आदि बैठे हुए हैं यथा–

राजु मालु रूपु जाति जोबनु पंजे ठग ॥
एनी ठगीं जगु ठगिआ किनै न रखी लज ॥
अंग – 1288

अर्थात इन अन्दर बैठे हुए विकारों के साथ हमेशा युद्धरत रहें। 'देग तेग जग महि दोऊ चलै।' तेग जो है यह

उस सतगुरू के वचन का बाण है।

श्री कृष्ण भगवान जी अर्जुन को कह रहे हैं कि तुम प्रतिज्ञावान हो, सत्य वचन के धारणी हो, अतः अपनी प्रतिज्ञा को पालन करो। वह कहने लगा महाराज जी! प्रतिज्ञा को लेना और उसका पालन करना तो कोई कठिन बात नहीं है।

श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे, अच्छा फिर तुम इतनी सी ही प्रतिज्ञा निभा कर दिखाओ। आप उसे (अर्जुन को) अपनी बैजन्ती माला दे देते हैं और उसके ऊपर माया डाल देते हैं, साथ ही कह देते हैं कि तुम इसे अपने हाथ से मत छोड़ना। कहने लगा, महाराज जी! चाहे मेरे प्राण क्यों न चले जाएँ मैं आपके इस वचन को निभाऊँगा।

अब हुआ क्या कि वह स्नान करने लगा और उधर से एक शेर आ गया। उस समय उसके पास कोई मौके का हथियार भी नहीं था, इसलिए उसके पास जो बैजन्तीमाला थी, उसने वहीं फेंक कर मारी जो कि शेर के मुख पर पड़ गई लेकिन इसके हाथ से तो वह निकल गई।

जब श्री कृष्ण जी प्रकट हुए तो आप कहने लगे कि बैजन्तीमाला?

कहने लगा, महाराज जी! मैं क्या करता क्योंकि उस समय मेरी जान पर ही बन पड़ी थी।

महाराज जी बोले, क्या बात तुम इतनी सी प्रतिज्ञा को ही नहीं निभा पाए?

महाराज जी बोले, हैं तो बहुत लेकिन यदि गिनती करें या ढूँढ़ने जाएं, तो फिर वे मिलते नहीं हैं -

हैनि विरले नाही घणे फैल फकड़ु संसारू ॥

अंग - 1411

श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे चलो फिर तुम्हें दिखला ही देते हैं। आप अर्जुन को साथ लेकर एक घर में चले जाते हैं, वहाँ पर भोजनादि ग्रहण करने का पूरा प्रबन्ध हो गया। श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे, प्रेमीपुरुष! तुम भी आ जाओ और हमारे साथ भोजन ग्रहण करो। वह बोला, महाराज जी पहले मैं अपना क्रिया कर्म कर आऊँ। दरअस्ल पहले समय में यह भी मर्यादा हुआ करती थी कि पाँच स्नाना करके, हाथ अच्छी तरह से धोकर फिर भोजन ग्रहण किया करते थे। अतः वह अपने उन कार्यों को करने के लिए गया लेकिन वह वापिस ही नहीं आया। जब उन्होंने ऊपर चौबारे में जाकर देखा तो पता चला कि वह तो अपने शरीर का ही परित्याग कर गया है।

श्री कृष्ण महाराज जी तो अवतार पुरुष थे, आपने उसे जीवित कर लिया और पूछा कि तुमने ऐसा क्यों किया?

वह कहने लगा महाराज जी! मैं अपनी प्रतिज्ञा को हार रहा था इसलिए मैंने ऐसा किया। अतः मैंने सोचा कि अपनी प्रतिज्ञा को हार जाने से तो कहीं बेहतर है कि मैं अपने शरीर का ही परित्याग कर दूँ। यदि मेरी प्रतिज्ञा ही न रही तो फिर मेरे जीवन का क्या उद्देश्य रह जाएगा? श्री कृष्ण महाराज जी कहने लगे, भद्रपुरुष! तुम वास्तविकता को व्यान करो ताकि अर्जुन को भी समझ आ जाए।

वह कहने लगे, महाराज जी! मैं सौदागर था, फलस्वरूप मैंने बचपन से ही दूर-दूर जाना शुरू कर दिया। जब मैंने जवानी में पैर धरा तो फिर मेरा विवाह हो गया। मैं बड़े समुद्री जहाज में गया और काफी लम्बे समय बाद अपने घर को लौटा। जब मैं अपने गाँव के पास पहुँचा तो दैवनेत से मेरी धर्मपत्नी, गुहारे (एक त्रिशंकु प्रकार का उपले सुरक्षित रखने का स्थान) में से उपलों का टोकरा भरकर उसे उठवाने के लिए किसी सहारे की प्रतीक्षा कर रही थी। जब मैं पास में पहुँचा तो उसने उस टोकरे को उठवाने के लिए कहा, साथ ही उसने वचन भी ले लिया कि तुम मुझे टोकरा उठाते समय येन-केन-प्रकारेण स्पर्श नहीं करोगे। घूँघट में होने के कारण न तो मुझे पता चला कि यह मेरी ही घरवाली है और न ही उसे पता चला कि यह मेरा ही पति है। फलस्वरूप मैंने अन्जाने में उसे वह वचन दे दिया लेकिन जब मैं घर पहुँचा तो मुझे पता चला कि यह तो मेरी ही घरवाली है। अब मैं तो उसे स्पर्श न करने का वचन दे चुका था, अतः मैंने उसके साथ कोई भी सम्बन्ध स्थापित नहीं किया, फलस्वरूप घर में कोई सन्तान भी न आ सकी। माँ कहने लगी कि दूसरा विवाह करना पड़ेगा। अब मेरी घरवाली अपनी दूसरी बहन का रिश्ता ले आई। अब माँ ने मुझसे पुनः वचन ले लिया कि जिस प्रकार से तुमने प्यारपूर्वक पहली पत्नी को रखा है उसी प्रकार से इसे भी रखना। अब माँ ने मुझसे वचन ले लिया। इस प्रकार दूसरी पत्नी भी पहली की भांति ही हो गई।

भगवान जी! आपने मुझे कहा कि हमारे साथ भोजन ग्रहण करो लेकिन मैं तो इनके हाथ का भोजन ग्रहण नहीं करता हूँ क्योंकि मैंने तो वचन दिया हुआ है। अब मैंने सोचा कि अपने वचन को हार जाने से तो अच्छा यही है कि अपने शरीर का ही परित्याग कर दो।

महापुरुषों ने 'सुरति सबदि मारग' नामक पुस्तक के अन्दर इस प्रकार के बहुत सारे दृष्टान्त दिए हैं। इनका सार यही है कि 'सूरबीर वचन के बली' यानि कि वे की गई प्रतिज्ञा को तोड़ते नहीं थे बल्कि आजीवन निभाना अपना परम कर्तव्य समझते थे और फिर साधू के वचनों का तो अक्षरशः पालन किया जाता था क्योंकि -

प्रभ जी बसहि साध की रसना ॥
नानक जन का दासनि दसना ॥ *अंग - 263*

'चलता'

परोपकारी जीवन

प्यारे महापुरुषों के शतवर्षीय जन्म दिवस को समर्पित

(17 जून 1918 से 17 जून 2018)

भाई (डा.) सुखविन्दर सिंह

सिर तों पैराँ तीकर यारो, नूरो नूर जो होइआ।
बदन उस दा शीशा समझो, दोश रहित है गोइआ।
मनमुखाँ दी संगत कोलों, दूर सदा रब रहिंदा।
पर आतम-वेता दे दिल अंदर, रबी नूर समाइआ।

पुर गशत जि सर ता ब-कदम, नूर उल नूर।
आइना कि! दर वे न बव्द हेच कसूर।
तहदीक बदाँअ जि गाफला दूर बव्द
ए दर दिलि आरफाँ खुद करदा जहूर।

भाई नन्दलाल द्वारा रचित उपर्युक्त रुबाई अत्यन्त कमाल की है कि परमात्मा के साथ एकरूप हुई रूह नूरो-नूर हो जाती है। इसमें यह रेखांकित किया गया है कि मन की मर्जी करने वालों को तो साथ में रहता हुआ परमात्मा भी उन्हें दूर ही प्रतीत होता है जबकि आत्मवेत्ता आत्माओं के दिल में वह दिव्य नूर के रूप में पुलकित होता है। 'जनमसाखी' तथा 'गुरवाणी' में इसकी पुष्टि इस प्रकार से होती है -

पोसत मद अफीम भंग, उतर जाइ परभाति।
नाम खुमारी नानका चड़ी रहे दिन राति।
(जनम साखी)

नानक भगता सदा विगासु ॥ अंग - 2

यह शाश्वत उल्लास नूरों के नूर इलाही नूर, वाहिगुरू जी प्रदान करते हैं। इलाही नूर के साथ शरशार हुई शख्सियत नूरानी नूर ही बन जाती है। ईश्वरीय प्रेम के लिए तो आकाश भी अपनी श्रद्धा को भेंट करते हुए धरती को कुछ शब्दों के माध्यम से सिजदा करता है। भाई नन्दलाल जी के अनुसार-

आसमाँ सिजदा कुनद, पेशि जमीं कि बर ओ
घर दो नफस अज पै जिकरि खुदा बि-नसीनद।

आकाश, धरती के आगे सिजदा करता है क्योंकि उसके ऊपर रहने वाला कोई न कोई एकाध व्यक्ति वाहिगुरू जी के सिमरन में लीन रहता ही है। इसी प्रकार के ईश्वरीय प्रेम में सराबोर लोगों के लिए भाई नन्दलाल जी फुरमान करते हैं कि जिस प्रकार से कल्पवृक्ष मन की कामनाओं को पूरा करता है उसी प्रकार से परामात्मा का प्रेम, परमात्मा से मिलाप करवा देता है।

आवै साहिबु चिति तेरिआ भगता डिठिआ ॥
मन की कटीऔ मैलु साधसंगि वुठिआ ॥
अंग - 520

कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु ॥
रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु ॥
अंग - 1373

ब-जेरि साइआ-इ तूबा मुरदहा याबी।
ब-जेरि साइआ-इ मरदानि हक, खुदा याबी।
अर्थात - कलप ब्रिछ दी छाइआ
जे कर मन दी आस पुजावे
छाइआ रबी बंदिआ संदी रब दा मेल करावे।

अर्थात 'तूबा' वृक्ष की परछाई में तुम्हें मन मांगी मुरादें (केवल शारीरिक सुखों के लिए) प्राप्त होंगी जबकि वाहिगुरू जी की कृपादृष्टि रूपी छाया में (साधु संगत में) से तुम सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करोगे।

इस प्रकार की आत्माओं को परमात्मा (वाहिगुरू) मृत्युलोक में समय-समय पर भेजता रहता है। विशेष रूप से वह कुछ समय के लिए, कुछ विशेष कार्यों की सम्पूर्णता हेतु अपने प्यारों को अपना आशीर्वाद देकर भेजता है। यही कारण है कि फिर उन आत्माओं के द्वारा ऐसे कार्य किए जाते हैं जो कि संसार के अन्दर एक प्रकाश स्तम्भ का कार्य करते हैं तथा उनके द्वारा किए गए परोपकारी कार्यों से आने वाली नस्लें तथा पीढ़ियां लाभ उठाती रहती हैं। उनके जीवन के बारे में सोचना व लिखना आम मनुष्य की बुद्धि और कलम के वश से बाहर की बात है अतः परमात्मा में अभेद आत्माओं के जीवन को कोई विरला मनुष्य ही लिख सकता है। उनके बाह्य जीवन को तो सारा संसार जानता है लेकिन उनकी आन्तरिक अवस्था को कौन जान सकता है? *'ब्रहम गिआनी की गति ब्रहम गिआनी जानै।।' अंग - 273।*

आम कल्युगी जीवों के वश की यह बात नहीं है लेकिन

फिर भी उनके द्वारा किए गए वचनों पर आधारित यानि जो कुछ आप समस्त श्रद्धालुजनों के रूबरू होकर वचन किया करते थे, स्मृति को ताजा करते हुए, उनके बारे में दो शब्द लिखने का प्रयास यह कलम कर रही है। हमारी तो यही विनती है कि वे स्वयं ही कलम के माध्यम से अक्षरों का रूप धारण करेंगे। मेरा तात्पर्य प्यारे महापुरुष (श्रीमान सन्त बाबा वरियाम सिंह जी) संस्थापक विश्व गुरमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट, रतवाड़ा साहिब से है। अतः दास, प्यारे के प्यार में, अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार, उनके द्वारा किए गए प्रवचनों के आधार पर उनकी जीवन शैली को नमस्कार करते हुए कुछ शब्दों को लिखने का प्रयास करने जा रहा है।

शाश्वत जीवन – उनके द्वारा किए गए परोपकारी कार्यों के माध्यम से उनके दर्शन आज भी हो रहे हैं। उनका वचन है कि साधू कहीं जाया नहीं करते हैं –

ब्रहम गिआनी सद जीवै नही मरता ॥ अंग – 273

उनके अपने मुखारविन्द से यह वचन है कि साधू तीन रूपों में हमेशा-हमेशा के लिए जीवित रहते हैं। पहला तो यह है कि वे परमात्मा के निर्गुण रूप में समा जाते हैं। वाहिगुरू जी में अभेद हो जाते हैं, केवल शरीर की ब्याधि ही समाप्त होती है –

सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम ॥
जोती जोति रली संपूरनु थीआ राम ॥ अंग – 846

वे ब्रहम रूप होकर ब्रह्म में लीन हो जाते हैं। दूसरा रूप यह है कि आप गुरू प्यार वाली संगत के बीच ही विचरण करते हैं। तीसरा रूप जिसे वे अपनी बागडोर या विरासत सम्भाल कर जाते हैं, उनके माध्यम से समस्त कार्यों की देखरेख करते हैं। अतः इन तीनों रूपों में वे आज भी दर्शन दे रहे हैं। निर्गुण स्वरूप परमात्मा में अभेद, गुरू प्यारी संगतों के माध्यम से तथा ट्रस्ट के वर्तमान मुखी श्रीमान सन्त बाबा लखबीर सिंह जी के माध्यम से संगत को जीवन दान दे रहे हैं।

जीव दान – संसार के अन्दर अनेकों प्रकार के दान प्रचलित हैं। धन-दौलत अर्थात चल व अचल जायदाद के दान, अनाज, वस्त्र, भूमि आदि के दान। ये सभी स्थूल दान हैं लेकिन इनके अतिरिक्त कुछ सूक्ष्म दान भी हैं, जैसे कि मानसिक व बुद्धि के माध्यम से अच्छे कार्य के लिए प्रेरणा देनी। यह भी बेशकीमती दान है लेकिन इनके अतिरिक्त एक और भी दान है जो कि अति सूक्ष्म दान है जिसका भण्डारा केवल सन्तजनों, व परमात्मा के प्यारों के पास ही है। उन्हें परमात्मा, दरगाह से भेजता है कि जाओ, और जाकर, इस दान को संसार में बाँटो –

कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु ॥
रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु ॥
अंग – 1373

यह दरगाह की ड्यूटी है। दूसरा है –

जनम मरण दुहहू महि नाही
जन परउपकारी आए॥
जीअ दानु दे भगती लाईन
हरि सिउ लैनि मिलाए॥ अंग – 749

जीअदान ही श्रेष्ठ दान है। किसी को परमात्मा के साथ जोड़ देना, उस टूटे हुए मनुष्य के अन्दर जीवन की रौ रुमकने लगा देना, परमात्मा की हाजिरी व अस्तित्व को महसूस करवा देना, जीव भाव से उठाकर आत्म भाव में लीनता करवा देनी। यह जीव दान हुआ करता है। नाम के रंग वाला जीवन ही अमर जीवन है। इस रंग के बिना जीवन मुर्दा है।

आखा जीवा विसरै मरि जाउ ॥ अंग – 9

संसार में पराकाष्ठा दर्जे के पाँच गुणों के होते हुए भी मनुष्य मुर्दे के समान है –

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि ङिआनी धनवंत ॥
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत ॥
अंग – 253

अत्यन्त सुन्दरता, उच्च कुल के साथ सम्बन्ध रखने वाला, चतुर मुख का ज्ञानी तथा उच्च दर्जे का कोई धनवान हो लेकिन इतनी विशेषताओं के बावजूद भी वह गुरवाणी के अनुसार मुर्दा ही है क्योंकि परमात्मा के साथ उसकी प्रीति ही नहीं है। उसे तो जीवित मनुष्य ही नहीं समझना चाहिए बल्कि उसका जीवन तो रसायनिक जीवन है। बस खाने-पीने के सहारे उसका जीवन चलता है जबकि वह परमात्मा के प्यार और नाम वाले करंट या जीवन ऊर्जा से पूर्णतः खाली है –

सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ ॥
नानक अवरू न जीवै कोइ ॥
जे जीवै पति लथी जाइ ॥
सभु हरामु जेता किछु खाइ ॥ अंग – 142

वास्तविक रूप से वही जीवित है जो कि नाम के आधार पर जीवित है। परमात्मा के प्यारे, उसे जीवन की रौ प्रदान करते हैं और जीव दान ही बड़ा दान है। इस दान को करने के लिए प्यारे महापुरुषों ने दिन-रात एक किया। सिन्धु (पाकिस्तान) यू.पी., पंजाब, दिल्ली, मुम्बई व देश विदेश के अनेकों श्रद्धालुजनों को नाम वाणी के साथ जोड़ा। आज भी उनके द्वारा दिए गए जीव दान के माध्यम से संगत अपना

जीवन गुजार रही है तथा नाम वाणी के साथ जुड़कर जीवन का लाभ प्राप्त कर रही है।

सिक्खी के तीन सुनहरी उसूलों पर पहरा -

1. किरत करना - आप जी ने जो कुछ भी गुरवाणी में पढ़ा तथा बड़ों से सुना, उसे अपने जीवन के अन्दर कमाया। जिन्दगी के तीनों सुनहरे उसूलों, किरत करना, नाम जपना तथा मिल बाँटकर खाना पर आपने आजीवन पहरा दिया तथा अन्य लोगों को भी इस दिशा में प्रेरित किया। खेतीबाड़ी करते हुए तथा नौकरी वगैरह करते हुए आप ने सच्ची व सुच्ची किरत को तरजीह दी। नौकरी चाहे फौज की थी, चाहे सिविल की थी, इस दौरान कई मौके ऐसे आए कि जिस समय आपको माया के लालच दिए गए लेकिन आप जी ने उन्हें ठोकर मार कर हमेशा सच्ची व सुच्ची किरत के सुनहरी उसूलों पर पहरा दिया। फौज की नौकरी के दौरान आपने मच्छरदानियों के ठेके में हो रहे घोटालों को उजागर किया। आपने आधे दिन की छुट्टी भी नहीं ली ताकि ठेकेदार बेइमानी करके इस ठेके को हासिल करने में सफल न हो जाए। यू.पी. में राजनैतिक पार्टियों द्वारा नोटों के भरे हुए अटैची सामने रख दिए जाते कि आप एक ब्यान हमारे हक में दे दो लेकिन आप जी ने उस माया को ठोकर मारी तथा भविष्य के लिए उन्हें चेतावनी दी कि खबरदार! यदि आइन्दा इस प्रकार की तजवीज लेकर मेरे पास आए। आप जी ने तब -

घालि खाइ किछु हथहु देइ ॥
नानक राहु पछाणहि सेइ ॥ *अंग - 1245*

हकु पराइआ नानका उसु सूअर उसु गाइ ॥
गुरू पीरू हामा ता भरे जा मुरदारू न खाइ ॥
अंग - 145

उपर्युक्त महावाक्यों पर आपने आजीवन पहरा दिया। सिविल सर्विस के दौरान सारे पंजाब को बाढ़ के प्रकोप से बचाना, बिना किसी लालच के समस्त गावों के तालाबों को पानी के साथ भर देना तथा बाढ़ की स्थिति के बारे में अग्रिम सूचना को, अपनी जी-तोड़ मेहनत के द्वारा, पंजाब के लोगों तक पहुँचाना आदि प्रयासों के द्वारा आपने परोपकार के असंख्य कार्य किए। इसके साथ ही खेतीबाड़ी के कार्यों में सख्त मेहनत करके अच्छी फसल पैदा करनी, एक सत्संगी को श्रमिकों की अपर्याप्तता के समय उसके खेत में जत्थे समेत जाकर उसकी गेहूँ कटवा देनी आदि प्रकार के परोपकारी कार्य तथा धर्म की सच्ची आजीविका करने का प्रशस्त मार्ग उन्हीं के हिस्से आया और आपने आजीवन इस पर पहरा दिया।

दूसरा है नाम स्मरण - आपको विरासत से ही सिक्खी की लगन प्राप्त हुई थी। आप जी के पिता जी, जत्थेदार सरदार करतार सिंह जी के पास साधुओं व सन्तजनों का आना जाना बराबर बना रहता था। इनके परिवार को नगर धमोट में 'अकाली' कहा जाता था। इन्हें गुरमति की समझ पूर्वजन्मों की तपस्या की बदौलत विरासत से ही प्राप्त हुई थी। आप बचपन से ही गन्ने के खेतों में तथा गन्ने के कोल्हू के खड्डों में बैठकर नाम का अभ्यास किया करते थे। आप प्रातः दो बजे उठकर व स्नान करके सिमरन में लीन हो जाते तथा फिर सुबह होने पर 'आसा दी वार' का कीर्तन गुरुद्वारा साहिब में जाकर करते एवं सहज पाठ व श्री आखण्ड पाठ साहिब की सेवा निभाने का कार्य करते थे। मानसे के सघन जंगलों में, सिन्धु प्रदेश में और बाद में उत्तर प्रदेश में कृषि फार्मिंग के साथ-साथ नाम की कमाई करना, उनके भाग्य में ही लिखा था।

तीसरा है मिल बाँट कर ग्रहण करना - गुरमति के तीसरे सुनहरी उसूल पर पहरा देते हुए जहाँ पर भी प्राकृतिक आपदा आई चाहे वे गुजरात के भूकम्प के रूप में सामने आई। चाहे कोई अन्य प्रकार की प्राकृतिक आपदा आई, आपने अपने सत्संगियों को साथ में लेकर पीड़ितों की अधिकाधिक सहायता की, मिलबाँट कर ग्रहण किया तथा किसी के भी दर्द व पीड़ा को अपना जानकर उसके दर्द को बंटाया। अतः आपने इस पर आजीवन पहरा दिया।

पूजा अकाल की, पर्चा शब्द का, दीदार खालसे का

जब हम आप जी के जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें उपर्युक्त तीनों सिद्धान्तों की रूपमानता स्पष्ट रूप से प्रतीत होती है। आपने आजीवन एक अकाल पुरुष वाहिगुरू जी को माना, पूजा अकाल की की, इसीलिए आपके परिवार को अकाली कहा जाता था। भले ही आज इस शब्द के सिद्धान्त की परिभाषा व्यवहारिक रूप से पूर्णतः बदल चुकी है। आपने सदैव 'जागत जोति जपै निसि बासर ऐक बिनाँ नहि एक पछानै।' के सिद्धान्त पर पहरा दिया, उस परमात्मा के नाम की आराधना की तथा अन्य लोगों को भी एक अकालपुरुष वाहिगुरू के साथ जोड़ा।

दीदार खालसे का - आप जी ने 'खालसा मेरो रूप है खास, खालसे महि हौं करहुं निवास।' के सिद्धान्त पर पहरा देते हुए समस्त कार्य खालसे के माध्यम से ही करवाए। प्रत्येक कार्य में पाँच प्यारों की अगुवाई ली तथा प्रत्येक कार्य की शुरूआत पाँच प्यारों के माध्यम से करवाई।

इस सम्बन्ध में एक उदाहरण का जिक्र आपके सामने रख रहे हैं कि गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब का निर्माण कार्य शुरू करने से पहले आप जी ने बड़ी ही शानो-शौकत एवं श्रद्धा व प्यार सहित संगत की विशाल एकत्रता में पाँच प्यारों के रूप में खालसे के माध्यम से ही इसका शिलान्यास करवाया। आप अपना अधिकाधिक समय संगत के बीच ही गुजारा करते थे। इससे यह सिद्ध होता है कि आप जी दीदार खालसे के सिद्धान्त पर श्रद्धा व प्यार रख कर विचरण करते थे।

तीसरा वेशकीमती सिद्धान्त है पर्चा शब्द का

गुर का बचनु बसै जीअ नाले ॥ अंग - 679

एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है
बाहुड़ि जनमि न आवा ॥ अंग - 795

बचपन से लेकर शरीर के अन्तिम समय तक आपने समस्त संगत को शब्द गुरू के साथ ही जोड़ा तथा -

आगिआ भई अकाल की तबै चलाइओ पंथ,

सभ सिखन कउ हुकम है गुरू मानिओ ग्रंथ॥

के सिद्धान्त पर स्वयं पहरा दिया तता संगत को अपनी प्रत्येक प्रकार की जरूरत को पूरा करने के लिए 'शबद' का सहारा लेने के लिए ही प्रेरित किया। अपने प्रत्येक को गुरवाणी के साथ ही जोड़ने का प्रयत्न किया न कि स्वयं के साथ। आपने सदैव ही समर्थ सतगुरू की महिमा का ही गायन किया और इसीलिए प्रत्येक प्राणी को श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के साथ जुड़ने के लिए ही प्रेरित किया। उनके अथक प्रयासों की बदौलत ही लाखों श्रद्धालुजन आज श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के साथ जुड़कर शब्द के पर्चे के माध्यम से लोक व परलोक के सुख प्राप्त कर रहे हैं।

आप जी के बारे में भविष्य के वचन - परमात्मा के साथ अभेद हो चुकी आत्माओं के द्वारा आपके बारे में किए गए भविष्यत वचन आपके बारे में पूर्णतः सही साबित हुए। यानि कि -

अंड बिनासी जेर बिनासी उतभुज सेत बिनाधा ॥
चारि बिनासी खटहि बिनासी ईक साध बचन निहचलाधा ॥ अंग - 1204

का सिद्धान्त प्रत्यक्ष रूप से रूपमान हुआ। पिछले जन्म में आपका नाम हरनाम सिंह था। पिता जी के कुएँ पर साधुओं का आना जाना प्रायः लगा ही रहता था। इन्हीं परम हंसों में से एक जटाओं वाले साधू ने आपके कुएँ पर आकर भविष्य के सम्बन्ध में वचन किया जो कि शत प्रतिशत सही साबित हुआ।

एक बार सन्त बाबा अतर सिंह जी मस्तूआणे वाले आपके कुएँ पर आए। आप जी को महापुरुषों ने बहुत प्यार किया। आप खेलते-खेलते उनकी गोद में ही जाकर बैठ गए। दादा जी को आपने वचन किया कि आपके घर एक तपस्वी बालक आया है इसलिए कभी भी इसे अपशब्द नहीं बोलने इसके चरणों में पद्मरेखा है, यह बड़ा होकर तपस्वी साधू बनेगा और इसका बहुत अधिक प्रताप होगा। समय के अन्तराल के साथ ये भविष्य के वचन सही साबित हुए।

अगम्य बात तथा पूर्वजन्म का ज्ञान

आप जी को पिछले जन्मों का पूरा ज्ञान था। सन्त महाराज राड़ा साहिब वालों के साथ पहले मिलाप में हुए प्रवचनों के दौरान आप जी ने उन्हें अपने पिछले जन्मों के बारे में बताया। यह सब अगम्य बातें हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि आप जी की सारी कमाई, एक जन्म की नहीं अपितु विगत कई जन्मों की तपस्या का प्रतिफल था और यही कारण था कि आप इस जन्म में सूर्य की भांति चमके।

बचपन के शौक - आप जी को बचपन से ही नाम वाणी का अत्यधिक शौक था, लगन थी। परिवार में गुरसिक्खी होने के कारण विरासत का माहौल कारगार सिद्ध हुआ। पाँच वर्ष की अल्पायु में ही अमृतपान करके गुरसिक्खी में परिपक्व रहने वाला जीवन आपने शुरू किया। स्कूल में पढ़ते समय अध्यापक के कहने पर आपने तम्बाकू शब्द को अपनी पुस्तिका में न तो लिखा और न ही अपनी जुबान से उसका उच्चारण ही किया क्योंकि उसी समय से आपको इस बात की समझ थी कि तम्बाकू (जगत जूठ) शब्द को अपने मुख से बोलने पर अपनी जिह्वा अपवित्र हो जाती है। 70,000 बार नित्य प्रतिदिन वाहिगुरू का मन्त्र का जप करना आपका नित्यनेम था। इसके अतिरिक्त आप गुरवाणी पढ़ते, स्त्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का पाठ करते गुरवाणी के शुद्ध उच्चारण की शिक्षा लेकर, शुद्ध पाठ करने व कीर्तन करने का शौक आपको बचपन से ही था। नाम वाणी की लगन, आए गए साधू की सेवा की लगन, कीर्तन, भजन, पाठ, बन्दगी में लीन रहना आप जी के जीवन का मुख्य उद्देश्य था।

अन्य महापुरुषों के साथ प्यार - परमात्मा के प्यारों के प्रति आप जी सदैव ही आकर्षित रहते थे। किसी भी गुरुमुख के दर्शन करके गद्गद् हो जाना, उसके वचन

सुनने, उसकी सेवा करनी आदि कार्यों में आपकी रुचि सदैव ही बनी रहती थी। इनमें से प्रमुख रूप से बाबा नन्द सिंह जी कलेरां वालों के प्रवचन सुनने का तथा उनकी सेवा करने का सौभाग्य भी आपको प्राप्त हुआ। उनके अतिरिक्त सन्त ईशर सिंह जी कलेरां वाले, सन्त अतर सिंह जी, सन्त बाबा जोध सिंह जी की संगत भी आपको प्रचुर मात्रा में प्राप्त हुई लेकिन दिल का सौदा तो जहाँ पर होना था, वहीं होना था लेकिन आप प्यार व सम्मान सबका ही करते थे।

सन्त महाराज राड़ा साहिब वालों के साथ मिलाप

16 वर्ष की शारीरिक आयु में आप जी का नूरानी मिलाप सन्त महाराज सन्त ईशर सिंह जी राड़ा साहिब वालों के साथ हुआ। उस समय उनकी शारीरिक आयु लगभग 30 वर्ष की थी। आपकी माता जी जब आपको सन्त महाराज सन्त ईशर सिंह जी के पास लेकर गए तो आपके मन में एक दिव्याकर्षण उत्पन्न हुआ। बस एक मिलाप में ही दिल का सौदा हो गया –

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे
भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी ॥
मिटिओ अंधेरू मिलत हरि नानक
जनम जनम की सोई जागी ॥ *अंग – 204*

पहली मुलाकात के दिव्य वचन – तुम्हारा नाम क्या है? तुम कौन हो? कहाँ से आए हो? सवाल आपके सामने आए और ये सवाल आत्मिक रंग में रंगे हुए सन्त महाराज राड़ा साहिब वालों ने आपको किए। आपके द्वारा उत्तर में क्षणिक विलम्ब हुआ और फिर आत्मिक मण्डल का ही जवाब आया कि मैं एक परम ज्योति में से ही अलग हुआ हूँ। कुएँ की रस्सी की भांति उसके एक सिरे पर गाँठ है। इस प्रकार का दिव्य उत्तर सुनकर सन्त महाराज जी समाधिस्थ हो गए और आप 45 मिनट की समाधि के बाद बोले कि आज सुहागिन को सुहागिन मिली है। यह एक अलौकिक वचन था। सारे जीवन का सार इस एक वचन में ही निहित था। बस फिर उस घड़ी से लेकर ऐसा गाढ़ा प्यार उनके साथ पड़ा यानि कि ऐसा दिल का सौदा उनके साथ हुआ कि आप तन, मन व धन से उनको ही समर्पित हो गए। आपने अपना सारा जीवन उनके प्यार व वैराग्य में ही व्यतीत किया।

भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी का प्यार

आप जी के परिवार का प्यार सभी सम्प्रदायों के महापुरुषों के साथ था। आखण्ड कीर्तन जत्थे, नानकसर सम्प्रदाय, दमदमी टकसाल व होती मरदान सम्प्रदाय इनमें से विशेष हैं। आखण्ड कीर्तनी जत्थे के मुखी महापुरुष भाई साहिब भाई रणधीर सिंह जी के साथ आपके परिवार का अथाह प्यार था। एक बार जब आप जी का मिलाप उनके साथ हुआ तो आप चौंकड़ी मार कर एक दिव्य रस में लीन हुए झूम रहे थे। भाई साहिब जी की दृष्टि जब आपके ऊपर पड़ी तो वे आपको देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने आपको बहुत प्यार किया। भाई साहिब जी ने आपको पूछा कि आप झूम क्यों रहे थे? तो आपने जवाब दिया कि मुझे बहुत रस आ रहा था। उन्होंने पूछा, किस चीज का रस? आपने कहा कि शब्द का रस। फिर उन्होंने पूछा, कौन सा शब्द? आपने कहा –

मनि बैरागु भइआ दरसनु देखणै का चाउ ॥
अंग – 50

यह सुनकर आप बहुत अधिक हैरान हुए और आप जी को अपने आलिंगन में लेकर अथाह प्यार किया तथा अपने जत्थे के सिंहों को इनकी अवस्था के बारे में बतलाते हुए उन्हें नाम जपने के लिए प्रेरित किया। भाई साहिब जी का आपके परिवार के साथ इतना प्यार था कि सम्माननीया बीजी (जीवन संगिनी, महापुरुष) के पिता जी को आपने अपनी पुस्तक 'रंगले सज्जन' में 'सन्त' की उपाधि के साथ सम्मानित किया। आपने सम्माननीया माता जी के पिता जी को 'सन्त हीरा सिंह जी' कह कर निवाजा। दरअस्ल बीजी के पिता जी भी एक दिव्यात्मा थे। अपनी चाची जी के कहने पर उनका 'नाम' चला देना और तीन दिन की सहज समाधि की अवस्था में पहुँचा देना, मुम्बई से आए व्यक्ति को उसके बुरे कृत्यों के लिए उसे ताड़ना करनी, फलेवाल नगर (नजदीक लुधियाना) में अमृत संचार के समय आठवीं कक्षा में पढ़ने वाले बच्चे को जलाल युक्त अमृतयुक्त छींटा मारकर उसे 56 घंटे की समाधि में पहुँचा देना, आदि उनकी दिव्य लीलाओं के ही चन्द उदाहरण हैं।

माया में उदासी

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे ॥
सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे ॥
अंग – 938

घर में रहते हुए, सारी जिम्मेवारियों को सम्भालते हुए, आप जी ने कमल के फूल की तरह निरलेपता वाला जीवन व्यतीत किया। अन्दर से नाम वाणी की लगन होते हुए भी, सारे कार्य करते हुए, गृहस्थ जीवन की जिम्मेवारियाँ निभानी यह सब एक कठिन रास्ता था। परन्तु आप सब कुछ करते हुए भी निरलेप ही रहे।

गृहस्थ जीवन – परमात्मा के हुक्मानुसार संयोग तथा वियोग का कार्य चल रहा है –

संजोगु विजोगु दुइ कार चलावहि
लेखे आवहि भाग ॥ *अंग – 7*

गुरवाणी के पावन सिद्धान्तानुसार आप जी के संयोग, सन्त बाबा हीरा सिंह जी दाउदपुरिए की होनहार बेटी (सम्माननीया बीजी) रणजीत कौर जी के साथ लिखे हुए थे। बीजी के पिता जी श्री आखण्ड पाठ साहिब की सेवा निभाने के सन्दर्भ में आपके घर आए हुए थे। जत्थेदार बाबा करतार सिंह जी (महापुरुषों के पिता श्री) को आपने वचन किया कि सात वर्षों के बाद आपके घर एक बेटे ने जन्म लेना है और मेरे घर एक बेटी ने जन्म लेना है। दोनों के संयोग धुर दरगाह से लिखे हुए हैं, इसलिए यह लो एक रुपया जिसे कि मैं शगुन के तौर पर दे चला हूँ। ठीक इसी प्रकार से दोनों आत्मिक मण्डल की आत्माओं के शारीरिक जन्म हुए और संयोग की कार के अनुसार विवाह कार्य सम्पन्न हुए।

बीजी की तप साधना व महापुरुषों का साथ

सम्माननीया माता रणजीत कौर जी, जिन्हें कि संगत प्यार व सम्मानपूर्वक 'बीजी' कहकर सम्बोधित करती है, ने महापुरुषों का, प्रत्येक समय व प्रत्येक कार्य में बखूबी साथ निभाया। 'सन्त' बनकर समाज में विचरण करने को आप तरजीह नहीं देते थे अपितु आप सदैव यही सुझाव देते कि घर में रहो, कारोबार करो, सच्ची-सुच्ची जीविकोपार्जन करते हुए, जरूरतमन्द लोगों के साथ मिल बाँटकर उसे ग्रहण करो तथा सबका भला करते रहो। यह उनके अत्यन्त अर्थपूर्ण वचन थे कि किसी के आगे हाथ नहीं फैलाना बल्कि उचित साधनों के माध्यम से की गई जीविकोपार्जन में से मिल बाँटकर ग्रहण करना ही अत्युत्तम है यानि कि दूसरों को देना ही देना है, लेना नहीं। संगत के द्वारा दी गई प्रेम भेंट व चढ़ावे आदि को आप अपनी कोठी में घुसने ही नहीं देते थे और उसे बाहर ही किसी जगह पर सम्भालने को तरजीह देते थे। आप जी प्रत्येक समय नाम स्मरण में लीन रहते हुए घर के काम काज में व्यस्त रहते। खेतीबाड़ी के कार्यों में महापुरुषों का साथ निभाना और उसके बाद बड़ा कार्य जो कीर्तन दीवानों का था, उसमें बहुत बड़ा योगदान बीजी का रहा। सिन्धु (पाकिस्तान), यू.पी. से लेकर चण्डीगढ़ के क्षेत्र में गुरमति का प्रचार बड़े स्तर पर हुआ। रूपनगर जिले के रतवाड़ा साहिब क्षेत्र में कीर्तन समागमों के दौरान बीजी ने बहुत ही व्यवस्थित मार्गदर्शन, महिलाओं का किया। आप उन्हें प्रायः गुग्गा-माड़ी, पीरों व कब्रों आदि की पूजा करने से हटाकर श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी के साथ जुड़ने की प्रेरणा करते। इस प्रकार से आपने दिन रात एक करके महापुरुषों द्वारा आरम्भ किए गए मिशन में अपना बहुमूल्य योगदान किया। आप जी के जीवन के बारे में जिक्र किए बिना महापुरुषों के जीवन पर प्रकाश डालना अधूरा ही होगा क्योंकि प्रत्येक कार्य की सफलता में आपका बहुमूल्य योगदान होता ही था।

सिन्धु में गुरमति प्रचार – 'आपि जपहु अवरह नामु जपावहु।।' (अंग – 290) पर पहरा देते हुए सिन्धु प्रदेश (वर्तमान समय में पाकिस्तान में है) में जाकर भी आप जी ने गुरमति का प्रचार किया। आपने एकान्त जगह देखकर बन्दगी करनी शुरू की। पुलिस की भर्ती में नियोक्ता पुलिस अधिकारी ने आपकी समाधि में लीनता को देखकर आपको फौज में भर्ती होने के लिए प्रेरित किया। दरअस्ल पुलिस की कार्यशैली को ध्यान में रखते हुए किसी बन्दगी वाली रूह का इस कार्य प्रणाली में सामंजस्य बैठ पाना नामुमकिन प्रतीत हो रहा था।

आप जी एकान्त जगह देखकर बन्दगी में जुड़ गए और भोजन का भरोसा आपको परमात्मा पर ही था। लीला यह घटित हुई कि परमात्मा ने एक माता को प्रेरणा देकर आपके लिए भोजन पहुँचा दिया। आपके जीवन में एक नहीं बल्कि अनेकों लीलाएँ घटित हुईं। इन समस्त लीलाओं को लेखनी के द्वारा लिख पाना नामुमकिन ही है। लेख के लम्बा हो जाने के भय से भी लीलाओं का संक्षिप्त विवरण ही तर्कसंगत होगा। आपके जीवन को सविस्तार रूप से जानने के लिए आपकी जीवनी वाली पुस्तक 'जन परउपकारी आए' रतवाड़ा साहिब ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित की गई है, जिसे आप लेकर पढ़ सकते हैं।

युक्ति के साथ मुक्ति

सिन्धु प्रदेश में आप जी भजन बन्दगी में लीन रहा करते थे। परमेश्वर द्वारा प्रेरित किए गए एक नजदीकी जिमींदार ने आप जी को भोजन ग्रहण करवाने की इच्छा प्रकट की। आप जी ने भोजन ग्रहण करने के लिए एक शर्त रख दी कि मैं इस प्रकार से भोजन ग्रहण नहीं करूँगा बल्कि मुझसे अपने खेतों में काम करवाओ और तभी मैं अपने द्वारा की गई मेहनत के प्रतिफल के तौर पर ही भोजन ग्रहण करूँगा। उनके बहुत जोर डालने पर भी आपने मुफ्त में भोजन ग्रहण करना स्वीकार नहीं किया। इस प्रकार से आप खेती के कार्यों में उनका हाथ बँटाने लग पड़े और साथ ही अपने वचन किया कि मैंने अपना पारितोषक भी लेना है। उन्होंने पूछा, क्या लोगे? महापुरुषों ने कहा कि आप मेरे साथ-साथ बोलो और

इस प्रकार से उन्होंने उस कृषक (जिमींदार) को जपुजी साहिब याद करवा दिया, मूल मन्त्र का अभ्यास करवाया तथा आपने उन्हें सभी प्रकार के नशों से छुटकारा दिला दिया। बाद में आपने उन्हें अमृतपान करवा कर गुरू ग्रन्थ साहिब जी के साथ जोड़ने का महान कार्य भी किया। इस प्रकार से आपने एक परिवार को ही नहीं अपितु अनेकों परिवारों को शब्द गुरू के साथ जोड़ा।

जाति पात से ऊपर – एक गरीब परिवार के परिवार की लगन को देखते हुए आप उसके घर भोजन ग्रहण करने के लिए पहुँच गए लेकिन तथाकथित ऊँची जाति वालों के द्वारा उनका वहिष्कार करने की बात जब चली तो भरी पंचायत में आपने उन सबको गुरवाणी के प्रकाश में समझाया कि प्रेमीजनो सभी लोग उस परमात्मा के जीव हैं और जब वायु, पानी, धरती, आकाश और आग की कोई जाति नहीं है तो फिर मनुष्य की जाति कैसे हो सकती है?

अगै जाति न जोरू है अगै जीउ नवे ॥
जिन की लेखै पति पवै चंगे सेई केइ ॥ अंग – 469

सा जाति सा पति है जेहे करम कमाइ ॥
जनम मरन दुखु काटीऐ नानक छूटसि नाइ ॥
अंग – 1330

अवलि अलह नूरू उपाइआ कुदरति के सभ बंदे ॥
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे ॥
अंग – 1350

सरब जोति तेरी पसरि रही ॥
जह जह देखा तह नरहरी ॥ अंग – 876

सभ महि जोति जोति है सोइ ॥
तिस दै चानणि सभ महि चानणु होइ ॥ अंग – 13

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी
हरि बिनु अवरू न देखहु कोई ॥
हरि बिनु अवरू न देखहु कोई
नदरी हरि निहालिआ ॥
एहु विसु संसारू तुम देखदे
एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ ॥
अंग – 922

बिसरि गई सभ ताति पराई ॥
जब ते साधसंगति मोहि पाई ॥ 1 ॥ रहाउ ॥
ना को बैरी नही बिगाना
सगल संगि हम कउ बनि आई ॥ अंग – 1299

नीचा अंदरि नीच जाति नीची हू अति नीचु ॥
नानकु तिन कै संगि साथि वडिआ सिउ किआ रीस॥
अंग – 15

उपर्युक्त शब्दों के माध्यम से गुरवाणी की समझ होने पर सभी नगरवासियों ने क्षमायाचना की और भविष्य में जाति पात से ऊपर उठकर सबके साथ प्यार करने की वचबद्धता दोहराई।

अतः गुरमति के सिद्धान्तों की आपने कमाई की एवं अन्य लोगों को भी इसकी प्रेरणा की।

सच्ची सरकार की चाकरी – सांसारिक सर्विस, जिसमें सिविल सचिवालय की सर्विस थी, को तिलांजलि देकर सन्त महाराज राड़ा साहिब वालों के प्रवचनों पर पहरा देते हुए आप जी ने खेतीबाड़ी का कार्य किया तथा एक सफल किसान कार्य के साथ-साथ आपने धर्म का प्रचार कार्य भी जारी रखा एवं हमेशा के लिए गुरू की सेवा में तत्पर रहने का प्रण किया।

यू. पी. में गुरमति प्रचार – तत्कालीन समय में यू. पी. के तराई क्षेत्र में रहने वाले सिक्खों की दशा बद से बदतर हो चुकी थी। सिक्ख लोग अपनी विरासत को तिलांजलि देकर कुरीतियों व कुकर्मों की दलदल में प्रवेश कर चुके थे। अतः सन् 1969 ई. में श्री गुरू नानक देव जी की पाँच सौ वर्षीय शताव्दी पर पाँच सिंहों के माध्यम से अरदास करवा कर आपने गुरमति प्रचार का बीड़ा उठाया। सिक्खों की अत्यन्त दयनीय दशा के कारण आप अत्यन्त चिन्तित थे। पंजाबी लोगों ने यू. पी. के तराई क्षेत्र में जाकर जमीनों को आबाद किया, जंगल को उखाड़ा और जी तोड़ परिश्रम किया लेकिन इसके साथ-साथ वे कुरीतियों के शिकार भी हो गए। वे लोग व्यसनों में डूबते चले गए तथा साथ ही वे लोग चोर, डाकू व स्मगलर भी बन गए। उन तमाम लोगों की इन समस्त गिरावटों को देखकर आप जी के मन में चिन्ता भी हुई और उन पर दया भी आई। अतः आपने गुरू जी का सहारा लेकर गुरमति का प्रचार कार्य करने का बीड़ा उठा लिया। आपने सादे ढंग से व सीमित साधनों के माध्यम से, खेती कार्य के साथ-साथ दीवान लगाने शुरू कर दिए। सहयोगी जनों का काफिला शनैः शनैः बड़ा होता चला गया। चले थे अकेले पर काफिला जुड़ता गया। सतगुरू जी की कृपा की बदौलत अनेकों प्राणी बुरी कुरीतियों का त्याग करके खण्डे बाटे का अमृतपान करने लग पड़े, फलस्वरूप उनके द्वारा जीवन जीने का तरीका ही बदल गया। यहीं पर ट्रस्ट के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी का मिलाप आपके साथ हुआ।

ट्रस्ट के वर्तमान मुखी श्रीमान सन्त बाबा लखबीर सिंह जी के प्रति आपके अलौकिक वचन

यू. पी. में चल रहे आप जी के दीवान में सन्त बाबा लखबीर सिंह ाेज ने कीर्तन श्रवण किया। दर्शन करते ही आपके मन को एक विशेष प्रकार की सन्तुष्टि प्राप्त हुई कि ये पूर्ण महापुरुष हैं। दीवान के बाद समाप्ति का समय आया। अरदास की सेवा निभाने वाला कोई प्रेमी आगे न आया। उस समय अरदास व हुक्मनामे की सेवा बाबा लखबीर सिंह जी ने निभाई। प्यारे महापुरुषों ने जौहरी की भांति हीरे की पहचान करते हुए आपको अपने आलिंगन में ले लिया और भविष्य के बारे में वचन किए कि वाह! पिछली भी बहुत तपस्या है। यह गुरमति की लहर तुमने ही सम्भालनी है। बस उस घड़ी से ही आप भी उन्हीं के होकर रह गए। अपनी सर्विस का त्याग करके जुलाई 1986 ई. से पक्के तौर पर आप रतवाड़ा साहिब आ गए और पृथक-पृथक रूप में आपने अपनी सेवाएं देनी शुरू कर दीं। भले ही आप इससे पहले भी महापुरुषों के पास चण्डीगढ़ में सन् 1978 से ही आया करते थे। विशेष रूप से आप जी को कीर्तन की सेवा महापुरुषों ने प्रदान की। इसके अतिरिक्त अन्य भी कई प्रकार के बहुमूल्य कार्यों की सम्पन्नता आप जी के द्वारा ही होती।

चण्डीगढ़ व रोपड़ के क्षेत्र में गुरमति प्रचार - सन् 1978 से ही आप जी यू.पी. से इधर आ गए और यहाँ पर आकर तथा लोगों के पत्लोन्मुख रूप को देखकर आप पुनः चिन्तित हो गए। यहाँ पर भी बंजर जमीन तोड़ने वाली ही बात थी। सिक्खी का नामोनिशान यहाँ नहीं था। गाँवों व नगरों के इक्का दुक्का लोगों को छोड़कर आम लोग गुरमति से पूर्णतः अनजान ही थे। प्यारे महापुरुषों ने वचन किया कि तुम लोग स्वयं को पिछड़ा हुआ मत समझो, एक दिन तुम लोग पहले नम्बर पर आ जाओगे। आज उनके वचन साकार हो रहे हैं। अब रोपड़, मोहाली व चण्डीगढ़ के आस पास का क्षेत्र पहले नम्बर पर है। यहाँ पर आप जी ने अपने निजी साधनों के बलबूते पर घर-घर व गाँव-गाँव जाकर गुरमति का प्रचार किया। सन् 1980 ई. में गुरुद्वारा ईशर प्रकाश अस्तित्व में आया और गुरसिक्खी का केन्द्र स्थापित हो गया। फलस्वरूप गुरमति के प्रचार की गति और तीव्र हो गई। श्री आखण्ड पाठ साहिब की श्रंखला, मूलमन्त्र व गुरुमन्त्र का जाप आरम्भ हुआ। एकान्त जगह पर गड्ढों व टिब्बों को समतल करके जंगल में मंगल लग गए -

जिथै जाइ बहै मेरा सतिगुरू
सो थानु सुहावा राम राजे ॥ *अंग - 450*
जिथै बैसनि साध जन सो थानु सुहंदा ॥ अंग - 319

यह निर्जन धरती रतवाड़ा साहिब के नाम से प्रसिद्ध हो गई। भले ही इसका अधिकांश 'मौजा' चाहड़माजरा में पड़ता है लेकिन रतवाड़ा नगर भी पास में होने के कारण रतवाड़ा साहिब नाम प्रसिद्ध हो गया।

गुरमति प्रचार तथा परोपकार का केन्द्र

चण्डीगढ़ के नजदीक में मानो गुरमति प्रचार का श्रोत आरम्भ हो गया। सेवा और सिमरन के कुम्भ चल पड़े। प्रत्येक इतवार, पूर्णमाशी व संक्रान्ति के दीवानों के अतिरिक्त भी अनेकों दीवानों की श्रंखला चल पड़ी। इतवार का दीवान तो महापुरुषों के निवास स्थान पर ही लगा करता था लेकिन चण्डीगढ़ के सैक्टर 19, 34 व 22 के कई गुरुद्वारा साहिब में भी दीवान प्रायः लगते रहते थे। वार्षिक सन्त समागमों की शुरूआत सन् 1990 ई. में हुई। अनेकों श्रद्धालुजनों का इन समागमों में शामिल होना स्वयं में ही अपनी मिसाल प्रस्तुत करता था। लाखों प्रेमीजन अमृतपान करके शब्द गुरु श्री गुरू ग्रन्थ ासहिब जी के साथ जुड़े। इसके अतिरिक्त मिशन के जत्थों के द्वारा आस पास के क्षेत्रों में दीवान सजाए जाते। समय समय पर श्रीमान जी करनैल सिंह, बाबा हरपाल सिंह जी तथा अन्य सिंहों ने भी अपनी सेवाएँ अर्पित कीं। विशेष रूप से ट्रस्ट के वर्तमान मुखी सन्त बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा पूरे पंजाब भर, हिमाचल, हरियाणा, दिल्ली, यू.पी., मुम्बई, कोलकाता, आसाम आदि जगहगों पर जाकर भी धार्मिक दीवान सजाए जाते हैं।

स्वामी राम जी का मिलने आना

विश्व प्रसिद्ध डा. स्वामी राम जी देहरादून से विशेष तौर पर आप जी की महिमा सुनकर, आपसे मिलने के लिए पहुँचे। पारस्परिक वचन हुए। मिलने से पहले स्वामी जी ने वचन किया कि 'हम गले तक भरे हुए हैं दिल करता है कि शरीर का परित्याग कर दें' महापुरुषों ने जीअदान के वचन किए, गुरमति की सूझबूझ प्रदान की। इसके बाद प्रेम में सराबोर होकर स्वामी राम जी ने वचन किया कि ये तो प्रेम का सागर हैं और ज्ञान से लबालब भरे हुए हैं। इनके वचन सुनकर हमें पूर्ण तृप्ति हो गई है। इसके बाद जौली ग्रांट, देहरादून में अस्पताल व मैडिकल कालेज का शिलान्यास महापुरुषों के कर-कमलों द्वारा आपने (डा. स्वामी राम जी ने) करवाया।

वीडियो फिल्मों के माध्यम से प्रचार करने के सम्बन्ध में दिव्य वचन

किसी समय में सन्त महाराज जी राड़ा साहिब वालों ने आप जी को वचन किया था कि आप धार्मिक फिल्में बनाकर प्रचार करना। गाड़ी ले लो, माया ले लो लेकिन आप जी ने कहा महाराज जी! आप मेरी कमाई में ही बरकत डालने की कृपा करो ताकि मैं अपने साधनों से ही इस सेवा को निभा सकूँ। आपकी इस त्याग वृत्ति के बारे में सन्त महाराज जी ने अपनी निजी डायरी में अंकित किया हुआ है उन्होंने लिखा है कि कई लोग पकड़ वृत्ति के धारणी होते हैं जबकि इन्होंने वह माया नहीं ली। अत: उनकी आशीष की बदौलत आप जी ने कीर्तन की फिल्में बनाईं जो कि आज सीडीज के रूप में उपलब्ध हैं। उनके प्रवचनों को जो फिल्मों के रूप में सम्भाला हुआ है, उनके माध्यम से आज संसार के कोने-कोने में बैठा जिज्ञासु इंटरनेट के माध्यम से सुन व पढ़ सकता है। उनका प्रत्येक दीवान गुरमति के सिद्धान्त की रूपमानता करता है।

आत्म मार्ग मैगजीन तथा अन्य रूहानी पुस्तकें

साहित्यिक क्षेत्र में आप जी ने सबसे पहले 'सुरति शबद मार्ग' पुस्तक का प्रकाशन किया। फिर बैसाखी 1995 में रूहानी रंगों से भरपूर आत्म मार्ग मैगजीन आरम्भ किया। आज लगभग सौ पुस्तकें तथा आत्म मार्ग मैगजीन जिज्ञासुजनों का रूहानी मार्गदर्शन कर रहा है। अनेकों प्रेमीजन इस सेवा में लगे हुए हैं तथा इसे बाँटने व इसकी रिन्युवल की सेवा निभा रहे हैं। सतगुरू जी सबको बुलन्दावस्था प्रदान करें।

वर्तमान संस्थाएँ तथा जन कल्याण के कार्य

प्यारे महापुरुषों की परिपाटी को आगे बढ़ाते हुए ट्रस्ट रतवाड़ा साहिब के मुखी श्रीमान सन्त बाबा लखबीर सिंह जी द्वारा समस्त ट्रस्ट सदस्यों व संगत के सहयोग से दो स्कूल, दो कालेज, एक मुफ्त सिलाई व कढ़ाई प्रशिक्षण केन्द्र, एक वृद्धाश्रम एक नि:शुल्क अस्पताल तथा शब्द लंगर के रूप में आत्म मार्ग मैगजीन, गुरू का लंगर, इंटरनैट मीडिए के माध्यम से गुरमति प्रचार आदि सभी परोपकारी कार्य गतिशील हैं। यह सब कुछ श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की कृपा, प्यारे महापुरुषों तथा सम्माननीया बीजी के आशीर्वाद की बदौलत ही सम्भव हो पा रहा है। श्री गुरू जी अपनी कृपा करके सबको अपना प्यार तथा महापुरुषों के वचनों पर पहरा देने का बल प्रदान करें।

गुरमति प्रचार तथा परोपकारों की निरन्तरता

किसी भी कार्य की आरम्भता तो बहुमूल्य होती है, लेकिन उन कार्यों की गतिशीलता बनी रहनी भी समय की अत्यन्त आवश्यक आवश्यकता होती है। महापुरुषों द्वारा चलाए गए 'विश्व गुरमति रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट' रतवाड़ा साहिब की शुरूआत तो बहुमूल्य है ही लेकिन आज के समय में, इस परिपाटी को सम्भालने व गतिशील रखने के लिए योग्य नेतृत्व व निर्देशन की भी नितान्त आवश्यकता है। इस सम्बन्ध में महापुरुषों ने अपने अनन्य सेवक देखे व परखे तथा वर्तमान सन्त बाबा लखबीर सिंह जी को सारे ट्रस्ट की सेवा सम्भालते हुए आप 31 अक्टूबर सन् 2001 को अपने पाँच तत्वों के भौतिक शरीर का त्याग करते हुए परमात्मा में अभेद हो गए। आज आप अपने निगुर्ण स्वरूप के माध्यम से अपने द्वारा स्थापित किए गए सेवक के माध्यम से संगत को नाम वाणी के द्वारा शरशार कर रहे हैं। रतवाड़ा साहिब में एक-दो नहीं बल्कि 7-8 संस्थाएँ उनके आशीर्वाद से बुलन्दावस्था में संगत की सेवा में कार्यरत हैं। आप जी के सारे जीवन को यह कलम अक्षरों का रूप नहीं दे सकती है फिर भी समाज के प्रति आपके द्वारा किया गया योगदान अत्यन्त सराहनीय है। आपके द्वारा सामाजिक, धार्मिक व साहित्यिक व शैक्षणिक क्षेत्र में किया गया योगदान समाज के लिए वरदान सिद्ध हो रहा है। यह सब गुरू जी की कृपा की बदौलत है। उस इलाही नूर में स्वयं, आप जी शरशार हुए तथा उसका नूरानी नूर बन गए। नूरानी नूर बनने के बाद आपने सारी लोकाई को उसके नूर में शरशार किया और उसे खूब बाँटा। आज भी लाखों प्रेमीजन आप जी के प्यार व वैराग्य में नूरो नूर हुए हैं। दास को भी इस कृपा का कण मात्र कुछ अंश प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हुआ। फलस्वरूप आप जी के साथ कुछ शब्द शेयर किए हैं। इस दौरान कोई भूल चूक हो गई हो तो मैं क्षमायाचक हूँ।

कबीर सात समुंदहि मसु करउ कलम करउ बनराइ॥
बसुधा कागदु जउ करउ हरि जसु लिखनु न जाइ ॥
अंग - 1368

के अनुसार परमात्मा या वाहिगुरू जी का यशगान कर पाना असम्भव बात है और इसी प्रकार से परमात्मा के प्यारों की करनी कमाई को ब्यान करना सूर्य को दीपक दिखाने वाली बात ही है।

शहीदी गुरू अरजन देव जी

(शहीदी दिवस 17 जून 2018)

डा. जगजीत सिंह

जून की तपिश हमें गर्म दहकती हुई तवियों की याद दिलवाती है जिस समय कि सन् 1606 ई. में शान्ति के पुंज, सारी मानवता को प्यार करने वाले, सुखमनी साहिब के रचयिता, 'परतखु हरि' श्री गुरू अरजन देव जी पर मानवता के कातिलों ने अमानवीय अत्याचार करते हुए उन्हें शहीद कर दिया था। यह कोई साधारण शहीदी नहीं थी बल्कि श्री गुरू नानक देव जी की गद्दी पर बिराजमान, उनकी पाँचवी ज्योति, संसार के दुखों को बाँटने वाले, बाणी के जहाज, हरिमन्दिर साहिब, तरनतारन के सृजनहार, श्री गुरू ग्रन्थ ासहिब जी के रचयिता, नाम वाणी में लीन, नूरानी ज्योति की शहादत थी। सतगुरू जी कैसी अद्वितीय शख्सियत के स्वामी थे, यह सतगुरू जी द्वारा रचित वाणी के माध्यम से स्पष्ट रूप से प्रमाणित हो जाता है या फिर भट्टों की वाणी से, जिन्होंने गुरू जी को अत्यन्त नजदीक से देखा, उनके दर्शन किए तथा दर्शन करके गद्गद् हुए। आओ! इन दोनों श्रोतों से सतगुरू जी की शख्सियत के दर्शन दीदार करें।

श्री गुरू अरजन देव जी की हरमन प्यारी रचना श्री सुखमनी साहिब है जिसमें विशेष रूप से साधु, सन्त, व ब्रह्मज्ञानी के लक्षण बतलाए गए है। ये समस्त गुण उनकी अपनी शख्सियत में विद्यमान थे। साधुओं की अचरज कथा को ब्यान करते हुए आप लिखते हैं कि -

1. *साध की महिमा बरनै कउन प्रानी॥*
   नानक साध की सोभा प्रभ माहि समानी॥
2. *साध संग केवल पारब्रहम॥*
3. *पारब्रहमु साध रिद बसै॥*
4. *नानक साध प्रभ भेदु न भाई॥*

अंग - 271-72

आप पूर्ण ब्रह्मज्ञानी की अवस्था के मालिक थे, कमलपुष्प की भांति निरलेप, निरदोष, सामान दृष्टि के स्वामी, धैर्यवान, निर्मल, विनम्र, आत्म रसिक, दयावान, समदर्शी, बन्धन रहित, परोपकारी, सुख-सहज-निवासी और बल्कि 'ब्रहम गिआनी आपि परमेसुर' थे। ऐसी रूहानी शख्सियत की शहादत मानवता के लिए धर्म, सत्य, न्याय, स्वाभिमान, समानता तथा अपने अधिकारों के लिए निरन्तर प्रेरणा का श्रोत बनी रहेगी।

पूर्णता के मालिक श्री गुरू अरजन देव जी का मिशन, मानवता को पूर्णतः का मार्ग दर्शाते हुए उन्हें सर्वगुण सम्पन्न करना था। पूर्ण मनुष्य कौन होता है? गुरू जी के अनुसार पूर्ण मनुष्य में छः गुण होते हैं। इन छः गुणों के कारण पूर्ण मनुष्य को ब्रह्मज्ञानी, सन्त, साधु जन अथवा गुरुमुखजन कहा जाता है। ये छः लक्षण इस प्रकार से हैं -

1. जिह्वा के द्वारा परमात्मा का नाम स्मरण करना तथा उसे सर्व व्यापक जान कर उसके अन्दर अपनी सुरति को जोड़ना।

2. सुखों व दुखों को एक समान ही समझना तथा पावन व वैर रहित जीवन जीना।

3. सारे जीवों के साथ प्यार व हमदर्दी रखनी तथा कामादिक विकारों से बचे रहना।

4. परमात्मा की स्तुति को जिन्दगी का सहारा बनाना तथा माया से इस प्रकार निर्लिप्त रहना जैसे कि कमल का फूल पानी से रहता है।

5. सज्जन तथा वैरी के साथ एक समान प्रेम भाव रखने की शिक्षा ग्रहण करनी तथा परमात्मा की भक्ति में प्यार बढ़ाना।

6. पराई निन्दा को अपने कानों के द्वारा न सुनना तथा अहंभाव का त्याग करके सबके चरणों की धूल बनना। फुरमान है -

मंत्रं राम राम नामं धानं सरबत्र पूरनह ॥
गानं सम दुख सुखं जुगति निरमल निरवैरणह ॥
दयालं सरबत्र जीआ पंच दोख बिवरजितह ॥
भोजनं गोपाल कीरतनं अलप माया जल कमल रहतह॥
उपदेसं सम मित्र सत्रह भगवंत भगति भावनी ॥
पर निंदा नह स्रोति स्रवणं आपु तिआगि सगल रेणुकह॥
खट लखण पूरनं पुरखह नानक नाम साध सजनह ॥

अंग - 1357

ऐसी मनोहर शख्सियत के धारणी थे श्री गुरू अरजन देव जी। आप सदैव प्रभु नाम में विलीन, दुखों-सुखों को समान जानने वाले निरवैर, समस्त जीवों के साथ हमदर्दी तथा

प्रेम रखने वाले, माया से निर्लिप्त, सबके सज्जन तथा निर्मल ईश्वरीय ज्योति थे।

श्री गुरू अरजन देव जी की ईश्वरीय शख्सियत की एक झलक भट्टों के सवैयों में से देखना भी तर्कसंगत ही होगा। भट्टों ने अपनी वाणी में श्री गुरू अरजन देव जी को 'परतखु हरि' कहा है। ऐसी शख्सियत के स्वामी, जिनकी अमृतमयी दृष्टि पड़ने से ही अज्ञानता का अन्धकार दूर हो जाता है तथा सारे गुनाहों की समाप्ति हो जाती है, पापों का नाश हो जाता है और सभी प्रकार की मैल नष्ट हो जाती है -

अमिअ दिसटि सुभ करै हरै अघ पाप सकल मल॥
अंग - 1392

सतगुरू अरजन देव जी इस प्रकार की सामर्थ्य के मालिक थे, आप एक दृष्टि से ही अज्ञानता को ज्ञान में तथा अन्धकार को प्रकाश में बदल सकते थे तथा 'प्रभ पलक देखत नव निधे' उनकी संगत में जाने से प्राप्ति क्या होती है, इसे हम एक सवैये के माध्यम से स्पष्ट करने की कोशिश करते हैं।

कचहु कंचनु भइअउ सबदु गुर स्रवणहि सुणिओ ॥
बिखु ते अंम्रितु हुयउ नामु सतिगुर मुखि भणिअउ ॥
लोहउ होयउ लालु नदरि सतिगुरू जदि धारै ॥
पाहण माणक करै गिआनु गुर कहिअउ बीचारै ॥
काठहु स्रीखंड सतिगुरि कीअउ दुख दरिद्र तिन के गइअ॥
सतिगुरू चरन जिन्ह परसिआ से पसु परेत सुरि नर भइअ ॥ *अंग - 1399*

अर्थात गुरू का वचन सुन लेने से मनुष्य काँच के टुकड़े से बदल कर सोना बन जाता है, सतगुरू का नाम लेने से उसके सारे विषय विकार दूर हो जाते हैं और जीवन अमृत भरपूर हो जाता है, गुरू जी की कृपा की बदौलत लोहे से लाल (जवाहरात) की भांति कीमती जीवन जीने की कला प्राप्त हो जाती है, गुरू के ज्ञान के माध्यम से पत्थर तुल्य जीवन माणिक व मोतियों के तुल्य हो जाता है और साधारण मनुष्य भी चन्दन बनकर दूसरों को सुगन्धी बाँटने लग पड़ता है। सतगुरू जी की संगत में सबके दुख-दरिद्र हमेशा के लिए समाप्त हो जाते हैं। सतगुरू जी की शरण में आने से पशु व प्रेतों वाली वृत्ति दैवी गुणों की धारणी बन जाती है। ऐसा कमाल है - सतगुरू जी की मनोहर शख्सियत का।

श्री गुरू अरजन देव जी के बारे में महत्वपूर्ण बात यह जानना है जैसे कि भट्ट मथुरा ने कथन किया है कि वाहिगुरू जी की ज्योति संसार पर प्रकाशमान हुई और उस ज्योति को श्री गुरू नानक देव जी के नाम से जाना गया। यही ज्योति पंचम पातशाह जी के माध्यम से संसार में क्रियाशील हुई -

जोति रूपि हरि आपि गुरू नानकु कहायउ ॥
ता ते अंगदु भयउ तत सिउ ततु मिलायउ ॥
अंगदि किरपा धारि अमरू सतिगुरू थिरू कीअउ ॥
मरदासि अमरतु छत्रु गुर रामहि दीअउ ॥
गुर रामदास दरसनु परसि कहि मथुरा अंम्रित बयण॥
मूरति पंच प्रमाण पुरखु गुरू अरजुनु पिखहु नयण ॥
अंग - 1408

ज्योति जन्म-मरण में नहीं आया करती है। गुरू नानक देव जी के माध्यम से परमेश्वर की ज्योति संसार पर प्रकट हुई, इसीलिए गुरू अरजन देव जी ने फुरमान किया 'मानुख का करि रूप न जानु।' गुरू नानक देव जी ने यह ज्योति भाई लहणा जी के अन्दर रखकर उन्हें गुरू अंगद प्रकट कर दिया और इसी प्रकार से ज्योति से ज्योति प्रकाशमान होती रही -

प्रगट जोति जगमगै तेजु भूअ मंडलि छायउ ॥
पारसु परसि परसु परसि गुरि गुरू कहायउ ॥
अंग - 1408

रामदासि गुरू जग तारन कउ
गुर जोति अरजुन माहि धरी ॥ *अंग - 1409*

यह आत्मिक विरासत एक ज्योति ने दूसरी ज्योति को प्रदान की। श्री गुरू अरजन देव जी, ज्योति रूप में दहकती हुई तवी तथा उबलती हुई देग के क्लेशों से बहुत ऊपर थे। आपका शरीर तो अवश्य ही निर्बल व फफोलों युक्त हो गया था लेकिन आप शरीर तो थे नहीं बल्कि शरीर तो आपका एक वाहन था। यही बात गुरुमुखों को समझाने के लिए आप जी ने शहादत का जाम पीना स्वीकार किया। दरअस्ल सतगुरू जी सिक्खों के अन्दर आत्मिक परिवर्तन ला रहे थे। यही जीअदान है जिसके द्वारा जीवन जीने की कला भी आती है और मरने की कला भी आती है।

जीअ दानु दे भगती लाईन हरि सिउ लैनि मिलाए॥
अंग - 749

इस शहादत में बादशाह जहाँगीर का कितना हाथ है, शेखों व मौलानों का कितना हाथ है, इस्लाम के ठेकेदारों व चन्दू जैसे ईर्ष्यालु लोगो का कितना हाथ है, इसके बारे में हम चर्चा आगे चलकर करेंगे लेकिन तुजकि-जहांगीरी में जिस 'झूठ की दुकान' को हमेशा के लिए बन्द कर देने का जिक्र है तथा जिसके लिए बन्द कर देने का जिक्र है तथा जिसके लिए यह सारा षड़यन्त्र रचा गया, वह 'झूठ की दुकान' नहीं अपितु विशुद्ध सत्य का विस्तार था, जिसकी नींव में 'आदि सचु जुगादि सचु, है भी सचु नानक होसी भी सचु।।' का संकल्प था। जिसे तुजकि जहाँगीरी में झूठ या कुफर का घर कहा गया है, वह दरअस्ल श्री गुरू नानक देव जी का सच्चा घर है नाम का घर है। यह शान्ति का घर, एकता, प्यार, भाईचारे तथा संगत व पंगत का घर है, जहाँ पर कि कोई

वैर नहीं, कोई जाति-पात नहीं, कोई भेदभाव नहीं, ऊँच नीच नहीं, अमीरी-गरीबी का अन्तर नहीं, मुल्कों की सीमाबन्दी नहीं, रंग व नस्ल के झगड़े नहीं, झूठे कर्मकाण्ड, वहम व पाखण्ड नहीं हैं। यहाँ न तो तीर्थों के भ्रमण हैं और न ही झूठे दिखावे हैं तथा न ही व्रत व सूतक पातक ही हैं। यहाँ कोई वर्ण विभाजन नहीं है और न ही जातिगत भेदभाव है। यहाँ तो एक मनुष्य ही ब्राह्मण, क्षत्रिय, शूद्र, वैश्य सभी रूपों में इकट्ठा ही है। यहाँ सभी मेहनतकश है और कोई भी खाली व निकम्मा दूसरों पर भारी नहीं है। गुरू जी ने सबके बन्धनों का काट कर उन्हें आजाद कर दिया है। इस प्रकार की सत्य की करामात गुरू घर में घटित हुई। श्री गुरू नानक देव जी ने सबको उस एक वाहिगुरू जी के साथ जोड़ा और जिसका स्वरूप आपने मूल मन्त्र में बताया कि - *1 ओंकार गुरप्रसादि।। आदि सचु जुगादि सचु।। है भी सचु नानक होसी भी सचु।।* यह पारब्रह्म परमेश्वर का स्वरूप है इसी से सारे ब्रह्मांड का सृजन हुआ। यह सृजन भी उसके स्वयं से ही हुआ इसलिए वह सारे विस्तार के अन्दर स्वयं ही व्याप्त है उसके बिना अन्य कोई भी अस्तित्व नहीं है, साथ ही गुरू जी का पहला उपदेश था कि 'ना को हिंदू ना मुसलमान' और न तो हिन्दुओं के कहने के अनुसार मुसलमान मलेच्छ हैं और न ही मुसलमानों के कहने के अनुसार हिन्दू काफिर हैं। सबके अन्दर वाहिगुरू जी की ज्योति है। गुरू नानक देव जी का धर्म विश्व बन्धुत्व भावना का धर्म है, सारे विश्व की मानवता का धर्म है। पीड़ित हिन्दू जाति को इसमें से काफी ढ़ाढ़स प्राप्त हुआ क्योंकि इसके संचालक गुरू नानक देव जी समाज-त्यागी नहीं थे बल्कि वे तो गृहस्थी थे तथा परिश्रम करने वाले मेहनतकश व समाज के दुख सुख के सहायक समर्थ गुरू थे। आपने समाज के निम्न वर्ग के लोगों को, अपराधियों, चोरों, डाकुओं व लुटेरों को अपने गले के साथ लगाया और उन्हें नेक इन्सान बना कर समाज की सेवा में लगा दिया। मानवता के उद्धार के लिए चार उदासियाँ धारण कीं। जिस दौरान वे समाज के प्रत्येक वर्ग से मिले, आम लोगों के साथ संवाद किया तथा सबको शब्द गुरू के साथ जोड़ा। गुरू जी के इन उपदेशों ने दबी कुचली जनता में नवीन साहस व नवीन मनोबल भर दिया। उन्होंने ब्राह्मणों तथा काजियों की निम्न कोटि की कार्यशैली को उजागर करके लोगों के मन में से इनका भय पूर्णरूपेण समाप्त कर दिया। आपने लोक बोली में गुरवाणी की रचना करके साधारण मनुष्य को, नीचे व ऊँचे लोगों को यानि कि सभी को भक्ति करने, नाम जपने व गुरवाणी पढ़ने के लिए उत्साहित किया। इस प्रकार से आपने तथाकथित निम्न जाति के हिन्दुओं को, जिन्हें कि वेद ग्रन्थ पढ़ने व सुनने की आज्ञा नहीं थी, गुरवाणी के साथ जोड़ दिया। इसी प्रकार से मुसलमान जनता को श्री गुरू नानक देव जी के ईश्वरीय नूर ने सत्य के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया तथा आप, हिन्दुओं, फकीरों तथा मुसलमानों के पीर के तौर पर समान रूप से सम्मान के पात्र बने। गुरू जी के सर्व पक्षीय मानवीय उद्धार में राजनैतिक अन्याय को भी नजरअन्दाज नहीं किया गया। आपने बाबर के हमले के समय हुई कत्लेआम के दुख को अनुभव करते हुए 'खून के सोहिले' गायन किए। बाबर की फौज को आपने 'पाप की बारात' तथा अन्याय वाले जालिम शासकों को 'राजे शीह मुकदम कुते' कहकर दुत्कारा। दूसरी तरफ आपने नेक इन्सानों, शासकों व हुक्मरानों की प्रशंसा भी की। ऐसा था गुरू नानक का 'सत्य का घर' जिसमें सारी मानवता एक सांझी संगत में बैठकर प्रभु जी के नाम का स्मरण करती तथा सांझी पंक्ति में बैठकर भोजन (लंगर) ग्रहण करती थी। गुरू घर के साथ जुड़ा हुआ प्रत्येक प्राणी सच्ची आजीविका के द्वारा जीविकोपार्जन करता तथा दसवंद के माध्यम से जरूरतमन्दों की मदद भी करता। गुरू जी ने सभी वर्णों तथा सभी जातियों के लोगों को नाथों, योगियों, ब्राह्मणों, काजियों के संकीर्ण बन्धनों में से निकाल कर उन्हें धर्म के तत्व की पहचान की तरफ प्रेरित किया ताकि वे पारस्परिक वैर-विरोध को छोड़कर एक परमात्मा के प्यार में जुड़ सकें एवं लोक कल्याण के कार्य कर सकें। यही परम प्यारा व सर्वश्रेष्ठ धर्म है -

सरब धरम महि स्रेसट धरमु ॥
हरि को नामु जपि निरमल करमु ॥ अंग - 266

ऐसे निर्मल पन्थ में विचरण करने वालों का सच्चा जीवन जीने की समझ प्रदान की तथा मरने का भी ढंग सिखाया। यह आत्म मार्ग था जिस पर चलने वाला व्यक्ति अहंभाव रहित होकर मरने के लिए सदैव तैयार रहता है -

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥
सिरू धरि तली गली मेरी आउ ॥ अंग - 1412

गुरू का सिक्ख सच्चे व सुच्चे चरित्र वाला मनुष्य था। सत्य, सन्तोष, विचार, दया, धर्म, दान, आस्था, सब्र, सन्तोष, संयोग, क्षमा, गरीबी, सेवा, प्रेम, ज्ञान तथा किरत उसके सच्चे गहने थे। गुरू जी ने करतारपुर रहकर इन गुणों को संगत व पंगत में परिपक्व किया तथा इनके प्रचार व प्रसार हेतु आपने दस स्वरूप धारण किए एवं खालसे के सृजन में इसकी सम्पन्नता हुई।

दूसरी पातशाही श्री गुरू अगंद देव जी ने गुरू नानक मिशन को पूरी तनदेही से प्रफुल्लित करने के लिए संगत का संगठन किया, गुरवाणी के प्रसार के लिए आपने गुरुमुखी अक्षरों का प्रचार किया, जनम साखियों को लिखवाया श्री गुरू अमरदास जी ने गुरू नानक निर्मल पन्थ मर्यादा को निभाते हुए बहुत सारे इस प्रकार के सामाजिक सुधार किए कि जिनके बारे में भारतीय लोग सोच भी नहीं सकते थे। जन्म मरण तथा विवाह आदि की रस्मों को, ब्राह्मणों के विषम झमेलों से मुक्त करके साधारण गुरू मर्यादा कायम की। सती

की रस्म को समाप्त करके, विधवाओं के पुनर्विवाह की आज्ञा दी, पर्दे की रस्म को दूर किया, स्त्रियों के स्वाभिमान को बरकरार रखते हुए उन्हें बराबरी का दर्जा दिया।

अब दूसरी तरफ इन चीजों के होने से कुछ लोगों को परेशानी भी होने लगी। गुरू जी की शोहरत ज्यों-ज्यों बढ़ती जा रही थी त्यों-त्यों कुछ उच्च कुल के ब्राह्मणों को बरदाश्त नहीं हो पा रहा था, इसीलिए उन्होंने अकबर के पास यह शिकायत कर दी कि गोइन्दवाल निवासी गुरू अमरदास ने पुरातन सभी रीतियों का त्याग कर दिया है चार वर्ण समाप्त कर दिए हैं, कोई संध्या नहीं, कोई गायत्री नहीं, कोई पितृ पूजा नहीं, तीर्थ यात्रा नहीं, मूर्ति पूजा, सालिगराम पूजा आदि सब कुछ बन्द कर दिया गया है। वेदों व स्मृतियों की जगह पर गुरवाणी और 'वाहिगुरू' नाम का जाप होता है। ऊंच नीच व जाति पात का कोई ध्यान नहीं रखा जाता और सबको एक ही पंक्ति में बैठाकर भोजन खिलाया जाता है। चाहे कोई जाट हो या डूम हो, चाहे कोई मुसलमान हो या ब्राह्मण हो, चाहे कोई बनिया हो या भंगी हो, नाई-धोबी, माछी, बढ़ई आदि सभी को एक बराबर बैठाया जाता है। कोई वर्ण नहीं, कोई आश्रम नहीं। इसका तुरन्त इलाज किया जाना चाहिए अन्यथा बाद में यह परिपाटी बहुत बड़ी परेशानी का कारण बन सकती है।

सम्राट अकबर के पास यह शिकायत सन् 1566-67 में, जिस समय वह लाहौर में था, की गई। सूझवान व फराखदिल अकबर, भाई जेठा जी (गुरू रामदास जी) को मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने गुरू जी के मानववादी मिशन की बहुत प्रशंसा की और शिकायतकर्ताओं की सख्त निन्दा की एवं उन्हें चेतावनी भी दी। बाद में सन् 1571 ई. में अकबर स्वयं गोइन्दवाल गुरू जी के दर्शन करने आया, लंगर में भोजन ग्रहण किया तथा लगान का कुछ भाग माफ करने की भी घोषणा की।

गुरू नानक मिशन के प्रचारार्थ गुरू जी ने 22 चारपाइयाँ (भावार्थ एक चौकी, जिस पर बैठकर जन साधारण को धार्मिक उपदेश व जानकारी दी जाती है) स्थापित कीं इन में से एक चारपाई (चौकी) पर आपने मुसलमान भाई अल्लायार खाँ को स्थापित किया। कुछ महिलाओं को भी इस दायित्व पर आसीन किया गया। गुरू जी ने संगत की सामूहिक एकत्रता को ध्यान में रखते हुए दीवाली और बैसाखी के विशेष दिन निश्चित किए। संगत की जरूरत को ध्यान में रखते हुए गोइन्दवाल साहिब में 'बाऊली साहिब' को स्थापित किया जहाँ पर कि 84 सीढ़ियों पर पाठ करके चौरासी लाख योनियों के चक्रव्यूह को समाप्त करने का संकेत दिया। सभी प्रकार के लोगों के द्वारा एक संगत के रूप में इस एक ही बाउली में स्नान करने से लोगों में एकता एक दूसरे के नजदीक आने का अवसर प्राप्त हुआ अर्थात उनमें बन्धुत्व की भावना उत्पन्न हुई।

गुरू जी ने गुरवाणी को सम्भालने के प्रयास किए, भगतबाणी इकट्ठी की तथा पोथियाँ तैयार करवाईं। गुरू जी ने नशाबन्दी के लिए प्रचार किया तथा गुरसिक्खों की आर्थिक उन्नति के लिए अच्छे व्यवसायों को अपनाने की दिशा में प्रेरणा दी। सभी गुरसिक्खों को, जिनमें से अधिकांश कमजोर वर्गों के लोग थे, आपने 'भाई रे' कह कर सम्बोधित किया और इस प्रकार से गुरू प्यार के माध्यम से उनका मनोबल ऊँचा उठा। गुरू-घर के साथ जुड़े सभी प्राणियों के अन्दर से हीन भावना और भय की भावनाओं को समाप्त करके उन्हें सच्ची पातशाही के सांझेदार बनाया। इस प्रकार बन्धनों से मुक्त बुलन्दावस्था के संकल्प में विचरण करती हुई सिक्ख संगत संगठित होने लग पड़ी।

गुरू रामदास जी ने सिक्ख लहर को प्रत्येक प्रकार से मजबूत बनाया। सिक्ख जीवन को नवीन व सुदृढ़ संकल्प दिए। सिक्ख की परिभाषा तथा उसके नियमों व मर्यादाओं को दृढ़ किया सिक्ख और गुरू के सम्बन्धों को स्पष्ट शब्दों में लिखा, 'आनन्द कारज' की सिक्ख मर्यादा कायम की। गुरसिक्खों को मनमुखों तथा निन्दा करने वालों से दूर रहने का उपदेश दिया। इस प्रकार से उनकी बढ़ रही लोकप्रियता व लोक संगठन से कुछ लोग परेशान थे, इसलिए वे समय-समय पर गुरू घर की शिकायत स्थानीय दीवान, खान, ताल्लुकदार या शिकदार के पास करते रहते थे लेकिन अकबर के गुरू घर के प्रति प्यार व सम्मान के कारण किसी की, एक नहीं चलती थी। सिक्ख लहर की मजबूती के लिए गुरू रामदास जी ने कई विशेष कार्यक्रम शुरू किए सन् 1577 ई. में बादशाह अकबर की आज्ञा से गाँव तुंग के जिमींदार को 700 रुपए जमीन के मूल्य के रूप में देकर 'चक गुरू' या रामदास पुर की नींव रखी तथा अमृत सरोवर तैयार करवाया जिसके निर्माण में सिक्ख संगत ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। गुरू जी ने मसन्द प्रथा शुरू की ताकि सुदूरवर्ती स्थानों पर बैठी हुई संगत, गुरू घर के साथ निरन्तर जुड़ी रहे। सिक्ख संगत ने चक रामदास तथा अमृत सरोवर के निर्माण के लिए तन, मन व धन सहित सेवा की। अब तक सिक्ख लहर में प्रत्येक श्रेणी के लोग शामिल हो चुके थे, अमीर, गरीब, घनाढ्य, व्यापारी तथा गरीब दुकानदार, छोटे-बड़े व्यवसायी, कामगार, कारीगर, जमीन जोतने वाले किसान आदि सभी जातियों व वर्णों के लोग गुरू घर के साथ जुड़कर सुख शान्ति व अपनापन महसूस करते थे।

गुरू चौथी पातशाही के गृह में गुरू अरजन देव जी का जन्म 1553 ई. में हुआ। उनके दो बड़े भाई पिरथीचन्द तथा महादेव थे। पिरथी चन्द को, पिता गुरू रामदास ने चक

रामदास तथा अमृतसर सरोवर की स्थापन व उसके लेखे जोखे का कार्यभार सौंपा हुआ था तथा बड़ा होने के कारण वह स्वयं को गुरुगद्दी का हकदार भी समझता था लेकिन इसकी वृत्ति ज्यादातर सांसारिक थी और सिक्खी-आस्था, गुरू-भक्ति तथा नाम वाणी के रस की दृष्टि से यह पूर्णतः खाली ही था। महादेव, त्यागी वृत्ति का होने के कारण सिक्ख लहर की बढ़ रही जिम्मेदारियों को सम्भालने के योग्य नहीं था। इसलिए गुरू पिता जी ने अपने अनन्य सेवक तथा भक्त, सहृदय दिव्य दृष्टि के मालिक, संगत के हरमन प्यारे, गुरू अरजन देव जी को गुरुगद्दी पर आसीन कर दिया। गुरू जी ने पूरी तनदेही से गुरू नानक देव जी के माध्यम से संचालित हुई सिक्ख लहर व निर्मल पन्थ को प्रत्येक प्रकार से मजबूत किया और शनैः शनैः सिक्ख लहर, लोक-लहर का रूप धारण कर गई। इस लहर के साथ ऊँची वृत्ति वाले मुसलमान भी हृदय प्रेम रखते थे। श्री गुरू अरजन देव जी ने अक्टूबर 1588 ई. में ऐसे ही नेक पुरुष पीर मियाँ मीर जी से श्री अमृतसर साहिब की नींव रखवाई। सिक्खी प्यार तथा प्रसार के लिए नए केन्द्र स्थापित किए। तरनतारन साहिब नया कस्बा बसाया तथा यहाँ पर दुखियों व बीमारों के उपचार का विशेष प्रबन्ध किया। सन् 1590 ई. में आपने करतारपुर बसाया तथा पानी की कमी को दूर करने के लिए बहुत जगहों पर कुएँ लगवाए।

लाहौर में अकाल पड़ने के समय आप जी ने सिक्खों सेवकों तथा परिवार समेत दुखियों की बहुत सेवा की। शहर व गलियों में तथा बाजारों में मरने वालों की संख्या इतनी अधिक बढ़ गई थी कि मुर्दों को ढोने के लिए कोई व्यक्ति आगे नहीं आता था। आप जी ने इस सेवा को अपनी अगुवाई में निभाया। बादशाह अकबार जब लाहौर आया तो उसने इस सेवा पर बहुत अधिक प्रसन्नता प्रकट की और गुरू जी के कहने पर उसने सारे पंजाब के किसानों का मामला (मालगुजारी) माफ कर दिया। लाहौर के डब्बी बाजार में आप जी ने बाउली साहिब का निर्माण भी किया।

सन् 1601 ई. से लेकर 1604 ई. तक आप जी ने श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का सम्पादन कार्य सम्पूर्ण किया तथा सितम्बर सन् 1604 ई. में इसका प्रथम प्रकाश श्री हरिमन्दिर साहिब अमृतसर में किया। इसमें गुरू साहिब की वाणी के अतिरिक्त 15 भक्तों, 11 भट्टों व 4 गुरसिक्खों की वाणी भी शामिल की जिनमें मुसलमान फकीर बाबा फरीद, तथाकथित निम्न जातियों के सन्त भक्त जैसे कि रविदास जी, धन्ना जी, सैण जी पीपा जी, सधना जी आदि की वाणी को भी पूरा सम्मान दिया तथा श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी में शामिल किया। इस प्रकार से यह सिक्ख लहर पूर्णरूपेण लोक लहर का रूप धारण कर चुकी थी यानि कि यह अब लोकप्रिय व सर्वमान्य हो चुकी थी। यह कारण है कि बहुत सारे मुसलमान भी गुरू-घर के साथ जुड़ गए। अकबर को तो इस लहर में से दीन-ए-इलाही का संकल्प पूरा होता हुआ प्रतीत हो रहा था लेकिन कट्टरता वाले शरई मुलमानों को यह अच्छा नहीं लग रहा था लेकिन अकबर के समय किसी को भी इस लहर की विरोधता करने का साहस पैदा नहीं हुआ, कुछ संकीर्ण दृष्टि वाले कट्टर लोग इस मौके की तलाश में थे, येन-केन-प्रकारेण इस लहर को दबाया जाए और अकबर के मरने के बाद कट्टरवादी लोगों को यह मौका मिल गया। शेख अहमद सरहन्दी तथा शेख फरीद बुखारी ने जहाँगीर को हिन्दोस्तान के तख्त पर बैठाने में विशेष सहायता की और जहाँगीर को भी प्रत्येक प्रकार की मदद की जरूरत थी। उन्होंने जहाँगीर से यह प्रण लिया कि राजभाग हासिल करने के बाद इस्लाम को बढ़ाने के लिए वह उनकी हर सम्भव मदद करेगा। खुसरो की बगावत के समय संकीर्ण दृष्टि वालों को सिक्ख लहर को कुचलने का बहाना मिल गया। वैसे जहाँगीर गुरू घर के विरुद्ध नहीं था क्योंकि उसने अपने पिता को गुरू घर का सम्मान करते हुए देखा था लेकिन वह तख्तनशीनी के झगड़ों के कारण इस षड़यन्त्र का शिकार हो गया। गुरू अरजन देव जी की शहादत का जिक्र 'तुजकि जहाँगीरी' में प्राप्त है, जिसमें जहाँगीर ने शहादत की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ली है लेकिन इसकी प्रमाणिकता अब शंके में पड़ गई है। इसमें गुरू महाराज जी की शहादत के बारे में दर्ज बार्ता का पंजाबी रूपान्तरण इस प्रकार से है -

'दरिया ब्यास के तट पर गोइन्दवाल में अरजन नाम के एक हिन्दू, पीरों व शेखों के लिबास में रहता था। उसने बहुत सारे भोले भाले हिन्दुओं तथा नादान व बेसमझ मुसलमानों को अपनी लहर की परिधि में खींच लिया था एवं उसने अपनी पीरी के ढोल को बहुत ऊँची आवाज में बजाया हुआ था। उसे लोग गुरू कहते थे। चारों तरफ से मूर्ख व मूर्खों के पुजारी उसकी तरफ विशाल संख्या में आते थे और उसके ऊपर पूरा ईमान रखते थे। तीन-चार पीढ़ियो से उन्होंने इस दुकान को गर्म कर रखा था। बहुत लम्बे अर्से से मेरे मन में यह ख्याल आता था कि इस झूठ की दुकान को या तो बन्द कर दिया जाए और या फिर उसे इस्लाम की परिधि मे ले आया जाए।'

जब खुसरो इस मार्ग से गुजरा तो इस तुच्छ व्यक्ति ने उसे मिलने का इरादा किया। खुसरो का डेरा वहाँ पर हुआ जहाँ पर कि उस (गुरू जी) की रहने वाली जगह थी। वह उसे आकर मिला तथा उसके साथ कई प्रकार की बातें कीं तथा कई प्रकार की बातें जो कि पहले से उसने सोच रखी थीं, उस तक पहुँचाईं फिर उसने अपने अंगुली से उसके माथे पर केसर का टीका लगाया जिसे हिन्दुओं की बोली में कशक कहते हैं तथा उसे शगुन माना जाता है। जब यह बात हमारी जाहो जलाली वाली शाही हुजूरी तक पहुँची तो फिर उसे

अपनी हुजूरी में हाजिर होने का हुक्म दिया तथा उसके घर, रहने वाली जगहों व बच्चों को मुरतजा खाने के हवाले करके उसकी सारी जायदाद को जब्त करके यह हुक्म दिया कि उसे इस्लाम के कानून के अनुसार मृत्यु की सजा दे दी जाए।

उपर्युक्त लिखित की प्रमाणिकता निम्नलिखित कारणों के कारण शंकाओं के घेरे में आ जाती है –

1. लिखित के दूसरे भाग के बारे में अमल न होना।

गुरू घर का कोई भी माल असबाब जब्त नहीं किया गया और न ही गुरू जी के फरजन्द हरिगोविंद जी को कोई आंच आई बल्कि बड़े ही सम्मानपूर्वक ढंग से सिक्ख संगत की उपस्थिति में भाई गुरदास जी तथा बाबा बुड्ढा जी ने उन्हें गुरगद्दी पर बैठाने की रस्में अदा की तथा मीरी-पीरी की कृपाणें पहनाईं जबकि ऊपरलिखित वार्ता के अनुसार यह सब कुछ सम्भव नहीं था। किसी भी इतिहासकार ने गुरू घर की जायदाद के जब्त होने या बालक (गुरू) हरिगोबिंद के हिरासत में लिए जाने का जिक्र नहीं किया।

2. मुरतजखान उस समय गुजरात का गवर्नर था। गुरू अरजन देव जी की शहादत के समय पंजाब का गवर्नर कुलीज खाँ था, मुरतजा खान तो सन् 1619 ई. में पंजाब का गवर्नर बना।

3. यह हुक्म तो 19 जून सन् 1606 ई. की लिखित है जब कि गुरू जी को शहीद हुए बीस दिन हो चुके थे। तुजकि जहाँगीरी में यह तथ्य भी प्राप्त है कि जहाँगीर खुसरो का पीछा करता हुआ गोइन्दवाल के पत्तन के नजदीक उतरा हुआ था। उस दौरान उसे जिस व्यक्ति के बारे में पता चलता है कि उसने खुसरो की सहायता की है वह उसे कड़ी से कड़ी सजा देता जाता है। खुसरो की बगावत के साथ हमदर्दी रखने वाले सैंकड़ों दोषियों को होथियों के पैरों के नीचे कुचला गया, आग से दहकते हुए लाल जम्बूरों के साथ नोचा गया। यदि गुरू अरजन के प्रति उसके मन में लम्बे अर्से से घृणा बैठी हुई होती, जैसे कि 'तुजकि जहाँगीरी' में लिखा है, तो गुरू जी तुरन्त ही उसके कोपभाजन का शिकार बनते लेकिन गुरू जी की गिरफ्तारी उसके 27 दिन बाद होती है। इसलिए ऐसा प्रतीत होता है कि इस साजिश के पीछे कुछ और शक्तियाँ कार्यरत थीं।

इस वार्ता में गुरू जी को गोइन्दवाल निवासी बताया गया है जबकि गुरू जी तो पिछले कई वर्षों से चक रामदास अमृतसर में सेवा निभा रहे थे। इस समय के दौरान ही श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी का सम्पादन कार्य सम्पन्न हुआ तथा इसका प्रकाश श्री हरिमन्दिर साहिब में हुआ। गुरू जी द्वारा की जा रही अमृतसर में सेवा का जिक्र 'दबसताने-मुजाहिब' में भी है। गोइन्दवाल का जिक्र इस वार्ता को और भी शंकायुक्त बनाता है। कोई भी सूझवान लेखक उन्हें गोइन्दवाल निवासी नहीं लिख सकता है।

गुरू हरिगोबिंद साहिब तथा जहाँगीर की दोस्ती से यह प्रकट होता है कि जहाँगीर के मन में गुरू घर के प्रति लम्बे समय से ही कोई घृणा नहीं थी और गुरू अरजन देव जी की शहीदी का उसे अपने अन्दर से अफसोस था। यदि उसका मकसद गुरू घर की झूठ की दुकान को बन्द करना था तो यह वास्तव में गुरू हरिगोबिंद साहिब जी के समय में भी जारी रहता। गुरू घर की तरफ से जहाँगीर तथा बेगम नूरजहाँ को खिलते देनी तथा खिलते लेनी चिर स्थाई विरोध को पूर्णतः झूठा सिद्ध करता है।

6. गुरू हरिगोबिंद साहिब जी की ग्वालियर के किले में गिरफ्तारी भी किसी गलतफहमी का ही परिणाम था। जुर्माना अदा न करने की शिकायत को अमल में लाते हुए ही गुरू जी को गिरफ्तार किया गया तथा लगभग एक वर्ष में जहाँगीर ने अपनी इसी भूल को सुधार लिया। इसके बाद गुरू जी की जहाँगीर के साथ दोस्ती के कई प्रमाण प्राप्त होते हैं। यह मित्रता किसी राजनैतिक या सांसारिक लाभ के लिए नहीं थी बल्कि जहाँगीर ने तो गुरू नानक घर की रूहानियत की पहचान के तौर पर गुरू जी का हार्दिक सम्मान किया। इसका एक प्रमाण जहाँगीर का एक घसियारे को गुरू जी के खेमे की तरफ भेजना है, जहाँ पर कि सच्चे पातशाह जी बिराजमान थे तथा भवसागर से पार करने की सामर्थ्य रखते थे।

इस सारी वार्ता से केवल यही सिद्ध होता है कि 'तुजकि जहाँगीरी' वाली यह वार्ता कहीं बाद में कुछ असर रसूख रखने वाले गुरू घर के विरोधियों की साजिश है लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं है कि जहाँगीर का इस शहीदी में कोई हाथ ही नहीं है।

गुरू महाराज जी के बढ़ रहे प्रताप तथा सिक्ख लहर की बढ़ रही लोकप्रियता, कई लोगों की आँखों में खटक रही थी। इसमें विशेष रूप से वह राजनैतिक शक्तियाँ, मौलवी तथा काजी शामिल थे जो कि प्रत्येक प्रकार से इस्लाम का ही बोलबाला चाहते थे और जो अकबर की उदारवादी नीति को कदाचित भी पसन्द नहीं करते थे और इसीलिए वे खुसरो को भी पसन्द नहीं करते थे जो कि अपने दादा जी की भांति नेक व धार्मिक व्यक्ति था। इसमें विशेष रूप से जहाँगीर के जरनैल शेख फरीद बुखारी तथा उसके पीर शेख अहमद सरहन्दी का नाम विशेष महत्व रखता है। ये दोनों कट्टरपन्थी नीतियों के धारणी थे तथा इन्होंने जहाँगीर को राजनैतिक सत्ता हथियाने में तथा खुसरो की बगावत को कुचलने में बहुत सहायता की। सम्भव है कि जहाँगीर ने इनके साथ इस्लाम में वृद्धि करने के लिए कई प्रकार के वादे किए हों, जिसकी

आड़ में ही इन्होंने कई प्रकार की मनमानियाँ की हों। सम्भव है कि गुरू अरजन देव जी पर लगाया गया इल्जाम भी इन्हीं की साजिश हो। जरनैल फरीद बुखारी ने खुसरो का पीछा करते हुए दरिया चिनाब को पार करते समय उसे दबोच लिया और कैद कर लिया तथा जहाँगीर के दरबार में पेश कर दिया जहाँ पर कि उसे कत्ल कर दिया गया। यह वह समय था जबकि बगावगत के साथ दूर-दूर तक का सम्बन्ध रखने वाला कोई भी व्यक्ति माफ नहीं किया जा सकता था। अतः शेख अहमद सरहन्दी तथा उसके कुछ कट्टरपन्थी साथियों ने यह साजिश रची कि गुरू जी ने खुसरो को पनाह दी, उसकी फौजों को भोजन-पानी खिलाया तथा उसके माथे पर टीका लगाकर आशीर्वाद दिया और इस प्रकार से गुरू जी को तलब करने के लिए जहाँगीर से आदेश ले लिए। गुरू जी को तलब करने में जहाँगीर की आन्तरिक कमजोरी तथा राजनैतकि कमजोरी आदि कई भावनाएँ काम करती हुई प्रतीत होती हैं। गुरू जी पर कई दोष लगाए गए जिनमें खुसरो की सहायता करनी तथा इस्लाम के विरुद्ध प्रचार करना दो प्रमुख थे। 'झूठ की दुकान' वाली मनोभावना इसी प्रकार के कट्टरपन्थी लोगों की आन्तरिक भावना थी। इस षड़यन्त्र में चन्दू अहलकार का भी विशेष हाथ था जिस ने गुरू जी को टार्चर करने में अपनी सेवाएँ प्रस्तुत कीं तथा जिन्हें स्वीकार करने में कट्टरपन्थियों का विशेष लाभ था क्योंकि इस प्रकार से उनकी मुराद भी पूरी हो जानी थी तथा इस घृणित कार्य का इल्जाम भी एक हिन्दू के सिर पर ही मढ़ा जाना था। जहाँगीर को पूर्णतः दोषमुक्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि उसके आदेशों के बिना गुरू जी को तलब नहीं किया जा सकता था। गुरू जी को यह भनक लग चुकी थी कि कट्टरपन्थियों को सिक्ख लहर खटक रही है क्योंकि झूठ के अलम्बरदार सत्य की रौशनी को बरदाश्त नहीं कर सकते हैं। गुरू जी ने अकाल पड़ने के दौरान, लाहौर निवासियों की जो सेवा की थी, उस कारण से वे जनता में हरमन प्यारे हो चुके थे। अकबर के गुरू घर के साथ निकटवर्ती तथा स्नेह भरे सम्बन्ध रहे थे, लेकिन आज उसकी गद्दी के वारिस ने काजियों तथा मौलवियों की चाल का शिकार होकर गुरू जी को तलब किया तथा गुरू जी को उनके रहम तथा न्याय पर छोड़कर स्वयं लाहौर व सिन्धु की तरफ चला गया। इस्लाम विरुद्ध प्रचार के दोष का उत्तर देते हुए गुरू जी ने पूरी सहनशीलता का प्रमाण दिया तथा श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी की वाणी में से कई तुकें पढ़ कर सुनाईं जिनमें से एक वाहिगुरू की इबादत तथा शरणागती व सर्व मानवता के प्रेम का सन्देश था।

खुसरो की सहायता सरासर झूठा व मनघड़ंत इल्जाम (दोष) था, गुरू जी ने इस सम्बन्ध में भी सिक्ख दृष्टिकोण स्पष्ट किया कि गुरू घर प्रत्येक प्राणी का आदर सम्मान करता है और गुरू के लंगर में से प्रत्येक व्यक्ति भोजन ग्रहण कर सकता है और वह भी बिना किसी वैर-विरोध व भेदभाव से। गुरू जी को दो लाख रुपए दण्ड भरने के आदेश दिए गए जिसे गुरू जी ने स्वीकार नहीं किया। इस परिस्थिति में ही चन्दू ने बदले की भावना के अधीन अहम रोल अदा किया तथा गुरू अरजन देव जी को अपनी हिरासत मे लेने में कामयाब हो गया। वह कुछ अहिलकारों की निगरानी में गुरू जी को अपनी हवेली में ले गया जहाँ पर उसने गुरू जी द्वारा लौटाया गया रिश्ता दोबारा स्वीकार करने के लिए दबाब बनाया लेकिन गुरू जी उसके दबाव के नीचे नहीं आए और अपने फैसले पर डटे रहे। चन्दू ने कई प्रकार के भय तथा धमकियाँ दीं लेकिन गुरू जी अडोल व शान्त चित्त रहे। उसके बाद गुरू जी को योजनाबद्ध साजिश के तहत शाही किले में लाया गया जहाँ पर काजी से यह फतवा लगवाया गया कि गुरू जी को टार्चर कर करके शहीद कर दिया जाए। तीन दिनों तक बिना अन्न, जल ग्रहण किए गुरू जी का शरीर कई प्रकार के अत्याचारों को सहन करता रहा लेकिन आप आत्मिक बल के कारण अडोल बैठे रहे। गुरू जी को गर्म लोहे की तवी पर बैठाना, गर्म रेत को शीश में डालना, उबलते पानी के साथ अत्याचार करना आदि इन अत्याचारों में शामिल हैं। इसके बाद अपने अमानवीय अत्याचारों को छिपाने के लिए गुरू जी को स्नान के बहाने रावी के तट पर ले गए जहाँ पर गुरू जी ने स्नान किया और दोबारा वापिस नहीं आए।

ऐसी महान शहादत ने सिक्ख लहर की नींव को अत्यन्त मजबूत कर दिया और गुरू के सिक्खों को स्वाभिमान, सम्मान व सत्य की रक्षार्थ जूझने की समझ आ गई। सतगुरू जी ने अपने शरीर पर अनेकों कष्टों को झेल कर अपने सिक्खों को अपने शरीर से ऊपर उठकर आत्मिक जीवन जीने की कला बताई तथा आत्म सम्मान व आत्म रक्षा के लिए तैयार किया जिसका प्रमाण गुरू हरिगोबिंद साहिब जी के शस्त्रों, घोड़ों व फौजों में देखा जा सकता है। गुरू गोबिंद सिंह जी ने ऐसा आदर्श संसार के समक्ष प्रस्तुत किया कि जिसने डांवाडोल हुए मनुष्य को जाति-पातों, वर्णों, आश्रमों, पारस्परिक धार्मिक ईर्ष्या व वैर विरोध से बाहर निकाल कर पूर्ण मनुष्य का सृजन किया जो न ही किसी को डराता था और न ही किसी से डरता था। वह ईर्ष्या (जलन) वैर भावों, साम्प्रदायिक कट्टरताओं से पूर्णतः अलग प्रतिदिन संसार के भले की भावना रखता हुआ कहता है -

नानक नाम चढ़दी कला, तेरे भाणे सरबत का भला।

खालसा पन्थ की नीवें इसलिए अत्यन्त पक्की व शाश्वत हैं क्योंकि इन्हें गुरू अरजन देव जी, गुरू तेग बहादर जी, साहिबजादों तथा अनेकों सिंहों व सिंहनियों का खून डालकर निर्मित किया गया है।

स्वामी राम जी के प्रेरणात्मक विचार
(Inspired Thoughts of Swami Ram)

डा. स्वामी राम जी

अनुवादक - शमशेर सिंह 'कोमल'

(श्रृंखला जोड़ने के लिए देखें, अंक अप्रैल, पृष्ठ - 62)

इन तीनों सीढ़ियों का अभ्यास करके तुम धीरे-धीरे ऊपर उठते-उठते उच्च चेतनता में पहुँच जाते हो और अन्त में समाधि में स्थित हो जाते हो जिसे कि केवल चेतनता ही कहा जाता है और जहाँ पर कि तुम्हारी आत्मा विश्वात्मा के साथ मिल जाती है समाधि की अवस्था में तुम अपनी पहचान को नहीं छोड़ते हो। पतंजलि ही बतलाते हैं कि वास्तव में समाधि की अवस्था में ही तुम्हें अपनी सच्ची पहचान होती है जैसे कि जब नदी समुद्र में मिलती है तो वह स्वयं को केवल छोड़ ही नहीं देती अपितु उसका विस्तार हो जाता है। यही सत्य है कि मैडिटेशन के द्वारा हम विस्तृत होकर ब्रह्मांड की चेतना के साथ एक हो जाते हैं। यह कोई नकारात्मकता वाली अवस्था नहीं है बल्कि यह तो एक सकारात्मक अवस्था है जो कि एक शुद्ध चेतनता तथा आनन्द की अवस्था है। इस अवस्था पर पहुँचने के लिए बहुत समय लग जाता है लेकिन यह पूर्णतः सम्भव है यानि कि इसकी प्राप्ति हो सकती है। तुम उसे ही प्राप्त कर सकते हो जिसके लिए तुम्हारी इच्छा होती है क्योंकि उसी के लिए तुम अभ्यास करते हो। प्रभु कृपा भी समय पाकर हो जाती है।

सच्ची मेहनत, इच्छा, लगन के साथ मैडिटेशन आदि सीढ़ियों को प्राप्त कर लेना कोई कठिन कार्य नहीं है पाँच-छः महीनों में इनकी प्राप्ति की जा सकती है, आगे की तरक्की तो अपनी लगन के द्वारा ही सम्भव है कि तुम कितनी लगन के साथ अभ्यास करते हो। हाँ, परिणाम तो तुम्हारी कोशिशों के अनुसार ही सुन्दर होंगे। यदि तुम हमेशा के लिए शन्ति चाहते हो तो फिर तुम्हें मैडिटेशन का मार्ग अपनाना ही पड़ेगा।

मैडिटेशन तथा आधुनिक विज्ञान का सम्बन्ध

बहुत बार आजकल तुम देखोगे कि अध्यात्मिक गुरू तथा मजहबों के प्रचारक विज्ञान की निन्दा करते हैं लेकिन मैं उनके साथ समहत नहीं हूँ। यदि तुम अध्यात्मिक गुरू हो, प्रचारक हो, तुम प्रवचन कर रहे हो, लेकिन तुम्हारे पास बिजली नहीं है लाउड स्पीकर नहीं है, तो तुम्हें सुनने कौन आएगा? यानि कि कोई भी तुम्हें सुनने नहीं आएगा। इसी प्रकार से तुम एक जगह से दूसरी जगह पर बिना कार, गाड़ी या हवाई जहाज के बिना कैसे जा सकते हो? विज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। आज के जीवन में विज्ञान जीवन का एक आवश्यक अंग है। विज्ञान की निन्दा करके तुम महजब का प्रचार नहीं कर सकते हो। आज के विज्ञान के लिए भौतिक विज्ञान इतना जरूरी है कि हम अपने दैनिक जीवन को इनके बिना चला ही नहीं सकते हैं, हम कोई काम ही नहीं कर सकते हैं। जिस प्रकार से महजब, दर्शन के सत्य, रहस्य आदि आवश्यक हैं और इनके बिना तुम्हारे अन्दर का सत्य प्रकट नहीं हो सकता है ठीक उसी प्रकार से वैज्ञानिक प्राप्तियों की भी आवश्यकता है। वास्तव में मानवीय जीवन को दोनों की समान आवश्यकता है।

ये दोनों विभिन्न विज्ञान हैं, एक भौतिक विज्ञान है जबकि दूसरा चेतनता का विज्ञान है। भौतिक विज्ञान ब्रह्मांड के सम्पूर्ण नियम प्रकट करता है जब कि मैडिटेशन विज्ञान मनुष्य के अन्दर के स्तरों का ज्ञान करवाता है। अन्दर के संसार के साथ जोड़ता है। हमारे लिए अपने दैनिक जीवन को जीने के लिए विज्ञान के साधारण नियमों को जानना आवश्यक है यानि कि बाहरी संसार में रहने के लिए विज्ञान के नियम आवश्यक हैं। साथ ही यह भी आवश्यक है कि हम अपने अन्दर को जानकर उसे समझें। आन्तरिक और बाहरी संसार मिला हुआ है। वास्तव में यदि देखा जाए तो इन्हें अलग अलग नहीं किया जा सकता है। जो अपने अन्दर के संसार को जानते हैं, समझते हैं, वे अपनी समझ के द्वारा अपने आन्तरिक ज्ञान के माध्यम से मनसा वाचा कर्मणा करते हैं और जिसके द्वारा वे अपने कर्तव्यों का निर्वाह बहुत सुन्दर ढंग से करते हैं।

जब मैं हिमालय की गुफाओं में रहता था तो उस समय मेरे मन में द्वन्द्व था कि आधुनिक वैज्ञानिक जीवन क्या है? मैं वैज्ञानिक जीवन को धार्मिक सोच विधि से पृथक रख कर देखता था लेकिन फिर एक ऐसा दिन आया जब मैंने इस

बात को जाना कि धार्मिक सच्चाई को वैज्ञानिक नियम की जरूरत है और विज्ञान को अध्यात्मिक दर्शन की। सारे महत्वपूर्ण ग्रन्थ एक ही सत्य की बात बतलाते हैं। हैरानी की बात तो यह है इसके बावजूद भी श्रद्धालुजन बेसमझ ही रहते हैं और अतृप्त ही रहते है। ग्रन्थों पर विश्वास रखने से तुम्हें सीधा अनुभव नहीं होता है और सीधा अनुभव प्राप्त किए बिना केवल ग्रन्थों को पढ़ लेने मात्र से पूर्ण सन्तुष्टि नहीं हो पाती है। मैं हमेशा अपने श्रद्धालुजनों को कहता रहता हूँ कि तुम तो जागृति की बात करते हो लेकिन पहले अन्दर के प्रकाश के मार्ग पर चलना तो शुरू करो।

जब तुम अन्दर के मार्ग पर चलते हो तो वहाँ पर तुम्हें वैज्ञानिक यन्त्रों जैसे कि टैलीस्कोप, माइक्रोस्कोप आदि के कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि अपने अन्दर की खोज के लिए ये यन्त्र बिल्कुल व्यर्थ हैं। अपने अन्दर देखना तो एक पृथक कला है जिसमें किसी बाह्य यन्त्र की कोई जरूरत नहीं है, हाँ एक बात अवश्य है कि अन्तर्मुखी होकर अपनी यात्रा शुरू करते समय अवश्य लगता है क्योंकि हमारा दैनिक जीवन हमें बहिर्मुखी होकर विचरण करना ही बतलाता है। आज के समाज में तुम्हारी सफलता को केवल तुम्हारी आर्थिक प्राप्तियों के द्वारा ही आंका जाता है लेकिन प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि यदि हमारा मन ही शान्त नहीं है, हम सन्तुष्ट ही नहीं हैं, तो फिर बाकी सब कुछ तो बेकार ही है। हमें अन्दर की शान्ति भी बहुत अधिक आवश्यकता है ताकि संसार में शान्ति के साथ रहा जा सके। मैं बहुत सारे हाकिमों व राजाओं को मिला हूँ, बहुत सारे धनाढ्य लोगों को मिला हूँ लेकिन मैंने उनके जीवन में किसी प्रकार की कोई प्रसन्नता नहीं देखी है। दरअस्ल अपने अन्दर की शान्ति केवल शान्तमय के द्वारा ही आती है।

मैडिटेशन की विधियाँ - मैडिटेशन के पृथक-पृथक तरीके जो कि पृथक-पृथक ग्रन्थों में बतलाए गए हैं और केवल उन विधियों को जान लेने मात्र से तुम पूरी फिलासफी को नहीं जान सकते हो कि मैडिटेशन क्या है और इसका दर्शन क्या है। वास्तव में मैडिटेशन एक अत्यन्त उपयुक्त विधि है। यह एक गहरा दर्शन है। सारे महान आत्मा ब्रह्मज्ञानी साधू, हिमालय पर्वत की कन्दराओं में रहने वाले साधू, सभी मैडिटेशन में विश्वास रखते रहे हैं। बौद्ध लोगों की मैडिटेशन करने की विधि अत्यन्त व्यवस्थित है। बाइबिल बतलाती है कि स्थिर होकर जानो कि मैं परमात्मा हूँ। मजहब का मैडिटेशन के साथ कोई द्वन्द्व नहीं है। मैडिटेशन के पृथक-पृथक सम्प्रदाय, महजबों के कट्टरपन से मुक्त हैं, वे मजहब के पृथक-पृथक चिन्हों से, पृथक-पृथक विचारों से, भावनाओं, तरंगों से पूर्णतः मुक्त हैं। कोई भी व्यक्ति मैडिटेशन कर सकता है। वास्तव में मैडिटेशन प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

जो विधियाँ तुम्हें स्थिर होने में सहायता करती हैं, उन्हें भी मैडिटेशन कहा जाता है और जो कुछ अन्दर से प्राप्ति होती है उसे परमात्मा कहा जाता है। भारत में बच्चे अपने माता-पिता को देखकर मैडिटेशन सीखते हैं, उनके उदाहरण का अनुसरण करते हैं, उस पर चलते हैं। भारत की नारी सारा दिन अपने काम में मैडिटेशन करती है। प्रत्येक गाँव के बाहर भारत में कुआँ है, महिलाएँ उस कुएँ से पानी लाती हैं। जब वे वापिस पानी भरकर लौटती हैं तो वे अन्य काम भी साथ साथ ही करती आती हैं लेकिन पानी का घड़ा उनके सिर से गिरता नहीं है। कारण? कारण यह है कि वे सदैव उस पानी के घड़े के प्रति चेतन रहती हैं। हम सब भी जब सांसारिक कार्यों को करते हैं तो वह सब कुछ करते हुए भी अपने अन्दर के सत्य के साथ जुड़े रहें, बस वही मैडिटेशन है।

वास्तव में मैडिटेशन सामूहिक चिकित्सा के साथ-साथ व्यक्तिगत चिकित्सा के लिए भी एक अत्यन्त आवश्यक विज्ञान है। मैडिटेशन मनुष्य का सृजनात्मकता के साथ-साथ शान्त मन भी प्रदान करती है। मैडिटेशन विज्ञान बहुत गहरा है और बहुत गहरा जाता है। जब शिथिल होने के गहरे अनुभव तक आप पहुँचते हो तो फिर तुम जान जाते हो शिथिल होने के सारे तरीके धीरे-धीरे आत्म संयम तक लेकर जाते हैं। यहाँ पर यह बतलाना भी आवश्यक है कि बहुत ज्यादा शिथिलता, संयम के अभाव में हानिप्रद हो सकती है। यदि तुम बहुत देर तक अपनी मांसपेशियों को शिथिल कर देते हो तो फिर तुम्हारी मांपेशियां स्वाभाविक रूप से सिकुड़ना बन्द कर सकते हैं, सर्वाधिक आवश्यक बात यह है कि जो शिथिलता किसी की सलाह के माध्यम से की जाती है वह मैडिटेशन नहीं है। हाँ यह बात अलग है कि मैडिटेशन के लिए शिथिलता बहुत आवश्यक है लेकिन किसी की सलाह के माध्यम से नहीं, किसी के निर्देशन के अनुसार नहीं। मैडिटेशन के द्वारा मांसपशियाँ एकसुर हो जाती हैं, फलस्वरूप सारा नाड़ी तन्त्र तथा सारा शरीर व मन यानि कि सारा व्यक्तित्व ही संतुलित व शान्त हो जाता है। मैडिटेशन के लिए पूरी-पूरी तैयारी अत्यावश्यक है। वह शिथिलता जो तुम्हारी चेतनता को नियन्त्रित करती है, तुम्हारे तनाव को समाप्त करती है, तुम्हें शिथिल करती है वही ठीक शिथिलता का तरीका है। मैडिटेशन तुम्हारे अन्दर की यात्रा है, जहाँ पर तुम अपने अन्दर की तहों के अन्दर के पड़ावों को ढूंढ़ते हो। 0अन्त में चेतनता के बिन्दु पर पहुँचते हो जहाँ से चेतनता वास्तव में पृथक-पृथक मात्रा में शरीर व मन में जाती है यदि मैडिटेशन को विधिपूर्वक व नियमबद्ध होकर किया जाए तो फिर कोई कठिनाई नहीं है।

रतवाड़ा साहिब में महापुरुषों के प्रवचनों का कार्यक्रम

प्रत्येक रविवार रतवाड़ा साहिब

(12.00 बजे से 4.00 बजे तक)

पूर्णमाशी - 28 जून, दिन वीरवार।

(रात्रि 07.00 बजे से 10.00 बजे तक)

संक्रान्ति - फाल्गुन, 15 जून, दिन शक्रवार।

(प्रात: 5.30 बजे से 8.00 बजे तक)

अमृत संचार - महीने के प्रथम रविवार को गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहिब में सुबह 11.00 बजे होता है, परन्तु इस बार प्रथम रविवार की जगह 17 जून को होगा।

INTERNET MEDIA AND LIVE TELECAST

Website : www.ratwarasahib.in

Website : www.ratwarasahib.org

Instagram : RATWARA SAHIB (https://instagram.com/ratwara.sahib/)

You Tube : https://www.youtube.com/user/babalakhbirsingh

Facebook : https://www.facebook.com/ratwarasahib1

Twitter : https://mobile.twitter.com/ratwarasahib13

Live Audio Link 1 - https://www.awdio.com/Ratwara Sahib

Live Audio Link 2 - https://mixlr.com/ratwara-sahib

E-mail :- sratwarasahib.in@gmail.com

Contact - 9569455861, 9417912900, 9814612900

आवश्यक निवेदन

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूवल या दसवंद पंजाब एंड सिंध बैंक की किसी भी शाखा द्वारा निम्नलिखित बैंक खातों में भेजी जा सकती है।

भारत (INDIA)

आत्म मार्ग मैगज़ीन की मैंबरशिप/रिन्यूवल भेजने के लिए -

VGRMCT / Atam Marg Magajine
S/B A/C No. 12861000000003 **RTGS/IFSC Code - PSIB0021286**
Branch Code - C1286

दसवंद भेजने के लिए -

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
SB A/C No. 12861100000005 **RTGS/IFSC Code - PSIB0021286**
Branch Code - C1286

विदेश (ABROAD)

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust
Punjab National Bank **SB A/C No. 0779000100179603**
RTGS/IFSC Code - PUNB0077900 **Branch Code - 077900**

यदि चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा राशि भेजनी हो तो ऊपरलिखित खातों अनुसार Gurdwara Ishar Parkash Ratwara Sahib, P.O. Mullanpur Garibdas. Distt S.A.S. Nagar (Mohali) - 140901 पर भेजने की कृपा करें। यदि Online राशि भेजनी हो तो राशि की जानकारी देते समय अपना नाम व पूरा पता मोबाइल नं. +91-98889-10777 पर SMS भेजें जी।

सर्व साधारण को सूचित किया जाता है कि यदि आपने अभी तक आत्म मार्ग मासिक पत्रिका की सदस्यता ग्रहण नहीं की है तो आप कृप्या अधोलिखित प्रारूप पत्र को भरकर सदस्यता ग्रहण करने की कृपा करें। यदि आप पहले से ही सदस्यता ग्रहण कर चुके हैं, तो पुनर्नवीनीकरण हेतु इस प्रारूप पत्र के साथ आवश्यक चैक/ड्राफ्ट "VGRMCT/ATAM MARG MAGAJINE" के नाम पर प्रेषित करने की कृपा करें।

Subscription form ✓ ☐ नई सदस्यता ☐ पुनर्नवीनीकरण ☐ आजीवन सदस्यता

within India

Subscription Period	By Ordinary Post/Cheque	By Registered Post/Cheque
1 Year	Rs. 300/320	
3 Year	Rs. 750/770	
5 Year	Rs. 1200/1220	
Life	Rs 3000/3020	

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
Europ	50 Euro	500 Euro
Australia	80 Aus $	800 Aus $

जनवरी ☐ फरवरी ☐ मार्च ☐ अप्रैल ☐ मई ☐ जून ☐ जुलाई ☐ अगस्त ☐ सितम्बर ☐ अक्तूबर ☐ नवम्बर ☐ दिसम्बर ☐

नाम/Name पता/Address..

....

....Pin Code........................... Phone .... E-mail :..........................

सन्त वरियाम सिंह चैरिटेबल अस्पताल, रतवाड़ा साहिब

समय - सुबह 9.30 बजे से 2.00 बजे तक (रविवार से शुक्रवार)

डाक्टरों का समय - सुबह 10.00 बजे से 12.00 बजे तक

दूरभाष नं. 98786-95178, 92176-93845

डा. का नाम	विशेषज्ञ	दिन
1. डा. जसबीर कौर	जनरल मैडिसन	सोमवार
2. डा. गुरिंदर कौर कंग	एम. डी. (गाइनी)	सोमवार
3. डा. कुलदीप सिंह कंग	एम. डी. (आँखों के विशेषज्ञ)	सोमवार
4. डा. हरबंस सिंह	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	मंगलवार
5. डा. तेजिंदर सिंह	जनरल मैडिसन	मंगलवार
6. जे.पी.आई. अस्पताल मोहाली के डाक्टर	आँखों के विशेषज्ञ	मंगलवार
7. श्री माइकल जी	एक्स-रे विशेषज्ञ	मंगलवार तथा वीरवार
8. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	बुद्धवार
9. डा. जे. एस. गुजराल	जनरल मैडिसन/शिशु रोग विशेषज्ञ	बुद्धवार
10. डा. आर. एस. संधू	अस्थि रोग तथा जनरल मैडिसन	वीरवार
11. डा. संतोष अनेजा	जनरल मैडिसन	वीरवार
12. डा. जसप्रीत सिंह	एम.डी.एस. (दाँतों के विशेषज्ञ)	वीरवार
13. डा. एस. के. बांसल	जनरल मैडिसन	शुक्रवार
14. डा. बरिन्दर सिंह	जनरल मैडिसन तथा त्वचा रोग विशेषज्ञ, एअरो स्पेस मैडिसन	शुक्रवार
15. डा. भगत सिंह मक्कड़	जनरल मैडिसन/ई.एन.टी./ब्लॅड शूगर आदि	रविवार
16. डा. जिंदल	जनरल मैडिसन	रविवार
17. डा. गुरप्रीत कौर गिल	होम्योपैथिक	बुद्धवार

-: लैबोरेटरी टैस्ट तथा अन्य सुविधाएँ :-

1. खून टैस्ट, 2. सारे खून सैल काउंट टैस्ट 3. ब्लड शुगर टैस्ट, 4, किडनी टैस्ट, 5. लीवर टैस्ट, 6. लिपिड परोफाइल टैस्ट, 7. थायराइड टैस्ट, 8. हिमोग्लोबिन टैस्ट, 9. पेशाब टैस्ट, 10. स्टूल टैस्ट, 11. ई.सी.जी., 12. एक्स-रे (क्ष-किरण)

सारे लैबोरेटरी टैस्ट आधे शुल्क पर किये जाते हैं तथा मरीज को दवाई मुफ्त दी जाती है।

जरूरी सूचना

प्रत्येक रविवार को अस्पताल खुला रहेगा। समय 11.00 से 1.00 बजे तक। प्रत्येक शनिवार को अस्पताल बन्द रहेगा।

मई महीने से पूर्णमाशी के समागम दिन की जगह रात को हुआ करेंगे। समय शाम 7.00 बजे से रात 10.00 बजे तक।

विश्व गुरमत रूहानी मिशन चैरिटेबल ट्रस्ट

के मुख्य संस्थापक प्यारे महापुरुष सन्त बाबा वरियाम सिंह जी द्वारा लिखित व प्रकाशित पुस्तकें

यह पुस्तकें श्री गुरू ग्रन्थ साहब जी के गूढ़ सिद्धान्तों को सरल रूप में स्पष्ट करके जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत करती हैं। इनकी विषय वस्तु के रूप में नाम, सेवा व स्मरण की विधियों को प्रस्तुत करते हुए जन साधारण की भाषा का अत्यन्त सरल, मार्मिक व हृदयस्पर्शी प्रयोग किया गया है। यह दुर्लभ पुस्तकें, प्रत्येक जिज्ञासु व साधक के लिए एक अमूल्य निधि के रूप में हैं। अध्यात्मिक सुख व शान्ति प्राप्त करने हेतु आप इन्हें प्राप्त करके स्वयं पढ़ें तथा अन्य श्रद्धालुजनों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। यह सभी पुस्तकें गुरुद्वारा ईशर प्रकाश रतवाड़ा साहब में आपकी सेवार्थ उपलब्ध हैं -

हिन्दी	
1. सुरति शबद मार्ग	70/-
2. किव कुड़ै तुटै पालि	35/-
3. बात अगंम की - सात भागों में	400/-
4. किव सचिआरा होइए - भाग पहला	35/-
5. किव सचिआरा होइए - भाग दूसरा	65/-
6. किव सचिआरा होइए - भाग तीसरा	100/-
7. होवै आनन्द घणा	30/-
8. बाबाणियाँ कहानियाँ	50/-
9. सुरतिआं उपजै चाउ	40/-
10. सर्व प्रिय गुरू गोबिंद सिंह जी	10/-
11. भक्त प्रहलाद	10/-
12. अमृत फुहार	10/-
13. अगम अगोचर का मार्ग	70/-
14. जपुजी साहिब सटीक	15/-
15. अमर ज्योतियाँ	15/-
16. अमर गाथा	100/-
17. वैशाखी	10/-
18. साजन चले प्यारिआ	10/-
19. अविनाशी ज्योति - भाग 1	90/-
20. रूहानी गुलदस्ता	70/-
21. चउथै पहरि सबाह कै	60/-

English Version	Price
1. Baisakhi	Rs. 5/-
2. How Rend The Veil of Untruth	Rs. 70/-
C. Discourses on the Beyond -1	Rs 50/-
4. Discourses on the Beyond -2	Rs. 50/-
5. Discourses on the Beyond -3	Rs. 50/-
6. Discourses on the Beyond -4	Rs. 60/-
7. Discourses on the Beyond -5	Rs. 60/-
8. The way to the imperceptible	Rs. 80/-
9. The Lights Immortal	Rs. 20/-
10. Transcendental Bliss	Rs. 70/-
11. How to Know Thy Real Self-(Vol-1)	Rs. 80/-
12. How to Know Thy Real Self-(Vol-2)	Rs. 80/-
13. How to Know Thy Real Self-(Vol-3)	Rs. 110/-
14. The Dawn of Khalsa Ideals	Rs. 10/-
15. A Glimpse of His Holiness - Baba ji	Rs. 5/-
16. Divine Word Contemplation Path	Rs. 150/-
17. The Story of Immortality	Rs. 260/-
18. Why not Contemplate the Lord	Rs. 200/-

ऊपरलिखित पुस्तकें आप जी मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट द्वारा रतवाड़ा साहिब से मंगवा सकते हैं या ट्रस्ट के अकाउंट में राशि जमां करवा कर मोबाइल नं. 9417214391, 9592009106, 9417214379 पर सूचित कर सकते हैं। **Bank Name : Pb & Sind Bank, A/c Name. VGRMCT/Atam Marg Magajine, S/B A/C No. 12861000000003, RTGS/IFSC Code - PSIB0021286, Branch Code - C1286**

How to become true to the Creator

Sant Waryam Singh Ji
English Translation: Prof. Beant Singh

(Continued from P. 75, issue May, 2018)

But those who have realized the Truth, and have seen the One Lord both within and without, attain to the mental state of self-realization. Their *'jeev'* – sense (sense of being a Sentient existence) is demolished. They reach the state of *'fanah-filah'* (effacement of the self and absorption in the Supreme Self or Soul). In simple words, this *'jeev'* (individual soul or self), becoming dead to 'egoism' or 'I-ness', comes to life in the *'Supreme Self or Soul'* and becomes God Himself. Being one among the diversity of creation, he becomes absorbed in the One Lord. He becomes the individual self of the entire diversity of creation, about which the *Gurbani* edict is –

'SaithKabir: The Lord in whose quest we wandered, was found in our own place.
He who thou didst consider separate from thyself,
As from the world thou didst turn away,
Was thy ownself.' P. 1369

ਕਬੀਰ ਜਾ ਕਉ ਖੋਜਤੇ ਪਾਇਓ ਸੋਈ ਠਉਰੁ ॥
ਸੋਈ ਫਿਰਿ ਕੈ ਤੂ ਭਇਆ ਜਾ ਕਉ ਕਹਤਾ ਅਉਰੁ ॥

Becoming absorbed in the great Lord, he himself becomes great. The true doctrine experienced in the soul or spiritual realm is that God Himself is sporting in countless forms and beings. Nothing besides Him exists here. Ego, *'jeev'* (sentient being) virtuous and sinner, happy and sad, rich and poor are appearing to be so owing to duality, but the true state is that God Himself, assuming various forms, is enacting His play in the visible world, as is the Tenth Guru's edict –

'O Lord! somewhere Thou art the bard of beautiful hymns, and somewhere a veena-player.
Somewhere art Thou image of Brahma, Vishnu and Shiva, and somewhere a dancer.
Somewhere art Thou the utterance of the Vedas, and somewhere the Kokashashtra story.
Somewhere art Thou king and queen, and somewhere woman of many a kind.
Somewhere art Thou the flute-player, somewhere the cow-herd.
Somewhere art Thou butter-taker, and somewhere handsome prince.
Thou art the glory of purity, the very life-breath of the holy;
Thou art the benevolent Supreme Giver, immaculate and formless.' Akal Ustat (18)

ਕਹੂੰ ਗੀਤ ਕੇ ਗਵਯਾ
ਕਹੂੰ ਬੇਨ ਕੇ ਬਜਯਾ
ਕਹੂੰ ਨ੍ਰਿਤ ਕੇ ਨਚਈਆ
ਕਹੂੰ ਨਰ ਕੋ ਅਕਾਰ ਹੋ ॥
ਕਹੂੰ ਬੇਦ ਬਾਨੀ
ਕਹੂੰ ਕੋਕ ਕੀ ਕਹਾਨੀ
ਕਹੂੰ ਰਾਜਾ ਕਹੂੰ ਰਾਨੀ
ਕਹੂੰ ਨਾਰ ਕੇ ਪ੍ਰਕਾਰ ਹੋ ॥
ਕਹੂੰ ਬੇਨ ਕੇ ਬਜਯਾ
ਕਹੂੰ ਧੇਨ ਕੇ ਚਰਯਾ
ਕਹੂੰ ਲਾਖਨ ਲਵਯਾ
ਕਹੂੰ ਸੁੰਦਰ ਕੁਮਾਰ ਹੋ ॥
ਸੁਧਤਾ ਕੀ ਸਾਨ ਹੋ
ਕਿ ਸੰਤਨ ਕੇ ਪ੍ਰਾਨ ਹੋ
ਕਿ ਦਾਤਾ ਮਹਾਦਾਨ ਹੋ

ਕਿ ਨ੍ਰਿਦੋਖੀ ਨਿਰੰਕਾਰ ਹੋ॥

In Gurbani also comes a similar edict–

'The One Lord is in many manifestations and wherever I look, there is He pervading and filling all.
Fascinating the marvelous picture of Mammon (Maya) and only a few understand it.
Everything is the Lord, everything is the Lord.
There is nothing but God, the world-sustainer.
As one thread holds hundreds and thousands of beads, so is that Lord in warp and woof.
The water waves, foam and bubbles are not distinct from water.
This world is the play of the Transcendent Lord, and on reflection man finds it not different from Him.
False doubts and dream objects man deems as true.
The Guru instructed me to entertain the desire to do good deeds, and my awakened mind accepted it.
Says Namdev, see thou the creation of God and reflect on it in thy mind.
In every heart and within all is but one Lord, the Enemy of pride.' P. 485

ਏਕ ਅਨੇਕ ਬਿਆਪਕ ਪੂਰਕ
ਜਤ ਦੇਖਉ ਤਤ ਸੋਈ॥
ਮਾਇਆ ਚਿਤ੍ਰ ਬਚਿਤ੍ਰ ਬਿਮੋਹਿਤ
ਬਿਰਲਾ ਬੂਝੈ ਕੋਈ॥
ਸਭੁ ਗੋਬਿੰਦੁ ਹੈ ਸਭੁ ਗੋਬਿੰਦੁ ਹੈ॥
ਗੋਬਿੰਦ ਬਿਨੁ ਨਹੀ ਕੋਈ॥
ਸੂਤੁ ਏਕੁ ਮਣਿ ਸਤ ਸਹੰਸ ਜੈਸੇ
ਓਤਿ ਪੋਤਿ ਪ੍ਰਭੁ ਸੋਈ॥
ਜਲ ਤਰੰਗ ਅਰੁ ਫੇਨ ਬੁਦਬੁਦਾ
ਜਲ ਤੇ ਭਿੰਨ ਨ ਹੋਈ॥
ਇਹੁ ਪਰਪੰਚ ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਕੀ ਲੀਲਾ
ਬਿਚਰਤ ਆਨ ਨ ਹੋਈ॥
ਮਿਥਿਆ ਭਰਮੁ ਅਰੁ ਸੁਪਨ ਮਨੋਰਥ
ਸਤਿ ਪਦਾਰਥੁ ਜਾਨਿਆ॥
ਸੁਕ੍ਰਿਤ ਮਨਸਾ ਗੁਰ ਉਪਦੇਸੀ
ਜਾਗਤ ਹੀ ਮਨੁ ਮਾਨਿਆ॥
ਕਹਤ ਨਾਮਦੇਉ ਹਰਿ ਕੀ ਰਚਨਾ
ਦੇਖਹੁ ਰਿਦੈ ਬੀਚਾਰੀ॥
ਘਟ ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਸਰਬ ਨਿਰੰਤਰਿ
ਕੇਵਲ ਏਕ ਮੁਰਾਰੀ॥

There is another Gurbani edict like this too –

'The Lord Creator is contained in water, land and sky.
In manifold ways, the Lord has diffused Himself, O Nanak.' P. 296

ਜਲ ਥਲ ਮਹੀਅਲਿ ਪੂਰਿਆ ਸੁਆਮੀ ਸਿਰਜਨਹਾਰੁ॥
ਅਨਿਕ ਭਾਂਤਿ ਹੋਇ ਪਸਰਿਆ ਨਾਨਕ ਏਕੰਕਾਰੁ॥

Showing unity in this diversity of creation, Tenth Guru Sahib says –

'Now He blooms like a flower,
Now like a black-bee sucks its essence with abandon.
Now rages He like the fury of storms.
O, how am I to describe such an Indescribable One?
Now like a delicious melody, now a deer enticed by it.
Now like a hunter intent on the kill, now a dazzling beauty.' Bachittar Natak

ਕਹੂੰ ਫੂਲ ਹ੍ਵੈ ਕੈ ਭਲੇ ਰਾਜ ਫੂਲੇ॥
ਕਹੂੰ ਭਵਰ ਹ੍ਵੈ ਕੈ ਭਲੀ ਭਾਂਤਿ ਭੂਲੇ॥
ਕਹੂੰ ਪਵਨ ਹ੍ਵੈ ਕੈ ਬਹੇ ਬੇਗਿ ਐਸੇ॥
ਕਹੇ ਮੋ ਨ ਆਵੈ ਕਥੋਂ ਤਾਹਿ ਕੈਸੇ॥
ਕਹੂੰ ਨਾਦ ਹ੍ਵੈ ਕੈ ਭਲੀ ਭਾਂਤਿ ਬਾਜੇ॥
ਕਹੂੰ ਪਾਰਧੀ ਹ੍ਵੈ ਧਰੇ ਬਾਨ ਰਾਜੇ॥
ਕਹੂੰ ਮ੍ਰਿਗ ਹ੍ਵੈ ਕੈ ਭਲੀ ਭਾਂਤਿ ਮੋਹੇ॥
ਕਹੂੰ ਕਾਮੁਕੀ ਜਿਉ ਧਰੇ ਰੂਪ ਸੋਹੇ॥

So, these utterances have emerged from the realm of Truth that, here in this world, there is none other than God in existence. The Guru's edict is –

'Now I see the Lord, hear of the Lord and narrate but the One Lord.
The Supreme Soul is the creator of the world.
Without the world, without the Lord I know no other.' P. 846

ਬ੍ਰਹਮੁ ਦੀਸੈ ਬ੍ਰਹਮੁ ਸੁਣੀਐ ਏਕੁ ਏਕੁ ਵਖਾਣੀਐ॥
ਆਤਮ ਪਸਾਰਾ ਕਰਣਹਾਰਾ ਪ੍ਰਭ ਬਿਨਾ ਨਹੀ ਜਾਣੀਐ॥

So, Guru Sahib says, "My dear brothers! forgetting this Truth and acting contrary to this Supreme state of Truth, if you adopt the '*jeev*' (sentient being) sense, you will become

bereft of the Supreme Bliss. Experiencing this totality is called the attainment of the Name-Divine. The Name Divine is all-pervasive. There is no difference between the Name and God –

'I abide in the Name and the Name has come to abide within my mind.' *P. 55*

ਨਾਵੈ ਅੰਦਰਿ ਹਉ ਵਸਾਂ ਨਾਉ ਵਸੈ ਮਨਿ ਆਇ ॥

But this truth cannot be known without the Guru's grace. When, through his grace, the Guru grants the Name – boon and severs the Maya snare, then the Name completely effaces the darkness of egoism.

'Without the Guru there is complete darkness and sans God's Name understanding is not gained.
By the Guru's instruction Divine Light shines and the mortal remains absorbed in the True Lord's love.
Death enters not there and man's light blends with the Supreme Light.' *P. 55*

ਬਾਝੁ ਗੁਰੂ ਗੁਬਾਰੁ ਹੈ
ਬਿਨੁ ਸਬਦੈ ਬੂਝ ਨ ਪਾਇ ॥
ਗੁਰਮਤੀ ਪਰਗਾਸੁ ਹੋਇ
ਸਚਿ ਰਹੈ ਲਿਵ ਲਾਇ ॥
ਤਿਥੈ ਕਾਲੁ ਨ ਸੰਚਰੈ
ਜੋਤੀ ਜੋਤਿ ਸਮਾਇ ॥

So, on one hand is this loftiest spiritual state, while on the other hand, Guru Sahib describes the highest natural material state, where man possesses all such things as: palaces of pearls plastered with musk and sandalwood, grounds and parks studded with rubies and diamonds shining brightly, charming everyone, women of surpassing beauty with faces resplendent like emerald in light, enjoying their love, having occult powers capable of performing miracles, respected by one and all, occupying a high position, becoming a monarch whose writ runs all over the world, partaking of all delights after his heart. But if he is forgetful of God's existence, his joys are mean and worthless as compared with the Supreme Bliss of union with God. He is like a worm of ordure. That is why, Guru Sahib says –

'A man may enjoy a beauteous couch, numerous pleasures and all sorts of enjoyments.
And may possess mansions of gold, studded with pearls and rubies and plastered with fragrant sandalwood dust;
He may further enjoy his heart-desired pleasures and have no anxiety whatsoever, but if he remembers not the Lord, he is like a worm in ordure.
Without God's Name, there is no peace.
How may the mind then find poise? *P. 707*

ਸੁੰਦਰ ਸੇਜ ਅਨੇਕ ਸੁਖ ਰਸ ਭੋਗਣ ਪੂਰੇ ॥
ਗ੍ਰਿਹ ਸੋਇਨ ਚੰਦਨ ਸੁਗੰਧ
ਲਾਇ ਮੋਤੀ ਹੀਰੇ ॥
ਮਨ ਇਛੇ ਸੁਖ ਮਾਣਦਾ
ਕਿਛੁ ਨਾਹਿ ਵਿਸੂਰੇ ॥
ਸੋ ਪ੍ਰਭੁ ਚਿਤਿ ਨ ਆਵਈ
ਵਿਸਟਾ ਕੇ ਕੀਰੇ ॥
ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਨਾਮ ਨ ਸਾਂਤਿ ਹੋਇ
ਕਿਤੁ ਬਿਧਿ ਮਨੁ ਧੀਰੇ ॥

This is because unless God comes to be lodged in the heart and knowledge of the Ultimate Reality gained, the heart-lotus is burnt and all joys are ended –

'May I burn in flames, should I without the Lord live.
My Preceptor have I consulted .
No shelter without the Lord may be found.'
P. 14

ਹਰਿ ਬਿਨੁ ਜੀਉ ਜਲਿ ਬਲਿ ਜਾਉ ॥
ਮੈ ਆਪਣਾ ਗੁਰੁ ਪੂਛਿ ਦੇਖਿਆ
ਅਵਰੁ ਨਾਹੀ ਥਾਉ ॥

Once again recite the same refrain with love and devotion.

Refrain: O my mind! may you forget not the Name Divine,
At the sight of palaces of pearls ...

ਧਾਰਨਾ – ਕਿਤੇ ਭੁੱਲ ਨਾ ਜਾਈਂ ਓ ਮਨਾਂ ਨਾਮ ਨੂੰ,
ਮੋਤੀਆਂ ਦੇ ਮੰਦਰ ਵੇਖ ਕੇ

On forgetting the Name, first he becomes a *'jeev'* (sentient being), then he considers himself a five-six foot long body made up of the five elements. So, this *'jeev'* (sentient being) sense is a veil. First veil, I had mentioned was that of *Maya* (Mammon) of ignorance. To remove this veil, the mind has to be made a merchant of the Name. This body is like a shop. Regard it as a shop-cum-flat. In this body-like shop, the most valuable commodity is the Name, of which no one can estimate the worth, and which is kept hidden behind stony gates, where everyone does not have access, as is the Guru's edict –

'The Name Divine, bestower of Nine Treasures, immortalizing,
In our own self is lodged:
Therein abides the Ultimate silence of ecstasy,
And the unstruck mystical music, of wonders indescribable.' P. 293

ਨਉ ਨਿਧਿ ਅੰਮ੍ਰਿਤੁ ਪ੍ਰਭ ਕਾ ਨਾਮੁ ॥
ਦੇਹੀ ਮਹਿ ਇਸ ਕਾ ਬਿਸ੍ਰਾਮੁ ॥
ਸੁੰਨ ਸਮਾਧਿ ਅਨਹਤ ਤਹ ਨਾਦ ॥
ਕਹਨੁ ਨ ਜਾਈ ਅਚਰਜ ਬਿਸਮਾਦ ॥

There are nine treasures in the world, which in serial order are:

i) *Padam* – precious metals like gold and silver

ii) *Mahan-Padam* – gems, jewels etc.

iii) *Sankh* – delicious foods

iv) *Makar* – training in the use of arms

v) *Kacchap* – clothes, corn etc.

vi) *Kund* – trading in gold, silver etc.

vii) *Neel* – trading in gems and jewels

viii) *Mukand* – mastery in five arts

ix) *Warch* – riches of all kinds

'By contemplation of the Lord are obtained, riddhi, siddhi *(mundane as well as miraculous or spiritual powers) and the Nine Treasures.'* P. 262

ਪ੍ਰਭ ਕੈ ਸਿਮਰਨਿ ਰਿਧਿ ਸਿਧਿ ਨਉ ਨਿਧਿ ॥

These *'nidhis'* (treasures) have their separate attributes, for example – *'Padam-nidhi'* is being virtuous in nature which leads to extension of one's progeny and acquisition of gold, silver and other precious metals. *'Mukund-nidhi'* is marked by *'rajogun'* (passion, emotion). It leads to the acquisition of the art of music. Poets and musicians are ever present with man. *'Makar-nidhi'* is marked by *'tamo-gun'* (dark and evil urges). By this *'nidhi'* is obtained training in arms. Such a one rules over others. Similarly, other *'nidhis'* (treasures) also stand for one thing or the other. All are under the Name-Nectar, which is invaluable and abides in this body. Under the Name are lying stores of worldly and spiritual powers. The mind is the merchant and stores of wonderful commodities are lying in the body-bazar, as is the Guru's edict –

'Within the fortress are balconies and bazaars.
The Lord Himself takes care of the goods.
The adamantine doors of the Tenth Gate are knowingly closed and shut.
Through the Guru's Word are they opened wide.' P. 1033

ਅੰਦਰਿ ਕੋਟ ਛਜੇ ਹਟਨਾਲੇ ॥
ਆਪੇ ਲੇਵੈ ਵਸਤੁ ਸਮਾਲੇ ॥
ਬਜਰ ਕਪਾਟ ਜੜੇ ਜੜਿ ਜਾਣੈ
ਗੁਰ ਸਬਦੀ ਖੋਲਾਇਦਾ ॥

Only that merchant can trade in this commodity who has offered his mind and heart to the Guru and the Guru, out of his grace, has opened the adamantine doors with the *'Guru Shabad'* (Guru's holy Word). My dear holy congregation! you come to the holy gathering. This is the bazaar for you to trade in the holy Word or the Name Divine. You

have come in the manifest form to trade in these commodities in this bazaar. *'Satsang'* (Holy congregation or gathering) is called the bazaar of spirituality. The buyer in this bazaar is the mind. If coming to the holy gathering, man's mind buys the Name, then it is doing the right and proper thing. If he is not buying, he is doing window-shopping. Guru Sahib says –

'This body is the jeweller's shop and the unrivalled Name is the stock therein, O brother.
The merchant who contemplates the Guru's Word, O brother, he securely secures this merchandise.' *P. 636*

ਇਹੁ ਤਨੁ ਹਾਟੁ ਸਰਾਫ ਕੋ
ਭਾਈ ਵਖਰੁ ਨਾਮੁ ਅਪਾਰੁ ॥
ਇਹੁ ਵਖਰੁ ਵਾਪਾਰੀ ਸੋ ਦ੍ਰਿੜੈ ਭਾਈ
ਗੁਰ ਸਬਦਿ ਕਰੇ ਵੀਚਾਰੁ ॥

Remaining ignorant and oblivious of this invaluable Name, the *'jeev'* (sentient being) is becoming engrossed in worldly pleasures. Oblivious of his true form in this world of mundane and occult powers, state powers, sensual delights, acquisition of properties and for millions of years confined within the boundaries of egoism, he has become a *'jeev-atma'* (individual soul) from the *'Param-atma'* (Supreme Soul) and is floundering in the world ocean. This *Maya* (Mammon) is very enamouring and attractive, beautiful from without but ruinous from within and captivates us with its mighty illusion. He who does not receive the grace of an exalted holy man who has realized the Ultimate Reality, cannot face it. With the acquisition of a little power and prominence, he falls again and again.

Today, I often wonder where the saintly or holy ideal has vanished. Even after rigorous search, a true saint is rare to be found who has been reverentially described in *Sri Guru Granth Sahib*. But now, only outward garb has become all-important. Men wearing long cloaks of various colours – blue, black, saffron and white appear quite attractive to the eyes, but these persons do not deserve to be called holy men. Instead of total love and devotion for God, they have in their heart powerful longing for acquiring wealth. These persons do not stay at one place, but are wandering abroad to satisfy their hunger for pounds and dollars. Who will look after those who have neither any money to offer, nor any spiritual understanding and are living in perfect ignorance? They have neither any desire to hold holy congregations, nor do they know how to revere those who sing God's laudations and do narration and explication.

In this context, Guru Sahib says:

'Says Nanak: What shall I give to him, who brings a message of that Master of mine?
Cutting off my head, I will give it to him to sit on and without the head, I will perform His service.' *P. 558*

ਤੈ ਸਾਹਿਬ ਕੀ ਬਾਤ ਜਿ ਆਖੈ
ਕਹੁ ਨਾਨਕ ਕਿਆ ਦੀਜੈ ॥
ਸੀਸੁ ਵਢੇ ਕਰਿ ਬੈਸਣੁ ਦੀਜੈ
ਵਿਣੁ ਸਿਰ ਸੇਵ ਕਰੀਜੈ ॥

'He, who narrates to me the tale of my Beloved God,
He alone is my brother and friend.' *P. 802*

ਮੇਰੇ ਹਰਿ ਪ੍ਰੀਤਮ ਕੀ ਕੋਈ ਬਾਤ ਸੁਨਾਵੈ
ਸੋ ਭਾਈ ਸੋ ਮੇਰਾ ਬੀਰ ॥

So, ignorant devotees do not know how to revere such lovers of God. If money is important in everything, who will take care of the ignorant people? God has sent the holy men to dispel the darkness of ignorance enveloping the common people by lighting the lamp of Divine Light in their eyes, as is the Guru's edict –

'Saith Kabir: Best it is to serve these two –

God's devotee and God.' P. 1373

ਕਬੀਰ ਸੇਵਾ ਕਉ ਦੁਇ ਭਲੇ
ਏਕੁ ਸੰਤੁ ਇਕੁ ਰਾਮੁ॥

What great glory Guru Sahib confers on the devotee who contemplates the Name himself and inspires the world to do likewise –

'Nanak, servant of God, seeks dust of the feet of such a **Gursikh** *(Sikh or disciple of the Guru),*
As contemplating the Name, to it inspires others.' P. 306

ਜਨੁ ਨਾਨਕੁ ਧੂੜਿ ਮੰਗੈ ਤਿਸੁ ਗੁਰਸਿਖ ਕੀ
ਜੋ ਆਪਿ ਜਪੈ ਅਵਰਹ ਨਾਮੁ ਜਪਾਵੈ॥

About such saints as unite a devotee with the Lord, the *Gurbani* edict is –

'To him shall I dedicate myself, my substance,
And all egoism discard.
Day after day shall I follow in passion of yearning
After one who of the Lord to me discourses.' P. 204

ਮਨੁ ਅਰਪਉ ਧਨੁ ਰਾਖਉ ਆਗੈ
ਮਨ ਕੀ ਮਤਿ ਮੋਹਿ ਸਗਲ ਤਿਆਗੀ॥
ਜੋ ਪ੍ਰਭ ਕੀ ਹਰਿ ਕਥਾ ਸੁਨਾਵੈ
ਅਨਦਿਨੁ ਫਿਰਉ
ਤਿਸੁ ਪਿਛੈ ਵਿਰਾਗੀ॥

In fact, saints and holy men have come into being for the specific purpose of enabling wandering and straying human being to meet with God, and not for making money because the seeker beseeches them earnestly: 'I am yearning to meet with God. Due to this powerful yearning, day and night I am thinking that someone may afford me a glimpse of God from close quarters. I wish to serve God's slaves and attendants in many ways and pray to them that they may enable me to meet with God. I would sacrifice all my joys and comforts for fulfilling this longing because as compared with the Lord's glimpse and union, all other material comforts of the world are a mere counterweight.' Such is the Guru's edict –

'To have a sight of the Lord, ever is my mind contemplating Him.
Full of yearning, day and night Him I contemplate –
What devotee shall take me close to Him?
Of such a devotee shall I serve the servant of servants, and numerous pleasing appeals make.
In the balance have I weighed all worldly joys –
Other than sight of the Lord, all are wanting.' P. 204

ਹਰਿ ਪੇਖਨ ਕਉ ਸਿਮਰਤ ਮਨੁ ਮੇਰਾ॥
ਆਸ ਪਿਆਸੀ ਚਿਤਵਉ ਦਿਨੁ ਰੈਨੀ
ਹੈ ਕੋਈ ਸੰਤੁ ਮਿਲਾਵੈ ਨੇਰਾ॥
ਸੇਵਾ ਕਰਉ ਦਾਸ ਦਾਸਨ ਕੀ
ਅਨਿਕ ਭਾਂਤਿ ਤਿਸੁ ਕਰਉ ਨਿਹੋਰਾ॥
ਤੁਲਾ ਧਾਰਿ ਤੋਲੇ ਸੁਖ ਸਗਲੇ
ਬਿਨੁ ਹਰਿ ਦਰਸ ਸਭੋ ਹੀ ਥੋਰਾ॥

Where are such saints or holy men found because as is commonly seen, *Maya* (material riches) has captivated all the so-called holy men and the jingle of dollars does not let them come out of this unseemly music? They practise meditations and austerities and undertake *'chillas'* (period usually 40 days of solitary meditation and prayer) to acquire *'riddhis and siddhis'* (mundane as well as miraculous or spiritual powers) and with these mammonic powers, they charm and captivate the people. But Guru Sahib says, "My dear! if you practise Divine Name meditation and engage in God's devotional worship, *'ridhhis and siddhis'* will follow you with folded hands. So, don't undertake *'chillas'* to acquire them. Practise Name meditation, otherwise you will get ensnared in them.

Refrain: O my mind! forget not the Name
By acquiring siddhis (miraculous powers)….

ਧਾਰਨਾ – ਕਿਤੇ ਭੁੱਲ ਨਾ ਜਾਈਂ

ਓ ਮਨਾਂ ਨਾਮ ਨੂੰ
ਮਾਲਕ ਬਣ ਕੇ ਸਿੱਧੀਆਂ ਦਾ

'Were I to be a siddha, master of accomplishment, calling forth miracles,
At will concealing and manifesting my form, centre of the world's faith:
Lest in these wonders engrossed I forget Thee,
Thy Name from my mind effaced.' *P. 14*

ਸਿਧੁ ਹੋਵਾ ਸਿਧਿ ਲਾਈ
ਰਿਧਿ ਆਖਾ ਆਉ ॥
ਗੁਪਤੁ ਪਰਗਟੁ ਹੋਇ
ਬੈਸਾ ਲੋਕੁ ਰਾਖੈ ਭਾਉ ॥
ਮਤੁ ਦੇਖਿ ਭੂਲਾ ਵੀਸਰੈ
ਤੇਰਾ ਚਿਤਿ ਨ ਆਵੈ ਨਾਉ ॥

Holy congregation! '*siddhis*' (miraculous powers) are very captivating. When we read about the Guru's son Sri Ram Rai Ji, we find that at Aurangzeb's bidding, he showed seventy two *siddhis* in his court, while only eighteen mostly find mention, such as –

'Whosoever in heart lodges the Lord,
Following after him are the Nine Treasures, and the Eighteen Miraculous Powers.'
P. 649

ਨਵ ਨਿਧੀ ਅਠਾਰਹ ਸਿਧੀ
ਪਿਛੈ ਲਗੀਆ ਫਿਰਹਿ
ਜੋ ਹਰਿ ਹਿਰਦੈ ਸਦਾ ਵਸਾਇ ॥

Giving details of the miraculous powers, sages have opined that eighteen of them are the salient ones: 1. *Anima* (assuming another person's form); 2. *Mehma* (to enlarge the body); 3. *Laghima* (to make the body small); 4. *Garima* (to become heavy); 5. *Prapti* (to acquire heart-desired pleasures); 6. *Prakmai* (to know others' thoughts and feelings); 7. *Ishita* (to persuade others to one's thinking); 8. *Vashita* (to gain control over others); 9. *Anooram*(to be immune to hunger and thirst); 10. *Door sarvan* (to hear from afar); 11. *Door darshan* (to see from afar); 12. *Manuvegh* (to go faster than the speed of thought); 13. *Kaamroop* (to assume heart-desired form); 14. *Parkaiparvesh* (to enter another person's body); 15. *Swaichham mrityu* (to die according to will); 16. Sur *Krirah* (to sport and enjoy in the company of gods); 17. *Sankalap Sidhi* (fulfillment of desires); 18. *Apratihitgat* (ability to go anywhere unhindered).

There are light bodily or physical powers also. We are describing here these physical powers. Not opposing their principles means that the earth with its hardness does not create hurdles in the physical activities of a yogi (ascetic). He can gain his sustenance even out of stone. Water cannot make him wet; fire cannot burn him, and fierce storms cannot blow him away. His body remains hidden in the clear and bare sky, and he remains invisible even to the '*sidhis*' (miraculous powers). Guru Sahib says: 'Should I become a master of miraculous powers, appear and disappear at will, all the world may be impressed with my powers, but if the mind goes away from the Name Divine, these miraculous powers have no worth and significance.' That is why, Guru Sahib says repeatedly: 'charmed with these miraculous powers don't sever your mind from God's Name, because the Name Divine is invaluable'. Emphasizing this point, Guru Sahib says:

Refrain: The merchandise thou hast come to obtain
Is obtained in the saints' abode.

ਧਾਰਨਾ – ਜਿਹੜੀ ਵਖਰ
ਲੈਣ ਤੂੰ ਆਇਆ
ਮਿਲੇ ਘਰ ਸਾਧੂਆਂ ਦੇ

'The Name Divine, commodity thou hast come into the world to purchase,
In the abode of God's devotees is found.'
P. 283

ਜਿਸੁ ਵਖਰ ਕਉ ਲੈਨਿ ਤੂ ਆਇਆ ॥

ਰਾਮ ਨਾਮੁ ਸੰਤਨ ਘਰਿ ਪਾਇਆ।।

'This body is the jeweller's shop and the unrivalled Name is the stock therein, O brother.' P. 636

ਇਹੁ ਤਨੁ ਹਾਟੁ ਸਰਾਫ ਕੋ ਭਾਈ
ਵਖਰੁ ਨਾਮੁ ਅਪਾਰੁ॥

This trade can be done only by that man who contemplates the Guru's Word. Such a trader is blessed both here and at the Divine Portal –

'Thus shall all on you shower praises or blessings,
And at the Portal Divine shall your face glow.' P. 283

ਧੰਨਿ ਧੰਨਿ ਕਹੈ ਸਭੁ ਕੋਇ॥
ਮੁਖ ਊਜਲ ਹਰਿ ਦਰਗਹ ਸੋਇ।।

Guru Sahib says –

'Saith Nanak: Blessed is the trader, who on meeting the Guru, engages in this trade.' P. 636

ਧਨੁ ਵਾਪਾਰੀ ਨਾਨਕਾ
ਭਾਈ ਮੇਲਿ ਕਰੇ ਵਾਪਾਰੁ॥

But only rare persons engage in this trade –

'Rare are those that in such commerce engage.
To such is Nanak ever a sacrifice.' P. 283

ਇਹੁ ਵਾਪਾਰੁ ਵਿਰਲਾ ਵਾਪਾਰੈ॥
ਨਾਨਕ ਤਾ ਕੈ ਸਦ ਬਲਿਹਾਰੈ॥

Guru Sahib is a sacrifice to the trader, who, coming into the world, has engaged in the trade of Name-wealth, and by turning his back on *'ridhis-sidhis'* (miraculous powers), has accomplished the purpose of assuming human incarnation. Guru Sahib says: "This trader in the name-wealth sees manifested within his bodily frame countless things."

'In the self are contained endless objects:
Those are viewed only with the wisdom by the Preceptor imparted.' P. 110

ਇਸੁ ਕਾਇਆ ਅੰਦਰਿ ਵਸਤੁ ਅਸੰਖਾ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਾਚੁ ਮਿਲੈ ਤਾ ਵੇਖਾ।।

In the self lie stores of mercy and piles of patience. This body has tenderness, contentment, non-violence, purity and nobility which afford joy and peace. It has sweetness of tongue and many other attributes which cannot be counted. But 'Truth' can be found only on meeting the capable holy Preceptor. This is called the 'Valley of Spiritual quest'. That most invaluable thing is the Name Divine which is lodged in this body. Hinting at it, Guru Sahib says –

'If man searches his body and soul, then, does he find God's Name. He restrains his wandering mind and keeps it under control. Gurbani he sings night and day and is naturally engaged in Lord's devotional service.' P. 110

ਤਨੁ ਮਨੁ ਖੋਜੇ ਤਾ ਨਾਉ ਪਾਏ॥
ਧਾਵਤੁ ਰਾਖੈ ਠਾਕਿ ਰਹਾਏ॥
ਗੁਰ ਕੀ ਬਾਣੀ ਅਨਦਿਨੁ ਗਾਵੈ
ਸਹਜੇ ਭਗਤਿ ਕਰਾਵਣਿਆ॥

Rising above the nine coffers and reaching the Tenth Gate is the Name Divine attained, where abides the unbroken melody of the holy Word. This melody is so resounding and captivating that even the Timeless One, God remains absorbed in it. The abode of this inaccessible beauteous Form is in the mind. Only a rare one realizes this with the Guru's grace. Nectar-pools of spontaneous narration of Divine knowledge are lying there full to the brim. Only he who obtains it with the Guru's grace, quaffs it. Wonderful is the heart-like abode where spiritual-bliss-like unstruck melody is ever enchanting. There are many congregational sites for men of equipoise and spiritual calm where God's saints abide. It is a place of infinite joys without any trace of grief and suffering. Only he attains to that place who receives the grace of the capable

Guru (Holy Preceptor). Blessed is the trader who attains to this place. Guru Sahib has represented this tale in the following manner–

'The Lord of unknowable form has abode in the heart of man.
By Guru's grace, some rare one understands it.
There are nectar pools of the Lord's sermons.
He, who has access to them, quaffs the nectar.
The celestial music of Guru's hymns or the unstruck melody resounds in the unique place (of the Tenth Gate).
With this melody even the cherisher of the universe is fascinated.
There are diverse and numberless abodes of peace.
There the saint-companions of the Supreme Lord abide.
There is infinite joy and no sorrow and duality.
That abode the Master has conferred on Nanak.' P. 186

ਅਗਮ ਰੂਪ ਕਾ ਮਨ ਮਹਿ ਥਾਨਾ॥
ਗੁਰ ਪ੍ਰਸਾਦਿ ਕਿਨੈ ਵਿਰਲੈ ਜਾਨਾ।।
ਸਹਜ ਕਥਾ ਕੇ ਅੰਮ੍ਰਿਤ ਕੁੰਟਾ॥
ਜਿਸਹਿ ਪਰਾਪਤਿ ਤਿਸੁ ਲੈ ਭੁੰਚਾ॥
ਅਨਹਤ ਬਾਣੀ ਥਾਨੁ ਨਿਰਾਲਾ।।
ਤਾ ਕੀ ਧੁਨਿ ਮੋਹੇ ਗੋਪਾਲਾ॥
ਤਹ ਸਹਜ ਅਖਾਰੇ ਅਨੇਕ ਅਨੰਤਾ॥
ਪਾਰਬ੍ਰਹਮ ਕੇ ਸੰਗੀ ਸੰਤਾ॥
ਹਰਖ ਅਨੰਤ ਸੋਗ ਨਹੀ ਬੀਆ॥
ਸੋ ਘਰੁ ਗੁਰਿ ਨਾਨਕ ਕਉ ਦੀਆ॥

This abode is attained after crossing the nine doors as per the Guru's edict –

'In the self are contained endless objects:
Those are viewed only with the wisdom by the Preceptor imparted.
In the self are the nine doors and the Tenth of Liberation, wherein heard is the mystic music.' P. 110

ਇਸੁ ਕਾਇਆ ਅੰਦਰਿ ਵਸਤੁ ਅਸੰਖਾ॥
ਗੁਰਮੁਖਿ ਸਾਚੁ ਮਿਲੈ ਤਾ ਵੇਖਾ॥
ਨਉ ਦਰਵਾਜੇ ਦਸਵੈ ਮੁਕਤਾ
ਅਨਹਦ ਸਬਦੁ ਵਜਾਵਣਿਆ॥

But the ignorant worshipper of material riches has no knowledge of this place. He wanders about in gathering the *Maya*-poison. Bound by ego, he undergoes transmigration, and is not rid of the cycle of birth and death–

'The worldly-minded know not the truth about good and evil;
And absorbed in Duality, in delusion are lost.
The purblind unenlightened know not the way,
And in transmigration are again and again involved.' P. 110

ਪਾਪ ਪੁੰਨ ਕੀ ਸਾਰ ਨ ਜਾਣੀ॥
ਦੂਜੈ ਲਾਗੀ ਭਰਮਿ ਭੁਲਾਣੀ॥
ਅਗਿਆਨੀ ਅੰਧਾ ਮਗੁ ਨ ਜਾਣੈ
ਫਿਰਿ ਫਿਰਿ ਆਵਣ ਜਾਵਣਿਆ॥

The spiritual seeker or devotee who serves the Guru like a boughten slave and surrenders his all to the Preceptor, who obeys him and serves him selflessly without expecting any reward, attains to the Lord –

'The disciple that in the Master's home, to receive guidance takes abode,
Should with his heart the Master's guidance accept.
He should no wise show his ego: On the Name Divine ever with his heart should he meditate.
The disciple that himself to the Master should have sold,
Fulfilled shall all his objectives be.
One that serves and no recompense seeks,
With the Lord finds union.' P. 286

ਗੁਰ ਕੈ ਗ੍ਰਿਹਿ ਸੇਵਕੁ ਜੋ ਰਹੈ॥
ਗੁਰ ਕੀ ਆਗਿਆ ਮਨ ਮਹਿ ਸਹੈ॥
ਆਪਸ ਕਉ ਕਰਿ ਕਛੁ ਨ ਜਨਾਵੈ॥
ਹਰਿ ਹਰਿ ਨਾਮੁ ਰਿਦੈ ਸਦ ਧਿਆਵੈ॥
ਮਨੁ ਬੇਚੈ ਸਤਿਗੁਰ ਕੈ ਪਾਸਿ।।
ਤਿਸੁ ਸੇਵਕ ਕੇ ਕਾਰਜ ਰਾਸਿ॥
ਸੇਵਾ ਕਰਤ ਹੋਇ ਨਿਹਕਾਮੀ॥
ਤਿਸ ਕਉ ਹੋਤ ਪਰਾਪਤਿ ਸੁਆਮੀ॥

(... to be continued)

The Discourse of Sant Ji

Sant Waryam Singh Ji

(Continued from P. 85, issue May, 2018)

> *Then alone is one known as true, when he abides in the pilgrimage station of his heart. He takes instruction from the Guru and sits and abides according to his will.*
>
> ਸਚੁ ਤਾਂ ਪਰੁ ਜਾਣੀਐ ਜਾ ਆਤਮ ਤੀਰਥਿ ਕਰੇ ਨਿਵਾਸੁ ॥
> ਸਤਿਗੁਰੂ ਨੋ ਪੁਛਿ ਕੈ ਬਹਿ ਰਹੈ ਕਰੇ ਨਿਵਾਸੁ ॥
> ਅੰਗ - 468

This Agya Chakkar is also called the Universal Heart or the Heart of all. It is the same spot, which is mentioned in connection with Heart of the Holy Name. One with the gross intellect is called the (fleshly) heart. This is the first step of the opening of the Divine Eye.

It is called the Organ of clairvoyance, or the instrument of the Divine sight. It is the spot of *Third Til* (ਨੁਕਤਾ ਏ ਸਵੀਤਾ) (Mole) It is also called the Point of saveeda.

Above Agya Chakkar is the place of mid-forehead. This spot has been variously called as Guru Chakkar, Manas (mental) Chakkar, Forehead Chakkar but all these are included in the seven Chakkars.

Above it is the thousand-petal lotus, called the tenth gate. From the region of the mid-forehead, the physical body finishes. Above it begins the universal self. The crown of the head and the blank Chakkar are its symbolic gross form (cerebral Plexus). Above the palate in the forehead is the Divine Hole. That is the centre of all the powers. With its sheen of multi-coloured lights is the lotus with myriads of petals. On these petals there are all the alphabets from ਆ (a) to ਖ (kha) with all the sounds and letters. At this place, the yogis through the power of the yoga become omniscient, having knowledge of all lores and learnings, and having got that gyan (True Knowledge) they are able to know all the languages, dialects, also all the past, present and future events. At that place is the residence of God Almighty, with all His Powers. At this stage, the mind being stable, one's all tendencies are effectively controlled and one develops the capability of Asampragyat Samadhi ਅਸੰਪ੍ਰਗਿਆਤ ਸਮਾਧੀ (highest form of contemplation of God). Many scholars are of the opinion that it is living place of the Divine, Who is thumb dimential. This also is the seat of the sky, on the scale of a thumb. Here one obtains the realization of the self, and it is the place of the Divine Mind, where there is the reflection of the Supreme Divine. When the living force and mind become stable, at this very place, one gets the ability for *Nirvikalp Samadhi* (the Supreme Meditation); and all tendencies are totally controlled. At this place, the light of the soul falls on the intellect. The intelllect or consciousness is causal body and because of its relationship with Supreme Self, it is known as jiva-atman. The causal body is incorporated in subtle body and the subtle body is part of the physical body. Thus the soul is spread all over the body and by bursting its working self, one can point to all the spots. In short, in the very fine spiritual condition, the place of the soul is said to be

the region of the heart because the heart is the chief limb of the body. The entire activities of the body are directed from this heart region. From here all nerves (or ducts) are branching to all parts of the body. When the physical heart stops beating, all activities come to an end. Therefore in the godly state, the seat of the soul can be said to be the heart. In the dream state, the place of the soul is said to be the throat. In the waking state, whatever objects one sees, whatever sounds one hears and whatever enjoyments one tastes have their epi-centre in a *nadi* named *Hita*, which is as fine as the thousandth part of the hair. Hence the knowledge of experienced things is in the throat, in the dream state. During the waking state, the soul with the help of the sense organs is spread all outside. As Guru Maharaj has pointed out in the Gurbani -

The bride who goes amiss by seeing the body of nine apertures, obtains not the peerless thing of God's Name.

ਨਉ ਘਰ ਦੇਖਿ ਜੁ ਕਾਮਨਿ ਭੂਲੀ ਬਸਤੁ ਅਨੂਪ ਨ ਪਾਈ॥ ਅੰਗ - 339

It is the soul, which sees through the eyes. During the meditation, the place of the soul is said to be Agya Chakkar. This is also the place of Divine Vision. Here it obtains the divine eye. During the *Asampragyat Samadhi* (meditation) the soul stays in Divine Hole (ਬ੍ਰਹਮ ਰੁੰਦਰ); because from this centre, the control of all tendencies is possible.

Kundalini Shakti - All the powers that exist in the universe have been collected by Waheguru in this part of the body. But the main triangle of Sukhumna Nadi, rising from the back bone, is spread upwards. In the normal state it remains closed (sleeping). Hence its power remains secret and unknown. Therefore its power combined with the power of life's airs and joined with *Ida* and *Pingla,* by the way of the left and right and bursting the various Chakkars is spread upward. It keeps on flowing all over the body. In this three-cornered region, this Nadi, extremely fine like the electric power, with its miraculous, divine power lies wound round. We can give the example of such a she-serpent, which is sleeping, coiled three and half times and pressing its tail in its mouth, . This is called the Power of the Kundalini. This remains sleeping, unless awakened by special exercise. None of its functions can be visible to the eye of flesh. For this reason, the physiologists have not been able to discover anything about it. But in olden times, learned men of countries like Greece and Rome, such as Plato and Pythagoras, who were seers of self, have made references to all these in their writings. They state that under the navel, there is such a wondrous power, which by lighting up one's intellect makes manifest such divine powers within the man.

If by any exercise, this Kundalini Nadi unwinds its coils and gets inside the Sukhmana Nadi, then it is said to have come awake. Just as in the house, if you press the electricity buttons all the bulbs, fans, fridges etc. start functioning, similarly if you press the switch of the Kundalini Nadi the electric current carried by the Sukhumna wire travels all over the body and lights all the Chakkars and all the Nadis (nerves or ducts). Wherever the Kundalini power reaches in the body all the lotuses become straight and the mind is stabilized. As Guru Maharaj has ordained -

Turning away from the world, the heart

lotus is filled with Nectar and this mind, then goes not anywhere.
Merging in the Primal Lord, man forgets not the mental meditation.
By the Guru's grace, all the organs are blessed with five virtues and man abides in his own home.
Nanak is the slave of him, who by searching the Lord's Name obtains this Home of his.

ਉਲਟਿ ਕਮਲੁ ਅੰਮ੍ਰਿਤਿ ਭਰਿਆ ਇਹੁ ਮਨੁ ਕਤਹੁ ਨ ਜਾਇ ॥
ਅਜਪਾ ਜਾਪੁ ਨ ਵੀਸਰੈ ਆਦਿ ਜੁਗਾਦਿ ਸਮਾਇ ॥
ਸਭਿ ਸਖੀਆ ਪੰਚੇ ਮਿਲੇ ਗੁਰਮੁਖਿ ਨਿਜ ਘਰਿ ਵਾਸੁ ॥
ਸਬਦੁ ਖੋਜਿ ਇਹੁ ਘਰੁ ਲਹੈ ਨਾਨਕੁ ਤਾ ਕਾ ਦਾਸੁ ॥
ਅੰਗ - 1291

When this current reaches the Agya Chakkar, it also touches *sampragyat* and Tenth Gate (crown of the head). Then all human tendencies come under complete control and one develops real capability for *Asampragyat* Samadhi (transcendental meditation). In this condition the seeker attains the knowledge of the whole world very quickly. When *Kundalini Power* enters the mouth of *Sukhumna Nadi* one begins to have supernatural experiences. Making a show of them is forbidden. There is a reference to that -

Indulge thou not in ego and abide within thyself. The Knower Himself knows everything.

ਊਚਾ ਨਹੀ ਕਹਣਾ ਮਨ ਮਹਿ ਰਹਣਾ ਆਪੇ ਜਾਣੈ ਜਾਣੋ ॥ ਅੰਗ - 580

With so much talk, the time of the meeting was almost over. Sant Maharaj said that above that is the blank place of universe, and there the universes end. The seeker who has crossed all the illusions, reaches the region of Truth (heaven) by the power of repeating God's Name and experiences ecstasy by observing the phenomenon of the Infinite. Above that is experienced the miracle of 'being full of bliss, in the shower of Grace of God' as says Nanak (*ਨਾਨਕ ਨਦਰੀ ਨਦਰਿ ਨਿਹਾਲ*). The Almighty God attracts to Himself man's soul which was separated from Him and merges the individual self in the Universal self. As is ordained -

As water comes and gets blended with water, so does his lights blend with the Supreme Light.
His coming and going end and he attains rest.
Nanak is ever devoted unto the Lord.

ਜਿਉ ਜਲ ਮਹਿ ਜਲੁ ਆਇ ਖਟਾਨਾ ॥ ਤਿਉ ਜੋਤੀ ਸੰਗਿ ਜੋਤਿ ਸਮਾਨਾ ॥
ਮਿਟਿ ਗਏ ਗਵਨ ਪਾਏ ਬਿਸ੍ਰਾਮ ॥ ਨਾਨਕ ਪ੍ਰਭ ਕੈ ਸਦ ਕੁਰਬਾਨ ॥ ਅੰਗ - 278

For this reason Guru Maharaj has clarified-

What are they like, who forget not the Name?
They are like the Lord. Know that there is absolutely no difference between the two.

ਜਿਨਾ ਨ ਵਿਸਰੈ ਨਾਮੁ ਸੇ ਕਿਨੇਹਿਆ ॥
ਭੇਦੁ ਨ ਜਾਣਹੁ ਮੂਲਿ ਸਾਂਈ ਜੇਹਿਆ ॥
ਅੰਗ - 397

That between the saints and the Infinite Lord, there is no difference.

ਸੰਤ ਅਨੰਤਹਿ ਅੰਤਰੁ ਨਾਹੀ ॥ ਅੰਗ - 486

The same is ordained in Sukhmani Sahib -

The great god, Shiva, searches for the man, who knows God.
Nanak the Braham-gyani, is Himself the Exalted Lord.

ਬ੍ਰਹਮ ਗਿਆਨੀ ਕਉ ਖੋਜਹਿ ਮਹੇਸੁਰ ॥
ਨਾਨਕ ਬ੍ਰਹਮ ਗਿਆਨੀ ਆਪਿ ਪਰਮੇਸੁਰ ॥
ਅੰਗ - 273

A saint who reaches this state is called *Brahmgyani* (one who knows God), and gets the title of the Khalsa. But the foolish persons, badly lost in the darkness of ignorance, do not accept this fundamental philosophy of the Guru, get the title of Manmukh (the ignorant) mind oriented. Like

the crows, they crow together and spoil the path of Truth. Sceptical to the fundamentals taught in Guru Granth Sahib and having turned their face away from the Guru, they fall a prey to spiritual quacks and do not achieve any good state. They cannot be rid of the circle of births and deaths. Spiritual ideas are the only true ideas. By accepting them, in the light of Gurbani (Holy Writ), is the only path to one's real welfare.

Dear loving devotees, you may be connected with different faiths and communities and though you may have heard the sermons of many great persons, but so long as you do not pull yourself out of the slush of *Dvait* (Duality or that there is Second Reality other than God) and do not take to the Path of Self-realization through the Divine Word, that long you can't enter the higher strata of Universal Soul. Till then you will keep wallowing in your present condition -

Because of profane affection, the man suffers agony. Death's courier is spying all.
Nanak, the Guruwards are saved by contemplating over the True Name.
In words we are good, but in deeds bad.
Within mind we are impure and black, but white from without.
We emulate with those who stand and serve at Lord's door.
They are imbued with the love of their Bridegroom and enjoy the pleasure of His dalliance.
They remain powerless even when possessing power and are ever humble.
Nanak, our lives become profitable if we associate with them (such brides).

ਗਲੀ ਅਸੀ ਚੰਗੀਆ ਆਚਾਰੀ ਬੁਰੀਆਹ॥
ਮਨਹੁ ਕੁਸੁਧਾ ਕਾਲੀਆ ਬਾਹਰਿ ਚਿਟਵੀਆਹ॥
ਰੀਸਾ ਕਰਹਿ ਤਿਨਾੜੀਆ ਜੋ ਸੇਵਹਿ ਦਰੁ ਖੜੀਆਹ॥
ਨਾਲਿ ਖਸਮੈ ਰਤੀਆ ਮਾਣਹਿ ਸੁਖਿ ਰਲੀਆਹ॥
ਹੋਦੈ ਤਾਣਿ ਨਿਤਾਣੀਆ ਰਹਹਿ ਨਿਮਾਨਣੀਆਹ॥
ਨਾਨਕ ਜਨਮੁ ਸਕਾਰਥਾ ਜੇ ਤਿਨ ਕੈ ਸੰਗਿ ਮਿਲਾਹ॥ ਅੰਗ - 85

Thus the whole congregation showed obeisance to the great saint and dispersed to their respective activities, with a keen desire to hear the discourse of the great saint in the evening also.

Discourse
(Part III)

Sant Maharaj, Sri 108 Sant Ishar Singh Ji Maharaj, Rara Sahib Wale used to address Diwans (congregation) in the morning at Chandigarh for an hour daily. With his discourses, he used to do favours to the audiences. Today, he was requested thus, Great Sir, yesterday, you imparted to us the knowledge about the various centers of energy in the human body in a very detailed manner. By that, our countless doubts were removed. Many of the seekers among us used to do long *Pranayam* exercises, without consulting anyone. They had the desire to enter these various centers of energy. But all our doubts and misconceptions have now been removed, because these exercises are extremely tough and beyond our capacity. Kindly do us the favour of explaining to us some very simple ways to cross this ocean of the world.

Answer - Sant Maharaj commanded thus: there are some mental means by practising which one can easily cross the ocean of the world, though discharging his worldly responsibilities, carrying on with his job, or with his business or farming or any other occupation, by keeping the company of the realized great souls. He said that the first gate to the spiritual path is called *Vivek* (ਵਿਵੇਕ) (right knowledge and discrimination). It is most necessary to cross through this door. The second gate is called *Vairag*

(ਵੈਰਾਗ) (non-attachment to the world). So long as one does not develop in one's heart complete non-attachment to the worldly matters, he cannot be rid of the grip of the *Maya* (illusions), the third gate is *Sam* (ਸਮ) (self-control) which has six kinds. The fourth one is the strong desire for knowledge. Crossing it, the main gate of Satsang (religious congregation) is gained. Passing through that, one contacts the next methods, which are listening to and meditating on the holy texts, practising their edicts and on to self-realization. By these means, one can easily cross this worldly ocean of woe. Now you listen, about each one of these methods with concentrated attention.

1. *Vivek* (ਵਿਵੇਕ) (right knowledge and right understanding). Our soul is immortal. The body is perishable. Anyone who is born in the world must die one day. Hence the body is subject to death. The soul does no activity; this is present in the whole world - in all beings. It is indestructible, even in the same state, beyond all influences, desireless and deathless. All bodily beings, who came to this world, had one day to quit it. His body was destroyed. Fully fixing this idea in one's heart with full faith and consideration is called Vivek (Right Knowledge). One's daily action should be to accept Truth and renounce untruth, with the mentality of the royal swan (the swan is said to separate milk from water). If you place milk to drink before the swan it churns the milk with its beak and stands back waiting for the result. The milk is split, the water is separated and becomes cheese separate. The swan moves forward and eats the cheese and leaves the water alone. Similarly in the world one thing is eternal and the other is temporary. The eternal is the soul, all perfect and one's self. That soul is always beyond birth and death, joy and sorrow, gain and loss, praise and censure.

It is unchanging, deathless, desireless self. Nature which has the characteristics of the two, name and shape is always subject to annihilation. No form of it is everlasting. It is a subordinate entity (not the chief item). It is not one's self, the soul has given it existence for a little while. When the time comes, all this paraphernalia is destroyed.

So the fact to be understood is that the soul is non-destructible. It never ceases to be. The world moves in the opposite direction to the soul, hence the world can never be lasting. It is prone to death. Developing unshakable faith in the concept is called Vivek (True Knowledge). Just as there are steps to climb a tall temple similarly Vivek is the first step for the climb to spiritual heights. Till that time when Vivek is born in the heart, it is impossible to climb to the next step (higher stage). Hence it behoves the learner to fully establish Vivek in his heart; and keeping in view the fact that all his worldly relationships such as the sons and daughters relatives and fraternal kins, countries and nations are the chains that bind him. He should totally ignore these insubstantial things and should ever keep himself joined to Waheguru Ji (God Almighty).

2. Bairag (ਬੈਰਾਗ) (non-attachment to the world). The second essential item is bairag. Till there is the birth of Bairag in his mind, he can by no means break the fetters of Maya (illusion). His mind set will always go on desiring small enjoyments, the highest of them being the enjoyments in the heaven. It will go on giving birth to more and more

cravings. So long as his mind keeps churning the various desires, it will never attain concentration. The attraction of the desire is so powerful, that despite our million efforts, it never leaves us alone.

On this subject, they narrate a parable. For some reason, (king) Bhartari Hari developed extreme form of disinterest in the world, to the greater and greatest degree. His heart turned away form all the pleasures of the world. He renounced his throne and kingdom, he even left his queens who were paragons of beauty. He put away his ornaments of diamonds and jewellery, retreated to the jungle and started practising penances. He even dispensed with all garments on his body. He completely stopped going to the settlements (towns or villages). He cupped his hands to drink water. He began to live on wild herbs and roots. He wandered in the forest. At all times, he remained in the state of non-attachment to the world. He kept nothing with himself. One day, while he was practising austerities, it was dawn and the dew drops on the blades of grass reflected the sheen of the full moon. It seemed as if every single blade of grass had become the resting place of pearls and diamonds. On all sides, there was such a pleasant scene of beauty. This scene enraptures the mind. Just then, Bhartari Hari sighted a bright shining object on a small plant. An idea crossed his mind that it was a priceless ruby, the like of which was impossible to find in the world. In this misconception he stretched his hand to pick up that invaluable ruby. He was wonderstruck to find that it was no ruby at all, but only a deceptive illusion of nature. It was the spit of someone who was chewing the betel leaf, which in the resplendent rays of the moon seemed to be an invaluable ruby. Understanding all this, Bhartari Hari's mind felt a great distaste for the worldly affairs. He was full of remorse at the thought that it was the end of all his sacrifices; he had renounced his crown and kingdom, he had forsaken the most beauteous lotus like queens. He had left behind luxurious couches. He had turned his back on the pleasures of the world. Still in his mind, deceptive mentality remained alive -

If you conquer the enemy in your mind you have conquered all your enemies. With conquering the enemy in the mind, you have vanquished all your enemies.

ਮਨ ਰਿਪੁ ਜੀਤੇ ਸਭੁ ਰਿਪੁ ਜੀਤੇ।।
ਮਨ ਰਿਪੁ ਜੀਤੇ ਸਭੁ ਰਿਪੁ ਜੀਤੇ।।
(ਬੈਰਾਗ ਸ਼ਤਕ)

If the enemy in the mind is alive, then all the enemies are living. If you conquer your mind, you have conquered all your enemies. On the other hand, when the mind becomes so firm that it looks upon all the pleasures of the world, even on the celestial joys of heaven as dust and filth, that condition is called Bairag (indifference to worldly affairs). About this, there is a quotation from Vichar Sagar as under -

When one rejects all the enjoyments of even heaven, then such state is called Bairag, so say the sages, who know the meanings of the Vedas.

ਬ੍ਰਹਮ ਲੋਕ ਲੌਂ ਭੋਗ ਜੇ ਚਹੈ ਸਬਨ ਕੋ ਤਿਆਗ।।
ਵੇਦ ਅਰਥ ਗਿਆਤਾ ਮੁਨੀ ਕਹਤ ਤਾਹਿ ਵੈਰਾਗ।।
ਵਿਚਾਰ ਸਾਗਰ, ਪੰਨਾ - 5

The fact to be understood is whether we should renounce home and keep wandering like Bharatri in the jungles. This is not the case, for the whole thing relates to the mind-

M-The mortal's business is with his mind. He who chastens his mind attains perfection. Kabir thus speaks to his self: None like the mind have we found to guide.

ਮਮਾ ਮਨ ਸਿਉ ਕਾਜੁ ਹੈ ਮਨ ਸਾਧੇ ਸਿਧਿ ਹੋਇ।।

ਮਨ ਹੀ ਮਨ ਸਿਉ ਕਹੈ ਕਬੀਰਾ ਮਨ ਸਾ ਮਿਲਿਆ ਨ ਕੋਇ॥ ਅੰਗ - 342

If one has conquered the mind, he can continue to discharge all his responsibilities, but developing the mentality of Bairag and discrimination, he could have even normal relationship with his family members. One's mind should not get engrossed in any matter, one should not allow any desire to enter one's mind. He should give top priority to the attainment of divine condition and should have a firm determination to follow its means.

Thus the above-mentioned methods are the first and second steps, towards reaching his goal.

3. Sam (ਸਮ) - It has six characteristics, Great souls have described them thus -

Shum (not allowing the mind to be inclined towards worldly things) the second is dum (keeping purity in the sense organs and withdrawing from any interest in their functioning).
The third is Shardha (complete faith or earnestness). The fourth is Samadhan (training the mind to be disinterested in worldly matters and have full faith in Gurbani). The next is upram (eliminating of several desires). The sixth one is Titeeksha (tolerance of heat or cold, hunger or thirst alike.

ਸ਼ਮ ਦਮ ਸ਼੍ਰਧਾ ਤੀਸਰੀ ਸਮਾਧਾਨ ਉਪਰਾਮ॥
ਛਠੀ ਤਿਤੀਕਸ਼ਾ ਜਾਨਿਏਂ ਭਿੱਨ ਭਿੱਨ ਯਹ ਨਾਮ॥
ਵਿਚਾਰ ਸਾਗਰ, ਪੰਨਾ - 5

Withdrawing the mind from the worldly affairs and not letting it to be inclined towards worldly pleasures is called shum. For instance, not committing violence, not telling a lie, not to steal, to be strictly confined to one's wife, practising higher virtues, to have fortitude, to be full of mercy, being soft-hearted, giving good advice to all, eating less food and every day taking a bath of the body, mind and intellect, these are the virtues. To bathe in water is body's bath. The bath of the mind consists in expelling from the mind - attachment, jealousy, rivalry and enmity, hypocrisy, deceit, fraud. This constitutes the bath of the mind. The bath of the intellect comprises giving a lodging in one's heart to true scriptures, sayings of the great souls, and the fundamentals propounded in Gurbani (Guru's gospel).

So always put a brake on the mind from pursuing worldly pleasures is called Sam.

Dum (ਦਮ) - Dum consists in maintaining purity of all the physical organs and controlling the sense organs from their functions as sound touch, sight taste and smell.

Sharda (ਸ਼ਰਧਾ) - It consists in having unshakable faith in the sayings of the self realized souls, and also in the gospel, expounded in Guru Granth Sahib, regarding it as the final Truth and keeping complete faith in it also in looking upon the Guru as God Himself.

Samadhan (ਸਮਾਧਾਨ) - Looking on this world with indifference and regarding it as the visible form of Waheguru Himself is Samadhan. As Guru Maharaj commands us to look upon the world as the manifestation of God -

This entire world, which ye behold is the Lord's manifestation.
God's image alone is seen in it.

ਏਹੁ ਵਿਸੁ ਸੰਸਾਰੁ ਤੁਮ ਦੇਖਦੇ ਏਹੁ ਹਰਿ ਕਾ ਰੂਪੁ ਹੈ
ਹਰਿ ਰੂਪੁ ਨਦਰੀ ਆਇਆ॥ ਅੰਗ - 922

Wherever I see, there I see Him present. He, My Master, is never far from any place.
O my soul, ever remember Him, who is contained in everything.

ਜਹ ਜਹ ਪੇਖਉ ਤਹ ਹਜੂਰਿ ਦੂਰਿ ਕਤਹੁ ਨ

ਜਾਈ॥
ਰਵਿ ਰਹਿਆ ਸਰਬਤ੍ਰ ਮੈ ਮਨ ਸਦਾ ਧਿਆਈ॥
ਅੰਗ - 677

He sees, hears, and is ever with me, but I, a fool, deem Him to be distant.

ਪੇਖਤ ਸੁਨਤ ਸਦਾ ਹੈ ਸੰਗੇ ਮੈ ਮੂਰਖ ਜਾਨਿਆ ਦੂਰੀ ਰੇ॥ *ਅੰਗ - 612*

Farid, do thou good for evil and harbour not wrath in thy mind.
Thy body shall be infected with no disease and thou shalt obtain everything.

ਫਰੀਦਾ ਬੁਰੇ ਦਾ ਭਲਾ ਕਰਿ ਗੁਸਾ ਮਨਿ ਨ ਹਢਾਇ॥
ਦੇਹੀ ਰੋਗੁ ਨ ਲਗਈ ਪਲੈ ਸਭੁ ਕਿਛੁ ਪਾਇ॥
ਅੰਗ - 1382

Bear not enmity to anyone.
In every heart the Lord is contained.

ਵਵਾ ਵੈਰੁ ਨ ਕਰੀਐ ਕਾਹੂ॥
ਘਟ ਘਟ ਅੰਤਰਿ ਬ੍ਰਹਮ ਸਮਾਹੂ॥ ਅੰਗ - 259

Kabir, I am the worst of all; except me, everyone else is good.
Whosoever realises thus, he alone is my friend.

ਕਬੀਰ ਸਭ ਤੇ ਹਮ ਬੁਰੇ ਹਮ ਤਜਿ ਭਲੋ ਸਭੁ ਕੋਇ॥
ਜਿਨਿ ਐਸਾ ਕਰਿ ਬੂਝਿਆ ਮੀਤੁ ਹਮਾਰਾ ਸੋਇ॥
ਅੰਗ - 1364

Not accepting these principles as the fullest Truth and not forsaking one's preconceived notions are the biggest road-blocks in the path of the faith. They do not let the seeker move forward at all. Uprooting all one's doubts in totality by going in the company of self realized great men is called Samadhan (removal of all doubts).

The exact opposite of this Samadhan is to nourish such doubts under the influence of bad company and by reading the literature of passion and jealousy and allowing them to take root in the heart. Also the exact opposite of Samadhan is to ignore the fundamentals taught by the Guru and to substitute in their place one's own opinions and to believe in them and to express them.

Thus Samadhan generally consists in following the Guru's teachings in toto and to remove all obstacles in the path of feelingful faith.

Upram (ਉਪਰਾਮ) - Having complete contempt for sexuality and looking on all women as mothers, daughters, sisters is called Upram.

As against this, compromising with the opposite of one's chosen determination is just like taking poison. It also consists of expelling from the mind obscene or vulgar thoughts, and keeping oneself untouched by five thieves namely, sex, anger, greed, illusion and pride and unlinking oneself from the five senses, namely sound, touch, sight, taste and smell; having no pride in one's power, property, beauty, caste and youth; also keeping oneself untouched by the four passions - hilarity, vanity, anger and covetousness. All this goes by the name of Uparam.

Titiksha (ਤਿਤਿਕਸ਼ਾ) - Titiksha (Endurance) consists of creating the habit of bearing heat and cold, hunger and thirst at the time of satsang. Also rendering such service to the members of the congregation, attending Guru's meeting as is suitable for the summer or winter according to the season. This is called endurance.

All the above-named methods are called strong desire for liberation (salvation).

These four means are the four stages, or the four destinations or four steps in the four groups in the journey of spiritualism. Just as you can't climb up to the temple without steps, similarly you can't succeed in rising to the next higher stages which are called hearing holy discourses. Contemplating them and practising them unless you adopt these methods.

(... to be continued)

WATER, SOFT DRINKS AND TOXIC FOODS

Dr. Bhagat Singh Makar
Mobile - 99885 15049

Whenever one is visiting a doctor and ask him how much water one should drink everyday. All doctors will tell you different figure. Please weigh yourself, divide by 10 and subtract two, this will tell you how much water one should drink each day. For example, if your weight is 60 kg divide by 10 and subtract 2. It makes four liters water for everyday for a person weighing 60kg.

SALIVA AND INDIGESTION – It is highly recommended one should wash his teeth before going to bed and first thing in the morning drink 1 to 3 glasses of water with slice of lemon in it. Where body organs in the night are resting but saliva will be accumulated in your mouth. Saliva contains various enzymes and minerals which help the digestion of the food. It is *well* known that diabetic patient's wound take longer time to heal than non-diabetic patients. If one applies early morning saliva in the wounds it will heal it in 10-15 days rather than one month. We all know very well if any animal cuts his or her part of its body (for example hands and legs) they start licking the wound because they know *that saliva will heal their wound. It has been noted by various Ayurvedic doctors* specially Bhagwat Ji that if you apply early morning saliva to your eyes, if you are Suffering with conjunctivitis, it will heal within 2-3 days and also if you apply saliva on Psoriases, eczema it helps to heal the skin very quickly. Few experiments on gangrene in diabetic patients help wonderfully in long duration. Diabetic person does not has to go through amputation.

DIGESTION - The food is not important but digestion is. It is advised one should not drink water after food but drink as much as half or one hour prior to food intake. It is well documented when you eat food, it is acted in stomach by various enzymes and pepsin hydrochloric acid. After one and half hour food passes intestine, if you drink water or eat fruits with food it becomes paste and passes in intestine directly avoiding contact with stomach juices and enzymes food get rotten and it produces flatulence leading to abdominal pain, acidity, peptic ulcer. It also increases bad cholesterol and causes lot of other ailments.

It is also advisable that one should riot go to the bed after *eating food* but wait 2-3 *hours after food intake. It fatten stomach (Pot belly and weight gain).*

Poisonous opposite character food (Alkalin, acid food and fruits) – together they poison the body Mr. Bhagvat Ji said there are 103 varieties of food which are opposite in nature.

a) One should never take milk with onion. It will cause enzema, psoriasis and itching of skin.

b) Kathal (jackfruit) should never be taken with milk it may cause acidity flatulence and other side effects.

c) Food containing citric acid like

mousamy, lemon, orange, grape fruit. Grapes should never be taken with milk. This combination of fruits changes the PH of the stomach causing lot of abnormal problems in abdomen as mentioned above.

d) There is only one fruit called Amla which is rich in vitamin C, calcium and citric acid. It can be taken with milk.

e) Mango with milk should not be taken until it is fully ripe and very sweet.

f) Urad pulse (Mah kid al) one should never eat this pulse with yogurt continue eating with yogurt (dhai) will cause high blood pressure and heart attaking in long term.

g) It is very strange that in marriages and in all parties, we are all served with dhai bhalla and yogurt. I should advise all ladies who prepare marriage menu and parties should use moong pulse in dhai bhalla. One should not poison the guest.

h) It is sincerely advised that you should not boil carton of milk but just warm it and drink it. It is already pasteurize milk by heating it destroys vitamin C and B12.

Some other precautions:

1. Do not take bath after eating food.

2. Do not drink water while standing it causes joints pain.

3. It is well known food cooked in earthware have best digestive value.

4. Try to avoid wheat preparation like biscuits, cake, pastries etc.

5. Do not use white salt, it has plastic and it is poisonous. Use sandha or blacksat.

SOFTDRINKS - It is very well known the soft drinks available in the market are very dangerous for health. I would like to point out soft drinks effect our metabolism, not one ways but various ways. In 2003 a paper published in medical current journal which clearly tells us how soft drinks effects human body. About 10-15 years ago Dr. Rose Walker a cardiologist in Australia published a paper and it mentioned that soft drinks consumption is very harmful for human body. Our stomach PH is seven and cold drink PH is 3.4. It affects our teeth bones and gums. Usually we drink very cold drink either from the shops or from the fridge. The drink bottle temperature is 0 or about 1-4. It changes stomach PH, destroy all juices and enzymes, creating acidity leading to poor absorption of the food, as a result food gets fermented and poisonous. It gets into our blood vessels causing many late life diseases like heart disease, incease the cholesterol, high BP and weight. Personally I do not blame public, because they are not aware of soft drinks side effects and they are bombarded by media with Bollywood actors, newspapers and radios.

One should know that all soft drinks have following Pesticides.

1) DTTA - causes blood cancer and infertility

2) Landaus - causes infertility, nervous system problem

3) Chloropriphone - causing pneumonia and chest infection

4) DTA - damage nervous system

I remember that WHO noted that there was lot of infertility in young generation it is due to pesticide drink causing low sperm count at early age of 30-40 instead of 50-55.

ਆਤਮ ਮਾਰਗ ਦੀ ਨਵੀਂ ਮੈਂਬਰਸ਼ਿੱਪ ਅਤੇ ਰਿਨੀਊਵਲ ਅਤੇ ਪੁੱਛਗਿਛ

ਸ਼੍ਰੀ ਮਾਨ ਸੰਤ ਬਾਬਾ ਵਰਿਆਮ ਸਿੰਘ ਜੀ ਮਹਾਰਾਜ ਰਤਵਾੜਾ ਸਾਹਿਬ ਵਾਲਿਆਂ ਦੁਆਰਾ ਲਿਖਤ ਪੁਸਤਕਾਂ, ਗਾਇਨ ਕੀਤੀਆਂ ਸ਼ਬਦ ਗੁਰਬਾਣੀ ਕੀਰਤਨ ਦੀਆਂ ਕੈਸਟਾਂ, CD.'S, VCD.'S, DVD.'S MP3 ਦੇ ਆਪ ਜੀ ਹੇਠ ਲਿਖੇ ਐਡਰੈਸਾਂ ਤੋਂ ਮੰਗਵਾ ਸਕਦੇ ਹੋ ਜੀ।

For all enquiries about 'Atam Marg' viz. renewal, new membership, non-receipt of the magazine etc. and also for procuring audios, videos & CDs; and books authored by Sant Waryam Singh Ji, please contact the following

England (U.K.)

For U.K. renewal of Atam Marg Magazine please forward cheque £ 40.00 payable to A.M.S.S.E.C.T. (U.K.) 9 Elizabeth Road, Walsall, West Midlands WS5 3 PF

Atam Marg Spiritual Scientific Educational Charitable Trust (U.K.)

9 Elizabeth Rd.,

Walsall West Midlands, WS5 - 3PF U. K.

Contact : Mrs. Gurbax Kaur,

Mr. Jagtar Kulair : Tel : 0044-1212002818

Fax : 0044-1212002879

Voicemail : 0044-8701654402

Raj Mobile : 0044-7968734058

Email : info@atammarguk.com

U.S.A.

Vishav Gurmat Roohani Mission Charitable Trust,

Contact : Baba Satnam Singh Ji Atwal,
2755, Guildhall Dr., San Jose,
Ca - 95132, U.S.A
Phone :- 001-408-263-1844,
vgrmctusa@yahoo.com

S. Baldev Singh Grewal
Fremont, U.S.A - 001-510-249-9456

Canada

Bhai Sarmukh Singh Pannu
Phone - 001-604-433-0408

Bhai Parmjit Singh Sandhu
Cell: 001-250-600-3072

Bhai Tarsem Singh Bains
Cell : 001-604-862-9525, Phone : 001-604-599-5000

IN INDIA

09417214391, 09417214379 09814612900, 9417214378

Email: **atammarg1@yahoo.co.in**

Australia

Bibi Jaspreet Kaur

Cell : 0061-406619858

Email :- jaspreetkaur20@hotmail.com

Foreign Membership

	Annual	Life
U.S.A.	60 US$	600 US$
U.K.	40 £	400 £
EUROPE	50 Euro	500 Euro
AUS.	80 AUD$	800 AUD$
CANADA	80 CAN$	800 CAN$